

UNIVERSAL  
LIBRARY

OU\_180610

UNIVERSAL  
LIBRARY



**POCKET SLIP**

8 NOV 1971

14 F 100  
~~14 F 100~~

F 4 C 101/22

# OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 83 Accession No. H 3338

Author M 42 ch 1

Title हिंदुओं, उच्छा  
चिह्न २०६१

This book should be returned on or before the date last marked below.

8 NOV 1971

~~1971~~

123





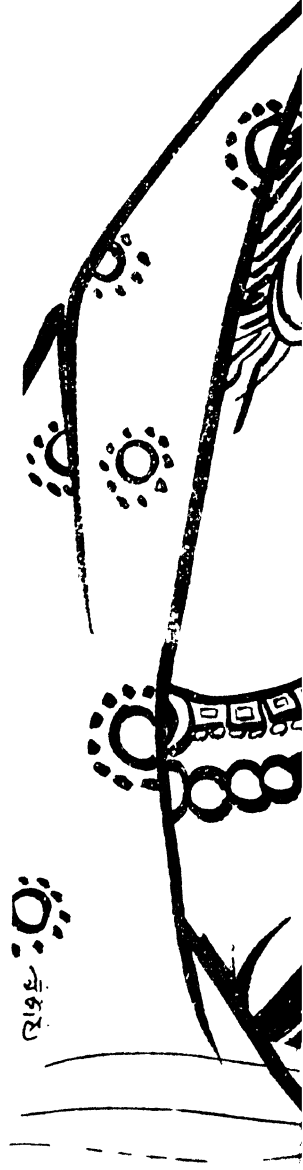


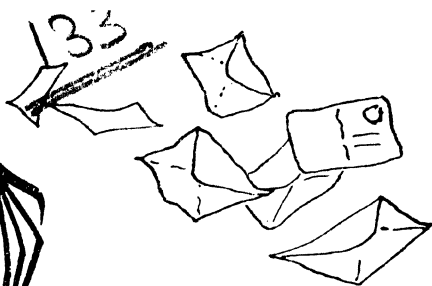
चिद्वीरसैन

# आत्माराम एण्ड सेंस

दिल्ली. जयपुर. जालन्धर. मेरठ

२५५-६





# चिह्नरसैन

180610

शैलेश भट्टियाणी

# CHITTHI-RASAIN

(a novel)

by

Shailesh Matiyani

Rs. 4.50

**COPYRIGHT © ATMA RAM & SONS, DELHI-6**

**प्रकाशक**

रामलाल पुरी, संचालक  
आत्माराम एण्ड संस  
काश्मीरी गेट, दिल्ली-६  
चौड़ा रास्ता, जयपुर  
माई हीरां गेट, जालन्धर  
बेगमपुल रोड, मेरठ

**आवरण : यो० कु० ल०**

**मूल्य : रुपए ४.५०**

**प्रथम संस्करण : १९६१**

**मुद्रक**

**रसिक प्रिंटर्स**

**करोल बाग, नई दिल्ली-५**

## चिड़ो के चार आँखर

अपनी पत्नी या प्रेमिका के लिए भी 'सस्ती सिरी सरबोपमा' से पत्र-लेखन आरम्भ करने वाले ठेठ पहाड़ियों की न-जाने कितनी चिट्ठियाँ पढ़ने-सुनने और लिखने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है। कई एक पत्र पहाड़ियों के परदेश गए बेटे या पतियों के नाम के भी पढ़े-लिखे हैं, जिनमें पहाड़ियों का स्नेहावेग और स्मृतियों की विह्वलता से हिलुरता हिया अँगूठों की छापों की तरह उतर आता था। आज भी उन पत्रों की आत्मा जैसे मेरे मन-मस्तिष्क की गहरी घाटियों में पहाड़ी नदियों के गंगलोढ़ों-पत्थरों की चौकी पर से बिछलते-बहते पानी की तरह छलुक-छलुक करती रहती है।

मैं स्वयम् ठेठ पहाड़ी हूँ, सो परदेश की नौकरी में गए बेटों-पतियों वाली पहाड़ियों का हिया प्यार से हिलुरता है, टीस से कसमसाता है और वो ऊँचे टीलों पर खड़ी, सड़कों पर चलते मुसाफिरों को देख-देखकर अपनों की स्मृति से गद्गदा उठती हैं, गाँव की ओर आते चिट्ठीरसैन को देखते ही उनकी सिर-धरी गागरियाँ छलछलाने लगती हैं, हाथ-थमे मूसल-कुटल जल्दी-जल्दी चलने लगते हैं, तो मेरे सजातीय-संस्कारों को उनके मन की संक्रामक-कसक और विह्वलता व्याप ही जाती है।

१९५८ में पहली बार मैंने 'पोस्टमैन' कहानी लिखी थी। पूना में बड़े भाई श्री जंगबहादुरसिंह जी के पास आए पुष्कर मामू के एक पोस्टकार्ड से प्रेरणा लेकर, जिस अकेले पोस्टकार्ड में पाँच या छह बार 'बाँकी क्या लिखूँ, आप खुद समझदार हैं।' वाक्य आया था ! पत्र आरम्भ ही यों किया गया था, कि—'सस्ती सिरी प्रिय भानिज जंग को उनके मैं पुष्कर मामू की आझीस बार-बार पढ़ूँचे। बाँकी क्या लिखूँ, आप खुद समझदार हैं। यहाँ आजकल मौसम ठीक-ठाक ही चल रहा है। छोटी-सी दुकानदारी ठहरी, जैसे-तैसे चलानी ठहरी। बाँकी क्या लिखूँ, आप खुद समझदार हैं'...और इसके बाद फिर बाल-बच्चों की आदर-कुशल और उसके बाद फिर 'बाँकी क्या लिखूँ.....'

‘पोस्टमैन’ कहानी पाठकों-समीक्षकों द्वारा सराही गई, तो ‘चिट्ठीरसैन’ उपन्यास लिखने की उमंग जागी। इन्हीं दिनों ‘सुप्रभात’ में मेरी ‘मनौती’ कहानी छपी थी, उसकी और ‘पोस्टमैन’ की कथा-वस्तु को संयुक्त करने पर एक पूरे उपन्यास के लिए पर्याप्त ‘कथानक’ उपलब्ध हो जाएगा, ऐसा विश्वास जगा... और मेरे मन-मस्तिष्क की गहरी घाटियों में बिछुलती-बहती पहाड़ की स्मृति-सुँयाल के गंगलोढ़-ढुलके पानी के अछोर-दायरे, मेरे सामने फैलते ही चले गए।

कई चिट्ठियों के चार-चार आँखरों की गहरी छाप मन-मस्तिष्क में पैठी हुई थी, वह भी उभर आई.....

और सबसे अधिक उभरीं दो खण्डित-चिट्ठियाँ, जिनमें से एक के चार आँखर यों थे—

थोड़ा लिखा बहुत समझना। परदेश में  
अटका हुआ पापी पराण ठहरा मेरा,  
तेरी याद की बयाल चलती है, तो थर-  
थराने लगता है। जरा खयाल करना।  
बाकी क्या लिखूँ, तू खुद समझदार हो  
चुकी होगी। चिट्ठीरसैन की थैली  
भरते रहना। याने चतते जोगी के  
चिमटे-जैसी छणछणाती चिट्ठियाँ  
भिजवाती रहना, हो !

तेरा सुवा.....  
मोहनसिंह, फूल  
बुरूंश का.....

दूसरी चिट्ठी के चार आँखर फिर कभी बँचवाऊंगा, पहले पहली चिट्ठी के चार आँखरों से अनुप्रेरित यह उपन्यास बँचवा रहा हूँ।

पुस्तकाकार प्रकाशित होने से पहले, यह उपन्यास कलकत्ता के 'आदर्श' में प्रकाशित हो चुका है—१९६० में। 'आदर्श' के सम्पादकों और पाठकों ने इसे सराहा ही नहीं, अपनी ममता भी दी है और मैं अपने सभी पाठकों के प्रति परम-कृतज्ञ हूँ।

अन्त में, भाई सीताराम शर्मा के प्रति आभार स्वीकार लूँ, जिनके आत्मीयतापूर्ण-आग्रहों ने इस उपन्यास की पूर्ति में बहुत-कुछ हाथ बँटाया है।

—शैलेश मटियानी

श्रद्धेय देवीदयालजी चतुर्वेदो  
को  
सप्रणाम

रमौती को आज पुनः आकाश देखनी, पाताल हेरनी हो गई थी ।

पनार अपनी री बही जा रही थी । उसके किनारे पड़े गोल-गोल गंगलोढ़ों पर अस्थिरचित्त संन्यासी के से आसन लगाती हिलोरें, गंगलोढ़ों से टकरा-टकराकर, फेनिल-सर्पिल होती, दूर-दूर बिछुलती, विलीन होती जा रही थीं ।...

रमौती ने अपने मिट्टी सने पाँवों को, सिहरते-सहमते हुए, किनारे के जल में रखा । इठलाती-बलखाती हिलोरें उसके पाँवों को धो गई । रमौती ने देखा, उसके पाँवों लगी मिट्टी बहते-बहते, एक लम्बी-पतली-मटमैली रेखा में बदलकर, पनार की असंख्य हिलोरों में विलीन हो गई है । जहाँ उसने अपने मिट्टी-सने पाँव धरे थे, वहाँ जल पुनः उजला हो गया था ।

पाँव-परसती लहरों में से एक को अपनी गोरी-उजली हथेलियों के संगम पर बटोरकर, बड़ी व्यथा-भरी आँखों, रमौती ने, अपना मुख-विम्ब देखा । एक आत्मिक-अवसाद-भरी उसाँस उसके भरे-भरे पयोधरों को और उकसा-विकसा गई । रमौती गहरी धार जाते-जाते बची ।...

कन-कन हथेलियों के बाँध-संगम से चूती हिलोर को उसने एक-बारगी मुक्त कर दिया और उसे पनार की असंख्य हिलोरों में विलीन होते देखती रही—उसका अपावन शरीर भी इन्हीं लहरों में विलीन हो जाएगा । सारी अपावनता, एक लम्बी-पतली देह के साथ, सुदूर चली जाएगी और पनार के किनारे का जल फिर ज्यों-का-त्यों उजला हो जाएगा ।

टुल...टुल...टुल...टुल

रमौती की आँखों के आँसू पनार की हिलोरों में समा गए । रमौती आगे

झुकी। झुकने से, उसके आँगड़े के बटन खुल गए। अपने उकसे-विकसे, अनावृत उदर पर रमौती की सदा के लिए मुँदने जा रही आँखें, सहसा, टिक गईं। रमौती की आँखों के आँसू टुलटुला गए... एक छोटी, चमकीली, सुनहली मछली टप् से उछली और हिलोरों में समा गई।...

और रमौती को लगा, जैसे वह उसी के अनावृत-उदर में समा गई है। सहसा, उसे अपना नाभि-छिद्र भी कसमसाता-सा लगा। हथेली से ढँकने लगी, तो ऐसा लगा, जैसे वह सुनहली मछली फुदक रही है।...

अपनी सुगौर, मांसल उदर-भूमि के सुनहलेपन को रमौती देखती रह गई। बचपन में उसने अपनी आमा (दादी) से सुवरन केशा राजकुमारी की कहानी सुनी थी, कि कैसे नहाते में उसका बाल टूट गया और उसे निगलकर, एक मछली सोने की बन गई और... और सुनहली मछली से नदी का पानी भी सुनहला होता रहा।...

और पीताम्बर पोस्टमैन के प्यार की सुनहली मछली रमौती के उदर-पनार में समा गई है और उसका पानी सुनहला हो गया है।...

रमौती के आँसू टुलटुला गए हैं, सोने के बन गए हैं।

हिलोरों में विलीन हो रहे हैं और अशक्तियों की तरह खनखनाने लगे हैं—रमौ... रमौ .. रमौ.....

“रमो...बस, एक बरस की बात है। अगले में गबरमिटी छुट्टी लेके आ जाऊँगा। तब देखना मेरा मिजात और फिर देखना मेरे ठाठ। पलटन की सूट-बूटो से लैस, चुपके से तेरे पीछे आकर, अपने कीलदार बूटों को जोर से मिलाकर—बिलकुल तेरे कानों के पास—‘हौल्ट’ कहूँगा, तो तू खुशी और शरम के मारे अपने सिर का पिछोड़ा ठीक करने लग जाएगी। ” कहते-कहते, मोहनमीग ने रमोती के माथे का चाल (सिर ढाँकने का कपड़ा) थोड़ा ऊँचा कर दिया।

रमोती की आँखों में आँसू भरे हुए थे।

पिछले वर्ष ही उसने कुसुमिया-पिछोड़ा ओढ़ा था और गले में तीन पलड़ों का काला चरेवा (मंगलसूत्र) बाँधा था। सिर्फ दश-ग्यारह वर्ष की बालिका थी तब वह। तेरहवें से तो अब लगी है। देखी-सुनी बातें थी वैसे, सो जानती तो थी, कि कुसुमिया पिछोड़ा ओढ़ लेने, काला चरेवा बाँध लेने पर पराए घर का बर्तन बन जाना पड़ता है। पराए वन की घसियारिन बनना पड़ता है, जिस वन की चिड़ियों से कोई परिचय नहीं होता। पराए नौलों का पानी भरना पड़ता है, जिनकी गहराई का खुद को कोई अन्दाजा नहीं होता और पराए चूल्हे की रसियारी बनना पड़ता है, जहाँ रोटी-रोटी पर देवर खिभाते हैं। भात गीला हो गया, तो सौरज्यू (समुर) टोकते हैं और दाल में नमक ज्यादा होने के लिए, सास बचन मारती है। ननदें लटी में, फुन्ने के बदले, रस्सी लगा देती हैं। जेठानियाँ कूटे हुए चावलों में कोरे धान मिला देती हैं और ‘ऊँ’ (वो) मन-मिलती न होने पर, छाती पर सौत बिठा देते हैं।

पर, ब्या तो फिर भी ब्या है न ?

किसका नहीं होता ? होते में, कौन खुश नहीं होता ? रमौती भी खुश हुई थी। उसे अब सिर्फ एक काले भगुले की जगह ( जिसे वह बालपन से कन्या होने के प्रतीक-स्वरूप पहनती आ रही थी ) घाघरा, पिछोड़ा और आंगड़ा पहनने को मिलेगा। वह भी खूब हथकान (हाथ-कानों के जेवर) पहन सकेगी, देवर-ननदों को नाम ले लेकर, पुकार सकेगी।... और सबसे बड़ी बात, अब तक जो वह सदुवा भाई जिससे बात-बात पर भगड़ता चला आ रहा है, वही रमौती को हर चैत के महीने में 'भिटौली' देने आएगा।

बीते चैत-महीने में, रमौती ने गाँगुली दीदी के लिए अपने बौज्यू को भिटौली ले जाते देखा था। नए-नए कपड़े। ढेर-सारे पकवान और दही की ठेकी।

यों, पिछले दिनों, रमौती के ये सारे अरमान पूरे होते रहे थे। पहले साल-भर तो वह, 'दुरगुन'<sup>१</sup> के बाद, मँत ही रही थी। सौरास (समुराल) आए, उसे साल-भर ही हुआ था।

भरा-पूरा घर था। सास-ससुर थे, दो जेठानियाँ थीं। मोहनसींग था और उससे बड़े जमनसींग और नाथूसींग थे। वैसे जमनसींग इस वर्ष न्यारा हो गया था। उसकी माँ-बाप से पटती नहीं थी, अपने हिस्से की खेती पाती अलग करवाकर, वह दूसरे घर में रहने लगा था। खेती के अलावा, सैमाधुर के जंगल में लीसा निकालने का काम करता था। चीड़ के पेड़ों से लीसा निकालते-निकालते, वह 'लिसू पधान' के नाम से प्रख्यात हो गया था।

मँझला नाथूसींग 'नाथू होलदार' था। पलटन में तो वह मामूली सिपाही था, या 'कप्टन-लप्टन' गवर्नमेंट ही जाने। अपने ऊँडलगों और हेर-फेर के दूसरे गाँवों में तो वह 'नाथू होलदार' ही था। दो-चार बरस में पेंशन मिलने वाली थी। पिछले बरस घर आया था, तो दुनिया-नमान की चीजें अपने सफेद बोरों में लाया था, जिन्हें वह 'सरकारी-बैंग' कहता था।

बण्डल-के-बण्डल बिलेंती बिस्कुट और मिठाइयाँ। रेशम-जार्जट की साड़ियाँ और ब्लाउज। ऊँडलगों के इतिहास में, पहली बार नाथू होलदार की घरवाली ने ही दो-तलिया जूतियाँ (सैंडिल) पहनी थीं।

१. अलमोड़ा में यह प्रथा है, कि ब्याह के दूसरे दिन वर अपने साथ दुलहन को दुलहन के मायके ले जाता है और एक दिन वहाँ ठहरकर, लौट आता है। इसे 'दुरगुन' कहते हैं।

गाँव की औरतें कभी-कभी आपस में चर्चा की चोंचें लड़ाया करती थीं—  
 “हौलदारन की तो ठसक ही और हो गई है। गुमान नहीं मिलता। रेशम-  
 जार्जेंट की साड़ी पर दोतलिया जूतियाँ पहनकर बगैर पाँख की चड़ी-सी उड़ती,  
 बगैर दिशा की हवा-सी फरफराती फिरती है।...”

“हाँ, री ! गालों में मैदा अलग से लगाती है। कहती है, ‘पोडर लाए  
 हैं, ऊँ ! तुषार से मुँह फटता है मेरा, इसलिए मुँह में लगाने के लिए ‘भैंसलीन’  
 लाए हैं।...”

“अरे, जिसका घरवाला देश-परदेश की नौकरी में होगा, वही तो किसम-  
 किसम के शोक-मिजात कर सकती है। हमारे नशीब में, ये सब सुख कहाँ ?  
 पोडर-भैंसलीन के नाम पर, लटी में लगाने को फुन्ना नहीं मिलता। हौलदारन  
 बिस्कुट-मिठाइयाँ चाब के थूक देती हैं, यहाँ कोरे चावल का चबैना करने पर,  
 सासू सात पुश्तों को सराद (श्राद्ध) एक साथ करती हैं।”

नाथू हौलदार के संतान नहीं थी।

कभी किसी से चर्चा चल जाती, तो कह देता—“छोटी उमर में ही पलटन  
 में भरती हो गया था। सारी जवानी पलटन में ही कट गई। घर कभी आया,  
 तो महीने-डेढ़ महीने की छुट्टी में। किताबों में मैंने पढ़ रखा है, कि बच्चे भी  
 मौसम से ही होते हैं। न-जाने कब मैं छुट्टियों में आया, न-जाने कब उसकी  
 तबियत कैसी रही ? बिना मौसम की फसल बोने से क्या होता है ?...”

नाथू हौलदार की आज से नहीं, बचपन से ही यह आदत रही है, कि  
 खरी बात कहने में किसी किसम की लाग-लपेट नहीं। यों बौज्यू<sup>१</sup> से, सिर्फ  
 इसी मकसद को लेकर, कि चंदरा की गोद हरी हो जाए, कई बार नाथू  
 हौलदार ने कहा, कि “मोहन की भौजी को लेजाकर, फेमिली-क्वाटर में रखना  
 चाहता हूँ। चार दिन की नौकरी में ही मौका है, देश-परदेश देख लेगी।”

आनसींग बोले—“बेटा, ब्वारी (बहू) तो फिर भी कभी देख लेगी,  
 देश-परदेश। ऊपर होती उमर है। मैं तो अब धार<sup>२</sup>-ढलता सूरज हूँ। इस  
 बार ऐसा कर, अपनी माँ को और मुझे देश-परदेश घुमा ला। आँखों से

---

१. पिताजी।      २. टीला।

अच्छा-भला देख आएँगे, चार धाम कर लेंगे । तारण हो जाएगा । गया काशी में पितरों को पिंड भी दे आएँगे । ब्वारी तब तक घर के काम-काज सँभालेगी । हमारे दिन कितने रह गये हैं ? आज का गया, तो फिर कल का गिनना । बाद में, ले जाना ब्वारी को, जिधर भी ले जाना होगा । तब तक मोहनिया के पाँवों में भी रस्सी पड़ जाएगी । हाथ-पाँव सराने की जुगत हो जाएगी ।... ”

तब की अब है, नाथू होलदार ने यह सोचना भी छोड़ दिया है, कि पलटन की नौकरी में फेमिली-क्वाटर भी मिलते हैं । सोच लिया, अब पेन्शन में घर आ जाने पर ही जंजाल से निबटेगा ।... ”

और मोहनसींग आज जो पलटन को मुख कर रहा है, सो नाथू होलदार के ठाठ देखकर और उसी की प्रेरणा से, कि इस उमर में दोहार मूँछों, तिपलिया नसों से चसममाते तन को सहेजे रखने से क्या होगा ?

कुछ दिन बीते, यही-कुछ-ऐसी चर्चा चली थी । आनसींग ने कहा था—  
“जमनुवा अपनी जोरू का हाथ थाम कर अलग हो गया है । घर में ले-दे के इस समय मोहनिया है । उसे भी तू रिगरूटी होफिस पहुँचाने की बात करता है ? हम दोनों बुड़-बुड़ियों की बात यह है, कि फल पक गया है, अब टपका, तब टपका । आखिरी बखत में भाँभी ( अर्थी ) को कंधा कौन देगा ? जमनुवा की क्या ठाक । साला तिरजाट है । जोरू का गुलाम । उसके कहने पर, हमको जीते जी शमशान पहुँचा सकता है । नहीं तो, ‘माँ-बाप मरे, चील-कौवे खा गए । बेटे बहू की ठुड्डी ऊपर करते रह गए ।’ वाली होगी ।... नाथू बेटे, आनसींग महर ने एक होलदार दे दिया है, अंग्रेजों की लाम को, इतना ही बहुत है । हर कुटुम्ब से एक-एक होलदार चला जाए, तो अंग्रेजों की फौज नौखंडी धरती में फैल जाए ।... बस कर । एक मोहनिया ही घर में हल की मूँठ थमाने को रह गया है, उसे भी परदेश की हवा लग गई, तो हो गया कल्याण । फिर जमनुवा से कुछ जड़-पौध थी, तो वह बार हाथ उधर सरक गया है । तू अपनी होलदारी में ही रह गया । एक मोहनिया से कुछ बेल आगे बढ़ने का रास्ता दिख रहा है, तो... ”

“बस, वस, बोज्यू !” नाथू होलदार ने टोक दिया था—“किसी ने एक बार सवाल किया, ‘बंदर की उछल-कूद कितनी ?’ किसी ने जवाब दिया था, कि इस डाल से उस डाल तक ! मुल्ला तेरो दौड़ कहाँ तक, तो मसजिद का

हवाला । बौज्यू, जमाना कहाँ-का-कहाँ सरक गया और आप पुराने बख्त के लोगों का यह हाल है, कि जीवन में पुरुसारथ के करम-कांड के नाम पर हल की मूँठ और वेलों को 'रो बल्दा, रो' होट, बिनुवा होट !' दुनिया देखने-सुनने के नाम पर गया-काशी और हरिद्वार-बदरीनाथ ।...दुनिया में रेडियो-टेलीफोन चल गए हैं । मगर, हमारे पहाड़ में अभी वही इस-धार-से-उस-धार-तक की घाघ-पुकार है — 'फलाना रे हो, ऊ !' और बाँस की मुरली, काठ की नाली, बकरी की लाद का हुड़का और 'कमलापती जोशी, विनसर लै जानू धुर । बुड़ भैसा लिबेर, विनसर लै जानू धुर ।' विनसर का जंगल क्या हो गया, यहाँ के लैला-मजनुयो के लिए ईरान-तूरान-अफगैनिस्तान हो गया है ।...अरे पहाड़ के लोगों को तो उनके ग्राम-बूतू ( दादा-दादी ) ने जहाँ पैदा कर के छोड़ दिया था, वहीं-के-वही हैं !...''

नाथू हौलदार के लेवचर मे, आनसींग महर टुकुर-टुकुर ताकते रह गए थे । हौलदारन उधर से गुजरी, तो नाथू हौलदार का सीना और चौड़ा हो गया । गला खँखारकर, बोला—“अब ये तुम्हारी ब्वारी है । घास-पात और गोठ-खेत से आगे-पीछे की दुनिया इसके लिए क्या पता कितनी है, कहाँ है ? चार दिन मिलीटरी के फेमिली-क्वाटर में मेरे साथ रह आती, तो फिर कोई पाता इसके ठसके-सलीकों को ?...अफसरों की औरतों के साथ टैनिस-बैटमिल्टन खेलती, 'ओ येस, ओ नो, थैंकू भेरी मच,' करती, बँगले-बगीचों के चक्कर लगाती । डिरायंग-रूम में गुनदस्ते लगवाती ।...''

खैर, बात बहुत घुमा-फिरा के क्या कहनी थी ? थोड़े में ही नाथू हौलदार ने आनसींग का मन बुझा दिया—“बार-बार न लड़ाइयाँ होती हैं, न बार-बार लाम में भरती होने का चानस मिलता है । घर की आप फिक्र क्यों करते हैं ? दो तीन साल में ही पेन्शन पर आ जाऊँगा मैं । अभी तो आपकी उमर लम्बी है । पुरानी हड्डी को टूटते टाइम लगेगा । तब तक दोनों भाई यदि जतन से चार पैसा कमाते-बचाते रहे, तो घर-गिरस्ती सँभल जाएगी ।...''

दरअसल गिरस्ती के खम्भे पुरखों से ही कमजोर चले आ रहे थे । अदिनों की बात है । आनसींग तब किशोरावस्था में थे । बाड़ेछीना के प्राइमरी स्कूल में नाम लिखाया हुआ था । तभी आनसींग के बौज्यू खीमसींग महर पर बुरी पड़ी थी ।

दिगोली गाँव के पुरोहित भौनचन्द्र पांडे का बताया हुआ सप्तम शनि आनसिंह के पिता खीमसींग को गोठ पान से (घर) बरबाद कर गया। भौनचन्द्र पांडे का इसमें कोई कसूर न था। एक तो सप्तम स्थान में शनि और दूसरे जन्म-स्थान में राहु। गुरु-मंगल कुछ बचाव करते, न करते, उनको नवम् स्थान के केतू से ही निबटना मुश्किल हो रहा था। भौनचन्द्र जी ने तो कह भी दिया था, कि काशी से यह 'पंडित गयादीन शास्त्री-विरचित पंचांग' इस बार बहुत टेढ़ा-मेढ़ा होकर आया है।

कहा भी है, राहु न देवे थाहु और केतु न पड़ने दे चेतु।

खीमसींग पर चारों ओर से ऐसी पड़ी, कि सचमुच चेत न रहा। आनसींग की शादी से निबटे ही थे, कि पिता जी गो-लोक-वासी हो गए। उनके क्रिया-कर्म से छुटकारे की साँस ली, कि माँ ने पलकें ढाँप लीं—“खिमुवा बेटे, जीते जी बड़ी हाँस (लालसा) थी, काशी-पिरयाग करने की। दान नहीं किए होंगे, रह गई। खुशी इतनी है, उनके साथ-साथ उठ रही हूँ। बहुत भारी नहीं लगे, तो मेरी मिट्टी को काशी-पिरयाग के संजम तक ”

खीमसींग ने माँ का यह आदेश भी निभाया, कि माँ की अंतिम-इच्छा अधूरी रह गई तो मन में हमेशा शूल सालता रहेगा।

काशी-पिरयाग से लौटने तक, कीड़िया रोग से दोनों भंसे गोठ से बाहर खिसक चुकी थीं और हमेशा बाहर-बाहर कितकने-धितकने वाला बैल भलुवा, कहीं रिभड़ (बैलों की लड़ाई) में टाँग तुड़ाकर, गोठ के अन्दर पड़ा था।

इस सारी विपदा से निबटते-निबटते, खीमसींग की कमर टूट गई। तीस नाली जमीन मानसींग थोकदार के हाथ गिरवी पड़ गई। रुक्के, हथ पेंच और विरादरी से लगाकर, सात-आठ सौ रुपए और कर्ज हो गए।

जो ब्रज पड़ा, सो पड़ा। बीती के लिए 'हाय' भरके, रही-सही तो सँभालनी ही थी। दो-तीन थान (पशु) गोठ में बाँधते, हल-बीज और नून-तेल जुटाते में दो-तीन सौ और सिर आ पड़े, क्योंकि घर में जो-कुछ था, वो तो बीज्यू-इजा<sup>१</sup> की गति-क्रिया से निबटने में निकल गया था।

और तब से थोड़ा-बहुत कर्ज चला ही आ रहा था। अब आनसींग भी नाथू हौलदार को कुछ ऊँची-नीची कहें, तो किस मुँह से बाड़ेछीना के अपर

१. पिता-माता।

प्राइमरी स्कूल की पढ़ाई पूरे पैंतीस-वर्षों बाद मन्थोडरों में एक जगह नीचे, एक जगह ऊपर 'दसखत आनसींग बे खीमसींग महर' करने के काम में जब आई, तो सिर्फ नाथू होलदार की ही बदौलत ।

सो, नाथू होलदार दर-असल कुछ कह-सुन सकने का, ऊँची-नीची राय दे सकने का, अधिकारी था ।

नाथू को पलटन में भर्ती हुए, सोलह वर्ष बीत चुके थे । इन सोलह वर्षों में घर की कपड़े और नून-तेल तम्बाकू की समस्याएँ वही हल करते आ रहा था । अपने कंटम बूट-पेट वह छुट्टियों में घर आने पर साथ लेके आता था, जो आनसींग को सहारा देते थे । पहाड़ की सदियों में पिडली-पिडली बरफ की खेती और उसमें पलटन के बूटों और फलालेन की पैंण्ट-पट्टियों का जो महत्त्व होता है, वह सहज ही भूलने की चीज नहीं होती । पारसाल की ही बात है । काफी चला लिया था । अपने पाँव का बूँट आनसींग महर ने हलिया देवराम को दे डाला था । आज तक गुन गाता है, कि—'गुसे ( स्वामी ), ऊडलगों और डुँगरी के कंकर-काँटों में जो रक्षा इन बूँटों से हुई है मेरे पाँवों की, भगीबान करें, ऐसी रक्षा आपके बाल-बच्चों की हो ।'... पहले काम करते वक्त एक नजर जमीन पर रखनी पड़ती थी, काँटे-कंकरो के भय से । अब तो मैं ऐसे चलता हूँ, जैसे डामर की सड़क में अपने गुमानसींग थोकदार का सात-सैं-चार नमबर का टिरक ( ठेला ) क्या दौड़ेगा ? और गुसे, सवारी में-सवारी तो, बस, टिरक की होती है ।... और उसमें भी अपने थोकदारजू का सात-सैं-चार नमबर का टिरक ।...'

ऊनी पट्टियाँ यों ही पड़ी थीं । सुना, कि थोकदार गुमानसींग के पाँवों में बात हो रहा है । पिडलियाँ चड़कती हैं, खें-खें खेंचती हैं नसों को । पूस-माघ की सर्दी बूढ़ों को बहुत बुरी व्यापती है ।...

पिछले फागुन की बात है ।

थानसींग ने दोनों पट्टियाँ थोकदार के यहाँ भेज दी और कह दिया, कि कसकर पिडलियों में बाँध लें । शायद, चड़क थम जाए ।

और, दूसरे ही दिन, पाँव पकड़कर बैठे थोकदार आनसींग के आँगन में थे—“यार, आनसींग भाया, अब क्या कहूँ, किस मुँह से आशीर्वाद दूँ तुम्हें ।...”

खैर, बात तो चमड़े की जबान से निकलने वाली चीज है और चमड़े को जितना खींचो, खिंचता चला जाता है। चार आँखों में बात इतनी-सी है, कि इस तथ्य से तो आनसींग इन्कार कर ही नहीं सकते, कि नाथू हौलदार की पलटन की नौकरी की बदौलत घर की फटी-उधड़ी को टाँके तो लग ही रहे हैं, साथ ही, एक साख बनी हुई है। रुतबा बना हुआ है। 'नाथू हौलदार के बोज्यू' कहलाने की मर्यादा बनी हुई है।

सो, जिस नाथू हौलदार ने आनसींग महर की इतनी इज्जत बना रखी है, घर-गिरस्ती को कंधा दे रखा है—मोहनसींग को भी पलटन में भेजने की बात चलाई है उसने, तो आगे-पीछे की सोच तो ली ही होगी।

नाथू हौलदार के अंतिम शब्द थे—“वैसे तो, बोज्यू, घर के पुरखे आप हैं, आपने ना पर ही हठ बाँध ली, तो हाँ-हाँ कहने वाला चमार।” मगर, मैं परिवार की भलाई के लिए ही कह रहा हूँ। बख्त से भरती हो जाएगा, तो मोहनिया की भी जिन्दगानी बन जाएगी। अच्छे खून का निकल गया तो, तरक्की कर जाएगा। रुतबे का रुतबा, पैसे के पैसे और कभी-कभार तराई भावर के इलाके में सरकारी जमीन मिलने के चानस भी रहेंगे। दश-बीस बीघे भी मिल गई, तो ह्यून (शरद-ऋतु) काटने का सहारा हो जाएगा।... तो ये सब रास्ते हैं तरक्की के। आगे आपकी मर्जी, सो ईश्वर की मर्जी। कपूत तो हूँ नहीं, कि आप से चार हाथ आगे चलूँ। मगर, पीछे होगा यह, कि कभी आपके या मोहनिया के दिमाग में मेरी बात बंटी भी, तो यही कथा होगी, कि 'मौसम था, तो बीज नहीं बोए, बीज बोने चले, तो बख्त निकल गया।'... और होगा यह, कि इधर मोहनिया रिक्रूटिंग-हौफिस में गया और उधर भर्ती-जमादार ने उमर पूछी, दाँत देखे, 'ओभरेज' कह दिया।... अभी तो ब्वारी (बहू) भी उमर पर नहीं आई है।... साल-दो साल में, मोहनिया छुट्टी पर आने लगेगा।...”

**मो**हनसींग चला गया । लाम में भर्ती होने ।

घर के सामने की धार (चट्टान) के ऊपर ही, गंगनाथ देवता का मंदिर था । गाय-बकरियों की ग्वाली रमौती वहाँ चली गई ।

तेरह वर्ष की उम्र बहुत होती नहीं, कि दही-चावल का टीका लगाकर, जाते हुए मोहनसींग को देखकर, रमौती ने मन में विछोह की व्यथा उल्टे मुँह वाले काँटे-सी चुभ जाती ।

यों रमौती ने नौल पानी भरते, धुरफाट गाय-बकरियाँ चराते, घास-सोतर काटते और धान ऊखल कूटते में मायके, ससुराल की बहुत-सी काकी-दीदी-भाभियों के पानी से पतले, नौनी से चुपड़े विछोह-गीत सुने थे, जिनमें वो अपने परदेश-देश गए प्रियतमों की अन्वार (आकृति) को याद करती थीं और 'दिगी लाली' कहकर, ऐसी शीतल उसांसे भरती थीं, कि लगता था मन में कहीं बर्फ की चँदेली, हल्की पतें जमने लग गई हैं... और... और उल्टे मुँह के काँटे चुभने लग गए हैं, जो निकालने की कोशिश करने से और ज्यादा अटकते हैं ।

बर्फ जमती है, तो पिघलती भी है ।

रमौती ने अपनी बहुतों को विछोह के आँसुओं को बहाते देखा है । तब सिर्फ इतना उसे महसूस होता था, कि बिना काका की काकियाँ, बिना भिनों (जीजा) की दीदियाँ और बिना दाज्यू की भाभियाँ बन, नौल और आँगन को उदास करती हैं । इन्हीं से बन-आँगन के पंछी भी बड़े टूटे-टूटे स्वर में बोलना सीखते हैं ।

पर, विछोह की उस कसमसा देने वाली अनुभूति से उसे लेना-देना नहीं

था, सी न वी कभी रमौती को व्यापी और न कभी रमौती ने 'दिगौ लाली' कहते हुए कलेजे को दाबा—और न बर्फ की पर्तें जमीं, न पिघलीं ।

होने को तो इतना-कुछ आज भी नहीं हुआ । पर, उधर मोहनसींग ऊड़-लंगों की उतार की पगडंडी ढलका और इधर रमौती को कुछ ऐसा महसूस हुआ, कि जो उसके लिए एकदम नया-नया था । कुछ ऐसा नया, कि वो उधर के नाशपाती के पेड़ में कुछ पत्ते या तो अभी-अभी निकल आए हैं, या अभी-अभी गिर गए हैं । ...दृष्टि-ओभल होता-होता, मोहनसींग अगोचर हो गया । नाशपाती का पेड़ खड़ा ही रहा, जैसे उसे अपने सिवा दुनिया में किसी से मोह न हो । अपने ही उगते-भरते पत्तों से भी नहीं । ...

ओह, पगडंडी नापता-नापता, बड़ी सड़क में पहुँच गया होगा, मोहनसींग ? ... बड़ी सड़क, अलमोड़ा-बाड़ेछीना लैन की, ऊपर, गंगनाथ-की-धार से दिखती है ... रोज दिखती है ...

आज भी दिखेगी ...

रमौती ने जल्दी जल्दी बकरियों को 'चनुवा ले, लाली ले, सेतुली लूयो', कहते हुए, कंकर मारे थे । हाथ में सोंटा था ही, गोमती-काई काबरी गायों को हाँका और कुतुक-कुतुक कर भागते हुए, बिजुवा बहौड़ (बछड़ा) को 'रो-रो' कहती, सीधे गंगनाथ की धार तक पहुँच गई ।

ऊड़लंगों वैसे ही ऊँचाई पर बसा हुआ है । पर, गंगनाथ की धार की अपनी ऊँचाई है । पहाड़ के अधिकतर गाँवों के लिए अपने पड़ौसी गाँव पीठ के होते हैं । सीढ़ियों-जैसी बनावट के खेतों का सिलसिला ऐसे मोड़ों पर खतम होता है, कि फर्लांग भर फासले का गाँव भी आँखों-परे होता है । ठीक आँखों की सीध से गाँव दूर-दूर दिख जाते हैं, पर अगल-बगल और पीठ पीछे के गाँवों का दिखाई देना बड़ा मुश्किल होता है । कभी-कभार धुँए की उठती लकीरें दिख जाती हैं और लोक-देवताओं के मंदिरों में फरफराती लाल झंडियाँ ।

पर, गंगनाथ की धार-जैसी ऊँची चट्टानों पर चढ़कर, आकाश को कोई छू ले । चारों तरफ के गाँव 'बाइसकोप' की तरह दिखने लगते हैं ।

रमौती ऊँची चट्टान के ऊपर खड़ी, दाँए हाथ को माथे आड़े देकर, बड़ी

सड़क की ओर देखने लगी। अलमोड़ा-बाड़ेछीना लैन की खास सड़क पर आवत-जावत लगी रहती है। कई मुसाफिरों के गिरोह दिख रहे थे। लीसे के कनस्तर ढो रहे, खच्चर दिख रहे थे। और, उन सबमें भी, अब मोहनसींग अलग दिखाई दे रहा था। कंधे से भोला लटकाए।

बड़ी सड़क बनाते समय सड़क के ठेकेदारों के लाड़ले अपनी उमर न काट रहे होंगे, कितने टेढ़े-मेढ़े मोड़ दिए हैं? मोहनसींग एक मोड़ से ढकता है, तो दूसरे मोड़ पर उसके दिखाई देने की प्रतीक्षा करनी पड़ती है।

और देख लिया था रमौती ने, वो क्या देखती, जो यह ऊँची चट्टान न होती? रमौती ने सोचा, ईश्वर ने पहाड़ में कैसी ऊँची-ऊँची चट्टानें बना रखी हैं, ताकि पहाड़ की रमौतियाँ अपने परदेश जाते प्रियतम को बड़ी देर तक देख सकें।

और पहाड़ी सड़कों को बनाने वाले ठेकेदार कितने समझदार होंगे, जिन्होंने ऐसी घेरदार और टेढ़ी-मेढ़ी सड़कें बनाई हैं, कि एक मोड़ पर ओझल होते ही, कुछ देर बाद, फिर दूसरे मोड़ पर प्रियतम नजर आए और रमौती मोड़-मोड़ पर अलग-अलग शुभकामनाएँ करती रहे। मोहनसींग को देखती रहे, उसके ओझल होते ही, गंगानाथ के मन्दिर को हाथ जोड़ती रहे।

“भौजी ऊ ...”

रमौती ने पलट के देखा, थोकदार गुमानसींग की बेटो साबुली थी। साबुली को तराई भावर व्याहा गया था, रुद्रपुर में। आजकल मँत (मायके) आई हुई थी।

“अब क्या माथे पर हाथ लगा-लगा के देख रही हो, भौजी? मोहनी दाज्यू तो अब पेटशाल के पड़ाव पहुँच गए होंगे। और तुमको तो ऐसी बेचैनी हो रही है, जैसे बड़ी सड़क में आज मोहनसींग-ही-मोहनसींग चल रहे हों।” साबुली पास आकर, कुतकुती लगाती बोली।

बहाना बनाने के लिए, रमौती हँस देना चाहती थी, बैरी-होंठ धोखा दे गए। आँखें भर आई, तो बहाना बना लिया—“चनुली बकरी नीचे को गई थी, दिखती नहीं, ननदी! स्यालों (गीदड़ों) का डर रहता है। हेर रही थी,

कि बैरी बयाल (हवा) कैसा जोर से चलता है—ग्राँखों में तमाम मिट्टी चली गई....”

“सफाई देने में अभी से उस्ताद हो गई हो, भौजी ? मैं तुमसे नाते में छोटी जरूर हूँ, पर शादी तुमसे दो वर्ष पहले हो गई थी ।” साबुली बोली—“और, तुम तो अभी अलग (रजस्वला) भी नहीं हुई हो न ? क्यों, अभी तो मोहनी दाज्यू ने हाथ, शायद, नहीं, लगाया होगा ? ... मेरा यह आठवाँ महीना चल रहा है ।...”

इतना कह कर ढीठ साबुली जोर से खिलखिला उठी । रमौती को भी हँसी आ गई—“चल, बड़ी चंट हो ।...”

दूर कहीं बड़ी सड़क पर बहुतों की उड़ाई धूल-गुबार ऊपर उठती-छँटती रही । और साबुली के साथ बात-ठिठोली करते हुए भी, रमौती के मन में एक व्यथा-सी घुमडती-मँडराती रही । विद्योह की ऐसी कसमसाहट और इस तेरह की कौली-उमर में ... ? रमौती कलिजुग में पैदा हुई है । ... धूल-गुबार उठती-बैठती रही ।

रोकते-रोकते भी, एक नजर रमौती की बड़ी सड़क की ओर उठ ही गई और, ननदें भगवान् ने बड़ी बैरन बनाई हैं, साबुली इतने से ही पकड़के बैठ गई—“सच-सच, कहना, भौजी, उनका जाना इतना दुखा गया है क्या ? वैसे तुम्हारा तन अभी खुला तो नहीं है, पर कलजुग में कौन उमर देखता है ? दाज्यू से सँग-सोहबत हो चुकी थी क्या ? ... बिन चुग्गा लगी चिड़िया को आँगन से बहुत मोह होता नहीं । ... मुँह को लगा हुआ स्वाद ही कले के पेड़ों को बेर-बेर देखने की ललक पैदा करता है ।”

औ, मिट्टी ! ... अब तू ही जबाब दे, रमौती ने तो लाज के मारे नखों से उखेल-उखेल कर, तुझे आगे कर दिया ।

बड़ी देर तक रमौती, अपनी छोटी-छोटी मुट्टियों से, साबुली की पीठ गदकाती रही, पर साबुली की जिद न छूटी—“बता न भौजी ?”

आखिर—“ना, रे ननदी” तेरी सो” ... कहकर, रमौती भाग गई ।

साबुली तो सिर्फ हवा-सी फिरने को आई थी वन । यों थोकदार गुमान-सिंग की गाय बकरियाँ भी उसी वन में चरती थीं, पर उन्होंने अपने हलिया

देवराम के मँझले बेटे दौलिया को ग्वाला रख रखा था। मान तो बौज्यू मानसींग थोकदार के समय से ही था और अपना नाम गुमानसींग पाया था।

साबुली थोकदार की तीसरी से थी, सो उसे थोकदार और ज्यादा प्यार करते थे। यों भी तीनों पत्नियाँ कन्या राशि की मिली थीं। पहली ने लगाने चार लड़कियों को जनम दिया और फिर कोख को एकदम बजर बना लिया, तो थोकदार ने दूसरी शादी की, कि इस डाल तो अब फल लगने से रहे। पर, दूसरी शादी को भी थोकदार के पितरों से पूर्व जन्म का बैर रहा। पहली बार लड़की ही दी और उस पहली के साथ ही फली भी देदी। साल भर परसून (प्रसूति) की बीमारी से बिस्तर पर रहकर, बड़ी मुश्किल से 'जान बची, भगवान दाहिने हुए' करके उठी भी, तो अब क्या होना था ?

जड़ ही नहीं रह गई, तो दूब क्या हरी हो ?

थोकदार ने तीसरी शादी की। चालीस की उमर में। वह साबुली की माँ बनी, चली गई। अब जाके थोकदार को कुछ चेत पड़ा, कि कहीं 'देवलगी' तो नहीं ? कहीं किसी का रोष-तोष तो नहीं ? किसी की घात तो नहीं ? किसी का टोना-टटका तो नहीं ?

जितने गणतुओं<sup>१</sup> (ज्योतिषियों) के नाम चले हुए थे, सबको बुलाया। किसी ने पितरों का रोष-तोष बताया, किसी ने कुल देवता गोल्ल और गगनाथ का दखल बताया और किसी ने पड़ोस के दुश्मन हरसींग मुप्यालके लगाए हुए वीर-वैताल बताए।

थोकदार ने सबकी कही पूरी की। फिर चौथी बार छाता पर पत्थर घर के लोगों की राय से एक और घर बिठाई। पर, वह चार महीने खूब बासमती का भात उड़ाकर, बगल में ही, हरसींग के घर बैठ गई।

हरसींग का तो कहना था, कि 'सिर्फ बासमती के भात से ही औरत थमती नहीं। थोकदार के घर सरु बासमती अघा गई, मेरे घर रुखी-सूखी मडुए की रोटी पर ही पड़ी हुई है। तन मन का भी कोई तकाजा होता है। मेरे घर ऐसे ही नहीं आई थोकदार के घर की बासमती छोड़कर, पहले ही देख

१. गणितज्ञों का अपभ्रंश।

लिया, कि हरसींग अपनी घरवाली से हर साल एक-एक बेटा पैदा करता है।”

.....और थोकदार की मान्यता यह थी, हरसींग ने सुरु को जादू खिलाया था। सुरु के रास्ते में बाईस गाँवों वाली दूब रखते, हरसींग को उन्होंने अपनी आँखों से देखा था उसे।

और तब थोकदार ने ऊडलगाँ के उत्तर-दक्षिण में गंगनाथ और गोल्ल देवताओं के दो नए मंदिर बनवाए। दोनों देवताओं को बाईस दिनों का अखंड देव जागरण दिया। मंदिरों में घंटे बकरे चड़ाए।

किसी ने न सुनी थी, गोल्ल-गंगनाथ ने सुनी। हरसींग लकड़ी काटते में पेड़ से गिरकर मर गया और सुरु फिर थोकदार के पास लौट आई, कि कान पकड़ के सिर आँचल धरती से लगाती हूँ। उस पापी ने जाने क्या जादू-टोना किया था, कि मैं अपना सत सँभाल नहीं सकी। उसने मेरे पीछे बबाललटी चुड़ैल लगा दी थी। मेरे प्राण आपके चरण छूने को छूटपटाते, पर चुड़ैल मेरी चूल पकड़कर, उस पापी के पास घसीट ले जाती।

थोकदार तो पहले से ही जानते थे, सो उन्होंने अपना दरवाजा सुरु के लिए खुला रखा। आठवें महीने सुरु ने पितरों को पिंड दिया। बेटे को जन्म दिया। यों थोकदार की वंश वेलि सूखते-सूखते बची।...थोकदार को विश्वास हो गया, कि यह सब गोल्ल—गंगनाथ देवताओं की ही कृपा से हुआ है। सब माया उन्हीं की है।

थोकदार गुमानसींग जमीन—जैजात जायजाद मे गाँव-भर में तगड़े थे। तीनों पत्नियाँ निभती आ रही थीं। सबकी बेटियों को अच्छी जगह ब्याहा था थोकदार ने। मगर, थीं सब पहाड़ में ही। सिर्फ साबुली भाबर ब्याही थी, सो दूर देश की बेटी—प्यार उसी पर ज्यादा था।

साबुली इन दिनों मैत में थी, तो चार दिन उसे रहना था और मायके के चार दिन ही औरत के लिए खेलने-कूदने को होते हैं।

“साबुली वे ऊ...ओ साबूलि .....”

साबुली ने अपनी गर्दन उठाकर, नीचे घरों की ओर देखा। सरुली बालक को कंधे से लगाए ‘ऊ-पर-ऊ’ कर रही थी।

साबुली दोड़ी-दोड़ी फिर रमौती तक पहुँची।

“चल, वे भौजी ! मुझे तो पिताजी की चाय। उमर पुकारने लगी है । भात पक गया होगा ।”

“तुम जाओ, ननदी ! हमारे घर अभी भात बना भी नहीं होगा । दूसरे गाय, बकरियाँ हेरनी हैं । थोड़ी देर में होलदारन दीदी (जेठानी) आएगी, तब मैं जाऊँगी ।....”

और आज मोहनसींग कहाँ खा रहा होगा ? घर से गडैरी का शाक और कड़ुआ तेल की पूरियाँ रख ले गया है । चितई या अलमोड़ा किसी पड़ाव में बैठेगा । छै डबल वाली चाय लेगा । एक गास गडैरी के, एक चाय के साथ खाएगा ।...और फिर रंगरूटी होफिस में जाएगा । रमौती को याद आया, कल उसके ज्यादाज्यू नाथू होलदार मोहनसींग को अपने आँगन में समझा रहे थे—“पाँव की नसों को सिर की ओर तानना । सीना नपते समय, साँस ऊपर को लेना और पेट को ऊपर, गले की ओर खींचना—कही ऐसा न हो, कि लम्बाई और सीने में एक-दो इंच की कसर रह जाए । वजन करते हैं वहाँ । पूरियाँ ज्यादा बँधवा लेना और, रंगरूटी होफिस में जाने से पहले, खूब ज्यादा खा के, ऊपर से पानी पी लेना । एक-सो-अठार पौड में छँटाक-भर भी कमती पड़ गया तो.....हाँ, सरकारी काम है, हल की मूठ थमाना नहीं ।...सब काम होशियारी से करना । भर्ती जमादार को बराबर सैलूट मारना ।....”

रमौती सोचने लगी, हे गंगनाथज्यू हो, वो ज्यादाज्यू की बताई सारी बातें बिसर जाएँ और छाती एक-दो इंच क्या, दो हाथ छोटी पड़ जाए ।... और...वो भर्ती जमादार को बराबर सैलूट मारना भूल जाएँ...और भर्ती जमादार नाराज होकर ‘दिसमिस’ कर दे उन्हें...और वो शाम को खाली भोला लिए, मुँह लटकाए, घर लौट आएँ ।.....

ओह, सबेरे उन्होंने रमौती के कंधों पर हाथ रखके कहा था—“रमौ, साल-भर में ही सरकारी छुट्टी लेकर, घर आ जाऊँगा । तेरे लिए भी होलदारन भौजी की जैसी रेशमीन साड़ियाँ और दोतलिया चप्पल लेके आऊँगा और चुपके से तेरे पीछे आकर, ‘हौल्ट’ कहूँगा, तो.....”

आज वो लौट आएँ, तो रमौती, अगर कोई देखता न होगा, उनके कंधों पर अपने हाथ रख देगी—“हँहो, हौल्ट.....” और कह देगी, कि उसे नहीं पहननी रेशमीन साड़ी और दोतलिया चप्पल ।

रोज मोहनसींग की जूठी थाली में रमौती को परोसा जाता था । मोहन-  
सींग दो-चार गास छोड़कर उठता था । आज पूरियों में से भी कोई टुकड़ा  
रमौती के नाम का, बचाया होगा ?...चाय की कोई घुटुक, रमौती के नाम  
उनके गले में अटकती होगी ?

ओह !

ओह !!

दिगो लाली !!!

रमोती पटांगण में मडुवा की बालें सुखा रही थी। आज मडुवा माँड़ने को बेलों की दाँय लगने वाली थी। आनसींग पड़ोस के तेजसींग के यहाँ पलटा माँगने गए थे, बेलों का।

नाथू होलदार की छुट्टियाँ खतम हो रही थीं। आजकल उसका समय घूम-टहल में बीत रहा था। सबेरे ही 'बल्सी' (मच्छी मारने की बशी) उठाई, नीचे सीढ़ियों के सिलसिले- सी पगडंडी उतरकर, पनार की ओर चला गया। बड़ी सड़क और ऊँडलगों की पगडंडी के बीचों-बीच पनार बहती है। वहीं लखुडयार इमशान पड़ता है और पुल है। पुल से थोड़ा हटकर, दान-सींग महर की दुकान है, जो एक पत्थर की चट्टान पर बनी होने से, 'दल की दुकान' कहलाती है। पलटन की छुट्टियों में, नाथू होलदार की रंगीली तबियत को 'टेमपास' करने का एक सहारा पनार की अस्याल-पपडुवा-चितनु और बलैण मछलियाँ का रहता है, तो एक सहारा दल की दुकान का, जहाँ वह हुक्के में कड़वा तम्बाकू भरकर पीने वालों की सँगत-पँगत में बैठकर, खुद कंचोमार सिगरेट की फूँक लगाता है और जरमनी-जैपेन की लड़ाइयों का आँखों देखा हाल सुनाता है।

पलटन और गवरन्टि की तारीफ करके, नाथू होलदार ने बहुतों को भर्ती होने की प्रेरणा दी है। यों जिमका भात खाया, उसके गीत गाए। नमक का फर्ज अदा किया है। और नहीं तो क्या होलदारी ऐसे ही मिल जाती है ?...

दानसींग दुकानदार रिश्ते में नाथू होलदार का ककिया (चचेरा) भाई लगता था। वह घर से दुकान को जा रहा था, कि पनार-पार जाते में, थोड़े

हो दूरी पर, भैंसीखाल के गहरे-नीले पानी में नाथू हौलदार को बल्सी लगाए देखा ।

“क्यों, हौलदार दाज्यू ? कितनी बड़ी फँसाई है ?” दानसींग ने दूर से आवाज दी और फिर लम्बे डग भरता, करीब पहुँचकर, बोला—“क्या, यार दाज्यू, तुम भी ग्वालों की जैसी खेलाखेली करते हो । अरे, तुम्हारे हाथ क्या चून-भर आटे का चारा लगाकर, डेढ़ हाथ की बल्सी पानी में हिलाने के लिए हैं ? लॉंगरेंज रैफल और टौमीगन की फरें दनकाने वाले तुम्हारे हाथों की छाया पानी पर पड़ती है और पनार की मछलियाँ ऐसे भागती हैं, जैसे बटेलन नम्बर फोर की लड़ाई में तुमने जरमनी-जैपेन के सिपाहियों को भगाया था । ...”

नाथू हौलदार की तो यह आदत शुरु से ही रही है, कि जब किसी को कोई बात बताई, नौनी चुपड़ना सीखा नहीं, चोखी-खरी सुना दी । अब कोई उनपर विश्वास न करे और बखत-बेबखत उल्टे नाथू हौलदार को ही हल्दी-चूना लगाने की कोशिश करे, तो नाथू हौलदार क्या करें, ? सिर्फ हँस दें और एकदम गम्भीर बने रहें, कि ज्यादा सफाई देने से अपनी बात का ही वजन घटता है और सामने वाला भी मान जाए, कि नाथू हौलदार भी कोई हस्ती है । चार छोटें क्या पड़े, तर हो गए और जरा-सी आँच क्या लगी, लाल हो गए—वो कम्बल-तवे कोई और होते होंगे । नाथू हौलदार ने तो जैसा भारी तन पाया है, वैसा ही वजनदार मन भी ।

दानसींग की बात पर भी हँस दिए —“यह तो बखत-बखत की बात है, भैया ! शेर के शिकारी को, कभी-कभी, चींटियों से भी निबटना पड़ जाता है । फिर मच्छीमारी तो शौक की, जिंदा दिली की चीज है और बनिए-दुकानदारों के धरम-करम से परे है । ...और फिर खास करके तुम-जैसे दोगल्ले दुकानदार...सबेरे उठे, हल थमाया और खेतों की ओर चल पड़े, कि सिर्फ दुकानदारी से तो बेड़ा पार होना नहीं है । खेती-बाड़ी हाथ में न रही, तो एकादशी पूजनी पड़ेगी । ...और दोपहर को हल की मूठ छोड़ी, दल की दुकान में चले आए । तराजू की डंडी नीचे-ऊपर भुकाई, कि दाल-भात तो तल्ली-मल्ली सार के खेतों से चल जाएगा, पर तून-तेल-तमाकू-कपड़ा कहाँ

से आएगा ? ...यहाँ तो रेफल थमाओ, तो सरकार मालिक है । मच्छीमारो, तो तनखाह पूरी पकती है । दो-चार बरस में पिन्शन पर आ जाऊँगा, तो घर बैठे सरकार मालिक रहेगी ।” ...और नाथू हीलदार ने जोर से बस्सी खेंची । एक चितलुवा फँसा था । नाथू हीलदार की हँसी और खुल गई— “अपने अलमोड़े के कमिश्नर सैप हैं, सिलीमैन सैप । सारी कुमाऊँ-पछाऊँ में उनकी भौजी (रानी विक्टोरिया) की तस्वीर वाले नोट चलते हैं...उनके मुँह से ‘येस’ निकला, तो गंगनाथ दाहिने हो गए, ‘नो’ हो गई, तो बजर पड़ गया समझो । अपनी फौनटन से ‘ओके’ कर दें तो फंसला कभी रिहाई का, और कभी फाँसी का । .. मच्छीमारने का इतना शौक है, कि कोसी की मछलियाँ उन्हें दूर से ही ‘सलाम’ करती हैं... ”

बातों में कोई नाथू हीलदार को पा ले, तो टाँग-तले से निकल जाएँ । स्वभाव से बड़े ही रँगदार हैं । सो, जब उनका पलटन के हेडक्वार्टर से पत्र आता, कि ‘फलानी तारीख को रवाना हो रहा हूँ, फलानी ‘को पहुँचूँगा,’ तो गाँव-भर के लोगों में फुसफुसी दौड़ जाती—“नाथू हीलदार आ रहा है ।”

वस्तुतः ऊडलगों के लिए एक महीना असोज का होता था, उत्साह-उमँग का, कि इस महीने अलमोड़ा शहर की नंदादेवी के मंदिर में ‘नंदादेवी का कौतिक’ (मेला) होता था, जिसमें पुरुषों को, गले में रेशमी रुमाल बाँध-बाँधकर, शहर के ऊँचे-ऊँचे मकानों की छतों पर घाघरों के घेर फैलाए, सिर का पिछौड़ा एक और ढङ्काए बैठी सवारियों-बोराणियों को ‘जोड़’ (लोक-गीतों का छंद-विशेष) मारने का मौका मिलता था, कि ‘ठेकि ताला छाँछ, तेरि नजर वार-पार, मेरी नजर ताँछ ।’ १...

और औरतों को जी-भर जलेबियाँ खाने, हाथ-भर चूड़ियाँ, लटी-भर फुन्ने पहनने और सिनीमा देखने का अवसर मिलता था ।

और एक महीना कातिक का भी तब से जोरदार माना जाने लगा था, जवसे दो मील की दूरी के पड़ाव बाड़ेछीना में रामलीला होने लगी थी । यह महीना भी उल्लास और प्रणय-लीलाओं का महीना होता था और इस

१. तेरी दृष्टि इधर-उधर, पर मेरी दृष्टि तेरी ओर है ।

महीने बाड़ेछीना के दुकानदारों के गोदाम की सारी गोला-मिसरी निबटती थी और इन्ही दिनों सगतसींग हलवाई का पुराना मैदा भी काम में आता था और इन्ही दिनों अलमोड़ा से आकर, रमजानी कलाल भी चूड़ी-कंगी का फड़ खोलता था ।

“और दो महीने तब ऊडलगों वाले जी भरके हँसते थे, जब नाथू हौलदार छुट्टियों में घर आता था ।

होता यह रहा है, कि न हौलदार की बातों का कभी किसी ने बुरा माना और न कभी हौलदार के माथे किसी को तेवर दिखाई दिए ।”

दानसींग बोला—“हौलदार दा, यार, चौमास की पनार तर लेना आसान है, पर फसक-फरालों में तुमसे दूपर-दू करना मुश्किल है । अच्छा, चलता है दुकान में ? पानी में भीग गया है, एक घुटुक चहा पी लेना गरम-गरम । थोकदार भी पहुँचे हैं । चार हाथ ‘कोटपीस’ के मार लेंगे ।” चल ”

‘कोटपीस’ का खेल हौलदार की पसंद का है ।

हौलदार न पानी भरने गई थी । सास खाना पका रही थी । आँगन फिरती रमौती मडुवा सुखा रही थी ।

“महरज्यू कहाँ है ?”

रमौती ने सिर उठाकर, देखा । चिट्ठीरसैन था । रमौती के हाथ-मूठ की बालें हाथ ही रह गई । मोहनसींग कह गया था, कि ‘हैडक्वाटर’ में पहुँचते ही पत्र माफिक तार के जरूर-जरूर भेजूँगा ।”

“सौरज्यू तो पलटा माँगने गए हैं ।” रमौती पिछोड़ा ठीक करती हुई बोली—“उनकी चिट्ठी हो, तो मुझे पढ़के सुना दो ।”

“किनकी चिट्ठी ?” चिट्ठीरसैन के होंठों में हँसी फैल गई । अपने आप ही रमौती के पाँव-सिर तक नजर फिर गई ।

रमौती लजाके अन्दर भाग गई । सास से बोली “ज्यू, चिट्ठीरसैन आया है ।... ”

“तो आँगन में बैठने की बोल दे, ब्वारी ! मेरे डुबुक उबाल खा रहे है । मैं थोड़ी देर में आती हूँ । तू उसे तम्बाकू भर के दे आ ।” सास डुबुक चलाती-चलाती बोली ।

रमौती ने झट से चिलम हूँटी, तमाकू भरा और बाहर खड़े चिट्ठीरसन

से बोली—“इधर चाख में आके बैठ जाओ। ज्यू थोड़ी देर में आती हैं। तब तक तमाखू पी लो।”

उसे हँसी आ गई। बोला—“तू मोहनसींग की है न ? मोहनसींग भी बड़ा भला आदमी था। पेटशाल की अपर-प्रेमरी में दो साल हमने साथ ही पड़ा था स्कूल दफा दो, दफा तीन में। मोहन ठाकुर ठहरा, सो हल-बैल सँभाल लिए। अब सुना है, मोहनसींग पलटन में भरती हो गया है ?”

“हाँ।” सिर से करते हुए, रमौती उसके हाथ में चिलम थमाने लगी, तो वह बोला—“मैं तो वामुण हूँ। तुम्हारे पुरोहित केशोचन्द्र पाने का रिश्तेदार लगता हूँ। मेरा नाम पीताम्बर पाने है। . .”

रमौती ठगी-सी खड़ी रह गई, तो सासू ने क्यों कहा, कि जा, तमाकू भरके दे आ ?

वैसे पीताम्बर कौन बहुत सयाना है ? मोहनसींग से या एकाध नीचे, या एकाध ऊपर। रमौती ने उसे कई बार देखा है। पर दूर-दूर से। कई बार तो वह एक लम्बे से कागज में दो जगह आनसींग से और एक जगह कभी दानसींग, कभी पिरमसींग और कभी थोकदार गुमानसींग से दसखत करवा कर कई नोट थमा गया है, आनसींग के हाथ में।

नाथू होलदार के पलटन के हेडक्वार्टर से भेजे हुए मन्थौडर होते थे ये, जिनमें नीचे के हिस्से में जिसे पीताम्बर पाने फाड़कर आनसींग को दे देता था—लिखा रहता था, ‘ऐमो भेजा पंचास का, जी ! बराबर फारम देखकर, ठीक जगह दसखत करके, पूरे पंचास रुपए गिन लेना, जी ! बाकी हाल-समाचार लिखके भेजे, जी, पास पत्र आपके नाम से मिले करके। गाँव वालों को राम-राम कहना, जी। थोकदार गुमानसींग ज्यू की बेटी साबुली का ब्या-भावर रुद्रपुर में होने वाला था...अच्छा, जी। मन्थौडर में जगह खतम। बाकी समाचार पत्र में। चरणतल आशीष पावे आपका पुत्र नाथू होलदार, जी !.....’

नाथू होलदार के मन्थौडरों से ही घर में रौनक बढ़ती-फैलती है, रमौती पिछले बरस से देखती आई थी। कहीं काम-काज से गई न होती, तो कभी-कभार पीताम्बर दिख जाता था। नाथू होलदार के मन्थौडर आने पर, आनसींग

पीताम्बर को गुड़ दही खिलाया करते थे। कभी-कभी, फुटकर पैसे जेब में होने पर, दक्षिणा भी दिया करते थे, एक-दो आना और तब पीताम्बर 'स्वस्ति' कहा करता था।

रमौती सोच रही थी, कितनी बावली है, री ? बोली थी, 'उनकी चिट्ठी हो तो, पढ़के सुना दो।...' कहीं उसने सौरज्यू या नाथू ज्याठज्यू से जिकर कर दिया, तो ?...और कहीं, ज्यादा डर की बात तो यही है, गाँव में किसी के हाथ न पड़ जाए यह बात।...

"कैसा आया...अच्छा भला आया, रे चतुरिया ? घर में भोजी-भताज तो कुशल-पत्री से हैं ? मैं तो सोच रही थी, तूने अपनी दीदी को..." अंदर से बतियाती आती हौलदार महतारी, पीताम्बर को देखकर, ठिठक गई—  
"पैलाग, गुरु !... क्या लाए हो ? अरे मोहनिया की कोई चिट्ठी-पत्री..."

"नाथू हौलदार की रजिस्टरी है। गाँव में पहुँच गया, तो मालूम पड़ा, हौलदार दल की दुकान गए हैं। मैं तो उधर से ही होके आया था, तब वो नहीं थे। अब लौट के जाने तक, कही और न निकल जाएँ।..." पीताम्बर 'मोभाग्यवती-पुत्रवंती भव', कहने के बाद बोला।

"अरे, नथुवा का क्या भरोसा है ? अभी पूरब में है, तो अभी पच्छिम में। मुझे दे जाओ, गुरु !...कोई मन्यौडर तो नहीं है न ? दसखत तो नहीं करने हैं ?" बुढ़िया बोली—"नहीं तो मोहनिया के बौज्यू को बुलवा देती हैं।"...

"मन्यौडर तो नहीं है, रजिस्टरी है। पर, दसखत करने पड़ेंगे। ठाकुर सैप को बुलवा..."

पीताम्बर बोल ही रहा था, कि लम्बी उमर के आनसींग आ पहुँचे—  
"पैलाग हो गुरु, क्या लाए हो ? मोहनिया की चिट्ठी-पत्री आदर-कुशल से आई है ?"

'कल्याणमस्तु' कहने के बाद, खाली भोले में से रजिस्टरी का लिफाफा निकालकर, रसीद में दस्तखत करवाकर, पीताम्बर पाने चला गया, जाते-जाते एक आँख रमौती की ओर उठा गया, तो रमौती जैसे मिट्टी में मिल गई, 'क्या सोचते होंगे, चिट्ठीरसैन पानेज्यू ?'

तभी बुढ़िया ने आवाज दी—“क्यों, नानि ब्वारी (छोटी बहू) ?... तू तो कहती थी, कि चतुरसींग आया है ? कहाँ चला गया ?”

“नही तो, ज्यू ! मैंने तो कहा था, कि चिट्टीरसैन आए हैं । ...” रमोती सिर का आँचल ठीक करती, चिलम ‘लियो’ सौरज्यू ! कहकर आनसींग को थमाती, बोली ।

बुढ़िया हँस पड़ी—“और तू ऐसी पागल है, कि पानेज्यू को चिलम दे रही थी ? अरे, मेरे कानों को तो बुढ़ापा खा गया, पर तेरी अकल पर क्या पत्थर पड़ गए ? कहीं बामुण भी ठाकुरों की चिलम लेते हैं ?... हत्त तेरे की, मैं समझी थी, चतुरिया भैया आया है । मैत की आदर-कुशल लाया होगा । भौजी जाने कंसी है ? पिछले बरस गई थी, तो कहती थी, कि ‘ननदी’ ईश्वर ने तुम्हें हौलदार बेटा दिया है । कहते हैं, पलटन के लोग चार धाम घूमते हैं । कभी तुम्हें काशी पिरयाग या बदरीनाथ कोई तीर्थ किराए, तो मुझे भी साथ लेना । पर, यहाँ तो नाथू को अपनी बूट-पट्टी और फसकों से ही फुरसत नहीं है । . क्यों हो, क्या लिखी है खबर-बात ? ...”

“सरकारी लिफाफा है, मैं कैसे फाड़ सकता हूँ ? कौन जाने कंसा जरूरी कागज-पत्र है । नाथू आएगा, उसीसे बँचवा लेंगे । शायद छुट्टी से वापस बुलाया होगा । मैं समझा था, मोहनिया ने भेजी होगी, अपनी कुशल-पत्री । ...” कहते हुए, एक बार पास खड़ी रमोती पर नजर डालकर, आनसींग गुड़-गुड़ चिलम गुड़गुड़ाने लग गए—“ब्वारी, बैलों के आगे एक पुली मडुवे का नलुवा डाल दे । फिर तो दै के समय, मुख म्वाल<sup>१</sup> लग जाएगी । ...”

---

१. दौय फिरते समय बैल अन्न न खाएँ, इसलिए उनके मुँह में डोरी से बुना ‘म्वाल’ (मुखौना) डाल दिया जाता है ।

**दा**नसींग-गुमानसींग एक थे और नाथू हौलदार की जोड़ी में पेटशाल की अपर प्राइमरी के हेडमास्टर चक्रधर जोशी ।

‘कोटपीस’ के खेल की जड़ ‘पटक’ है, कि जो सर पत्ता अपने पास जोर-दार ठहरा, उसके रँग का पता चले जाने पर हलकी ‘पटक’ देदी, जिससे अपना जोड़ीदार उसी रँग को चले । छुट्टियों में नाथू हौलदार आया और ऊडलगों में, दल की दुकानों में. कभी-कभार ‘अपर प्राइमरी स्कूल पेटशाल’ के बरामदे में, ‘कोटपीस’ का खेल जमा ।

होता यह चला आया था, कि दल की दुकान के खेल में अकसर दानसींग नाथू हौलदार की जोड़ी में होता था और नाथू हौलदार ने उसे ‘पटक’ की विद्या सिखा रखी थी । नाथू हौलदार बावन पत्तों का हिसाब रखने वाले समझे जाते थे ।

पर, आज नाथू हौलदार न मालूम किसका मुँह देख के उठे थे ? हौलदारन तो तब उठके चलदी थी, जब वो बिस्तरे पर ही थे और रमौती वैसे ही घूँघट करती है । हाँ सबेरे ही सीधे जब वो दिशा जाने के लिए जंगल की ओर गए थे, तो थोकदार गुमानसींग की...

“तुरुपचाल, कर रहे हो, हौलदार ?” गुमानसींग थोकदार ने गम्भीर स्वर में पूछा । अबके पान तुरुप हौलदार ने बोला था । क्या करते, शुरु के पाँच पत्तों में एक हुकुम का गुलाम था, दूसरा ईंट का सत्ता और बाकी के तीन थे, पान का चौका, पान का अट्टा और पान की दुग्गी । गुलाम पर तुरुप बोलना, हौलदार के सिद्धान्त के विरुद्ध था । एक सत्ते पर ईंट क्या बोलते ? पान ही तुरुप रहा ।...

पर, जब तेरह-के-तेरह पत्ते बँट चुके, तो तुरुपों के नाम पर चौका, अट्टा और दुग्गी से चौथा नदारद ।... और हाथ में कोई एक्का भी नहीं, कि सर चलके अपना बनालें पहला हाथ । चक्रधर हेडमास्टर से उम्मीद करनी बेकार थी । उसी के कारण तो आज नाथू होलदार की गर्दन भारी पड़ गई थी । जबसे खेलने बँठे, पहले तो चक्रधर खुद पीसता रहा घंटा-भर और फिर एक 'कोट' करवा के, नाथू होलदार के हाथ में पीस थमवा दी ।

नाथू होलदार ने तभी कह दिया था—“हिड मास्टर सैप, यह ‘अ से अमरूद, ब से बकरी या दो-दूनी चार, चार-चक्को सोल’, का हिसाब नहीं है, कि ‘एक-बट्टा दो धन (+) चार-बट्टा सात बराबर (=)’... कोटपीस का खेल बड़े दिमाग की चीज है । बावन पत्तों का हिसाब रखना पड़ता है और बगैर चले इशारे पकड़ने पड़ते हैं ।...”

इतना कहके, नाथू होलदार ने अपने हाथ के चीड़ के इक्के-वादशा को एक तरफ लगाकर फिर चीड़ के रंग की ‘पटक’ दी थी, पर नाथू होलदार की विद्या को हेडमास्टर सैप क्या समझें ? उन्होंने पान का रंग चल दिया और यहाँ नाथू होलदार के हाथ में सिर्फ पान का नहला पड़ा हुआ था । हेडमास्टर की दुग्गी पर गुमानसींग थोकदार ने गुलाम धर दिया, तो नाथू होलदार के लिए उसे उठाना ही मुश्किल हो गया ।

दाननसींग ने कटे में नमक गिरा दिया—“गुलाम से हार खा गए, होलदार दा ?”

“संगत में ही ऐसों की बँठे हैं ।” नाथू होलदार तेज और व्यथित-स्वर में बोले । हेडमास्टर साहब को भी गुस्सा आ गया था—“ए, होलदार ! तुम्हें मेरे साथ न खेलना हो, किसी दूसरे को बिठाओ । पर, कडुए वचन नहीं सुनाना । नही तो...”

“नहीं तो क्या कर लेगा, रे पंडित ? धोंस दिखाता है ? मेरा कौन-सा बेटा पढ़ता है, अपर प्रेमरी पेटशाल में, जो तू उसे फेल कर देगा ? ... खेल तो समझा नहीं, कि बावन पत्तों में से जो तेरा पत्ते हाथ में आते हैं, उनमें से कौन-सा चलना और कौन-सा नही ।... उल्टे लगे भींकने...” नाथू होलदार तैश खा गए थे, पर गुमानसींग थोकदार ने शान्ति करवा दी, कि

‘कोटपीस’ का खेल तो राजसी है, इसमें भगड़ना कैसा ? अरे, पत्ते आना-न-आना तो बाँट और काट पर निर्भर है। वैसे चक्रधर जोशियू भी दिवान-खानदान के हैं। दिमागी कामों की जड़ पहचानते हैं। ..

इतना कहकर, थोकदार और दानसींग हँस दिए थे और होलदार ने समझ लिया, कि ये नाथू होलदार की कमजोर नब्ज पकड़ रहे हैं। हार से स्वीकृति होलदार को मलहम लगाना चाहते हैं, कि ‘बात यों नहीं, यों।’... अरे, नाथू होलदार सब ट्रिकबाजी समझते हैं। सो, भट से, चक्रधर को कह दिया—“अरे, आपस में दोस्त लोग क्या-क्या करते हैं। तुम लोग क्या समझते, कि नाथू होलदार हेडमास्टर सैप से भगड़ा करेगा ?”...

पर, खेल फिर भी नाथू होलदार के काबू में नहीं आया। और इस बार तो होलदार को किधर देखूँ होगई। थोकदार के स्वर की गम्भीरता से यह निश्चित था, कि तुरूप उधर ही फँसे हैं। ...

बड़ी मुश्किल से, घंटों की पीसमपीसी के बाद, नाथू होलदार को तुरूप बोलने का चान्स मिला था और नाथू होलदार सोच रहे थे, कि एकाध कोट उतार कर, अपनी पलटनियाँ हँसी-हँसेंगे, पर पहले ही हाथ में हवा ढीली पड़ गई।

“क्या सोच पड़ गए, होलदार ? यार, जोरदार खिलाड़ी हो। बावन पत्तों के मालिक।”—थोकदार गुमानसींग फिर पूर्ववत् गम्भीर-स्वर में बोले—“कहीं ‘बावनिया’ करने का हिसाब तो नहीं लगा रहे हो हमको ?”

और इस बार बरबस ही उनके होठों से हँसी फूट पड़ी थी। .. नाथू होलदार ऐसे तिलमिला उठे, कि बटलन फोर वाली राइफल हो, तो दोनों को, बल्कि तीनों को, ठोक दें।

पर, ‘कोटपीस’ के राजसी-खेल में सब करना ही पड़ता है। ज्यों-ज्यों—गोल्ल देवता को हाथ जोड़कर, कि ‘इम हाथ पीसने या कोट खाने से बच जाऊँ, तो इसी ऐतवार (इतवार) को मंदिर में बकरा काटूँगा।’—नाथू होलदार ने रँगों का राजा हुकुम चल दिया, कि ‘हे भगवान्, हुकुम का इक्का हेड मास्टर सैप के पास निकले।’...

दाँए हाथ को दानसींग बैठा था। उसने पत्ता निकाला, तो हौलदार का कलेजा बैठने लगा। पर, ईश्वर मालिक था, दानसींग ने सिर्फ दहला लगाया और अब उम्मीद हेडमास्टर सैप पर थी।...

पर, हेडमास्टर सैप ने गुलाम लगा के छोड़ दिया और थोकदार ने मेम मारकर, उठा लिया। और इसके बाद तो जैसी नाथू हौलदार पर पड़ी और किसी पर न पड़े।

थोकदार-ने तुरुप के इक्के-बादशा को साथ में छोड़ा। फिर हुकुम का इक्का खाया, तो उसमें हेडमास्टर सैप का बादशाह चला गया।...

नाथू हौलदार कड़क उठे—“पहले ही बादशा क्यों नहीं मारा ? बेकार में ही उनकी मीम सर करवा दी। दो हाथ बन गए।”

“पहले बादशा मारता, तो थोकदार इक्का मारते।...मीम तो उनकी वैसे भी असल ही थी। उल्टे हाथ के इक्के को कोई क्या करेगा ?—”हेड-मास्टर साहब ने सफाई दी।

“अजी, रहने दो, गुरु से शिष्य बड़े और नमक मिर्च में कीड़े पड़े। पत्ता चलना आता नहीं...”

‘तो तुम्हीं ने चल लिया होता ? पान तुरुप बोलके, कौन-सा तीर मार दिया ? अब सँभालो, कही उल्टा कोट न हो जाए !’ हेडमास्टर भी झल्ला उठे—“यहाँ तो हाथ में पान की दुग्गी भी कसम खाने को नहीं है। ‘कोटपीस’ बहुत खेली, पर आज का जैसा दरिद्र खेल कभी नहीं खेला।...”

नाथू हौलदार कुछ और भी तेज बोलने जा रहे थे, कि थोकदार ने ईंट का इक्का चल दिया। ईंट के रँग में दानसींग ने पटक दी। पाँच हाथ हो चुके थे। छठा गुमानसींग थोकदार ने चीड़ के इक्के का लिया और सातवाँ ईंट का रँग चल दिया—“गू कोट !”

नाथू हौलदार पर जैसे बज्र पड़ गया। हाथ में एक पत्ती ईंट की बची थी। न होती, तो नाथू हौलदार के पास पान का अट्टा बचा ही था। तुरुप से ईंट को काट देते और दानसींग की ‘बादशा की पटक’ धरी रह जाती। दर-असल अपनी ही धार लगाई छुरी से गला कटने जा रहा था।

सहसा, नाथू हौलदार ने ईंट के बचे हुए चौके को हुकुम के शेष पत्तों में

कर लिया और पान का अट्टा जमीनपर ईंट के दहले पर छोड़ दिया—  
“ये काट्टा...”

पर, आवाज काँप गई।

अब दानसींग ने भी, बादशा की जगह, सत्ता छोड़ दिया। हाथ हौलदार का हो गया और नाथू हौलदार ‘चलो, अब पीस तो सिर पड़ेगी ही ...’ कहकर, पत्ते उठाने लगे, तो थोकदार ने रोक दिया—“मेरे को शक आता है। तेरे हाथ से ईंट के कितने पत्ते हैं, दानसींग ? ... और, मास्टर सैप, आपके हाथ में कितने हैं ? ... ”

फिर हिसाब लगाकर, थोकदार बोले—“गू कोट खाने की डर से, नाथू हौलदार ने ईंट का चौका उड़ा दिया है। ... जरा दिखाना इधर अपने पत्ते ... ”

“ये लो, तुम्हारे पत्ते ! ... ” नाथू हौलदार ने सारे पत्ते फाड़कर, चून-चून उड़ा दिए—“नाथू हौलदार की इनसलेट करते हो ? ... अरे, तुम लोग हो खुद बेमांटी का खेल खेलने वाले ... ” नाथू हौलदार ने पत्ता उड़ा दिया। ‘अरे, नाथू हौलदार को उड़ानी होगी, तो कोई बड़ी चीज उड़ाएगा। ... ’ कहकर, अपने बूट वाले पैर जोर से दुकान के पथरीटों पर पटककर, नाथू हौलदार तेजी से उठकर चल दिए।

रमौती ने उस दिन 'मनोती' मानी थी, कि अगर 'वां' रंगरूटी होफिस से 'दिस-मिस' हो के आ जाएँ.....

और अब यह मानती रही, कि काश, उनकी आदर-कुशल ही आ जाती। वह अक्सर ही गाय-बकरियाँ चराने धुरफाट (वन) गंगनाथ-की-धार जाती थी। घर से चलते समय एक-दो मुट्ठी चावल आँचल में डाल ले जाती थी, कि गंगनाथ जी के मंदिर में चढ़ाऊँगी। राह चलते-चलते, हजारी-आलूपोखरा-मेहल-जाई-चमेली, जिसके भी फूल हाथ लगते, बीन लेती।

आज भी उसने ऐसा ही किया, तो पीछे से साबुली खिलखिला उठी—

“चावल के दाने कम-कम चढ़ाया करो, भोजी ! कहते हैं, कि देवता के मंदिर में जितने अक्षत चढ़ते हैं, उतने ही दिन 'सुवा' (प्रीतम) को घर आने में लगते हैं। और फूल भी ज्यादा मत चढ़ाया करो, भोजी ! क्योंकि कहते हैं, 'सुवा' के नाम पर मंदिर में चढ़ाए फूलों की सुवास जहाँ-जहाँ 'सुवा' हो, वहाँ-वहाँ तक पहुँचती है और वह उस सुवास (गंध) को सूँघने में ही बेसुध रह जाता है और अपने आस-पास के सारे बन-बगीचों को टटोलता है... और भटक जाता है, जल्दी घर नहीं लौटता।”

“बड़ी चंट हो।” कहती, रमौती उठी और हजारी का फूल साबुली के सिर में रख दिया—“ननदी, तुम्हारा 'सुवा' कभी परदेश न जाए।...” और उसकी आँखें भर आईं और वह, पहले होले-होले, फिर तेज चलती—बहाने के लिए 'गोमती ले-ई 'काबरी फरक ई...' कहती—साबुली से दूर, एक ऊँचे टीले पर चली गई। वहाँ पहुँचकर, सिर के चाल की कोर से आँखें पोंछी और फिर पुकार लगाने लगी—“साबुली ननदी हो ऊ...”

साबुली दौड़ती आई और रमौती के गले में बाँहें डालकर, उसके कान में जोर से बोली “भौजी हो ऊँ तेरा खसम काँ छूँ...? ऊँ...ऊँ...ऊँ...!...” रमौती बेचारी क्या जाने, कि कहाँ हैं उसके ‘ऊँ’ ? हौलदार ज्याठजू कहते थे, कि—अलमोड़े के रँगरूटी हौफीस से ‘ओके-ओलरेंट’ होकर, देहरादून के या मेरठ के हेड-क्वाटर में चला जाएगा ।

अब रमौती क्या जाने, कि कहाँ हैं मेरठ-देहरादून ? ब्या न होने तक, अपना मँत चनोली देखा था और, वन-खेती के माध्यम से, दो-चार गाँव सिमखल्या, जोग्युड़-कुमौली, ककारचाटान और पानेतोली वगैरह देख लिए थे । ब्या के बाद, रास्ते में पलटकर, मँत की ओर देखते समय, एक भलक बाड़े-छीना की देख ली थी और सौरास आने के बाद, सौरास के अलावा, डुँगरी, बज्योली, सिराड़ और पेटशाल आदि गाँव ।...

सो बात चलाने के लिए, बोली—“ननदी, अभी तू दौड़ के आई थी न ? तेरे पाँवों के ये भाँभर ऐसे बजते हैं, ऐसे बजते हैं...”

“मोहनी दाज्यू को चिट्ठी लिख देना, कि ऐसे ही भाँभर तुम्हारे लिए भी लेते आएँ !...” साबुली बोली ।

“ननदी, तुम तो देश व्याही हो न ?”

“हाँ ।”

“एक बात पूछनी है ।”

“पूछ ।”

“किसी से मेरठ और देहरादून—दो देश-परदेशों का नाम सुना था मैंने । ऊँ...ऊँ...तुम्हारी रुदरपुर के तो आस-पास ही पड़ते होंगे ये दोनों मुलुक ?

“क्या, मोहनी दाज्यू वहीं गए होंगे पलटन में भरती होकर ?” साबुली खिलखिला उठी, तो रमौती फिर भागकर, सामने के दूसरे टीले पर जा पहुँची—‘ले-ती-ले, चनुली-ती-ई-ई...’

“बड़ा मोह आता है तुम पर, भौजी !” फिर करीब पहुँचकर, साबुली ने रमौती के घुटनों में सिर दे दिया था और रमौती उसके सिर में ‘डुँग’ मारने लगी थी । अपने दोनों अँगूठों के नखों को मिलाकर, ‘अँ’ करती हुई, वह

---

१. तेरा पति कहाँ है ?

साबुली के सिर में 'ठुँग' मारती, तो साबुली मिठास से कुनमुना-सी उठती—  
“जी रये, भोजी !”

रमौती ठुँग मारती रही, 'ले-ती-ई-चनुली-ई-ले-ई...' पुकारती रही ।

साबुली कहती रही—“तुम बड़ी प्यारी हो, भोजी ! तुम्हारा चलना, बोलना, शरमाना और ठुँग मारना—सब-कुछ बड़ा ही मोहिल है । जी करता है, बस, यहीं रम जाऊँ । भोजी, पहाड़ कितना प्यारा है ? दिगो...यह ठंडी-मीठी हवा, वो फ्लायट के पातों से नितरता, तुड़-तुड़ करता पानी और हवा के साथ उठती-बैठती यह मिट्टी और मोहक धुंध...और घिघारू-किरमड़ के पत्ते चबाती, अपने पाठों के लिए 'मीं...मीं...मीं...मीं' अलाती जाती ये बकरियाँ...और पात चबाते-चबाते ही, 'बो...बो' कुनमुनाते, अकारण ही ठेप-ठेप लड़ने वाले ये बकरे...ओह, भोजी, मुझ अभागिनी को परदेश क्यों ब्याहा होगा बोज्यू ने ? ओह, दिगो...भोजी...दिगो लाली ...”

साबुली रोने लगी । अरी पहाड़न, तेरा हिया कैसा, कि रुद्रपुर-जैसी जगह से छाती में बर्फ की पतें जमा लाई और पहाड़ की ठंडी हवा में उसे पिघला रही है ।...

देर तक दोनों गले मिल सिसकती रहीं ।

साबुली बोली—“भोजी, प्यार तो बस पहाड़ में भला लगता है । कभी 'सुवा' परदेश भी जाए, तो इस ऊँची गंगनाथ-की-धार से पहले गों की पगडंडी और फिर अलमोड़ा-बाड़ेछीना लैन की बड़ी सड़क में बड़ी देर तक दिखाई देता है ।...वो पेटशाल के परमरी इस्कूल के मोड़ तक...”

रमौती भी उसकी उठी हुई अँगुली की सीध में देखने लगी ।

“और, भोजी”, साबुली कहती रही—“पहाड़ के गाँव छोटे-छोटे, पहाड़ की सड़कें पगडंडी बहुत उबड़-खाबड़ और सँकरी, पहाड़ की धरती बहुत उतार-चढ़ाव की और पहाड़ के बन बड़े कँकरीले-पथरीले—पर यहाँ का प्यार बहुत बड़ा होता, भोजी !...बहुत बड़ा, सीधा और लम्बी उमर जीने-जिलाने वाला ।...तुम्हारी पहाड़ के लोग, भोजी, दिन-भर की मेहनत से थकके घर लौटते हैं, तो प्यार की बातें करते हैं और हमारी रुद्रपुर के बनिए दिन-भर

१. जीती रहो, भाभी ।

आराम करके घर आते हैं, तो सिर्फ पैसों की बात करते हैं। और मुझे आठवाँ लगा है, तो मेरा पेट देख, भोजी ! उनका पेट इससे भी दुगुना-तिगुना है।”

और साबुली खिलखिला उठी, पर, उसका कंठ-स्वर व्यथा से बोझिल था। नीचे थोकदार के घर-आंगन से फिर पुकार उठ रही थी—“साबुली वे ऊ...ओ साबुली...”

“मैं चलूँ, भोजी !” साबुली, सिर के बालों को ठीक करती हुई, बोली—“मेरे पिता जी के पितरों का पिंड मुझा रो रहा होगा। बोज्यू की अन्वार (छाया) तो उसमें जरा भी नहीं है। नानि इजा (छोटी माँ) कहाँ से ले आई है जाने...”

“चल, बड़ी दुष्ट लगती है। शरम न लगती, रे ननदी ?”

“थोड़ी-थोड़ी लगती है। सोचती हूँ, रुद्रपुर वालों का पिंड मेरी कोख में भीटलुक-टलुक करता है। किसी पहाड़ी से होता, तो कोख की जगह कलेजे से लगा के रखती।...”

“कैसी बातें करती है, रे ? शादी जिससे हो गई, तो उसका क्या देशी, क्या परदेशी। हट्ट !...”

“सो तो ठीक, री भोजी ! पर, क्या चाहे किसी देशी से हो, या पहाड़ी से—बनिए से न हो। सच...”

“क्यों, रे ?”

“वह औरत को भी एक लक्ष्मी की प्रतिमा समझता है। जब देखो, तब लक्ष्मी की ही रूखी-रूखी, लाल-लाल बहीखातों में लिखी बातें करता है।... इससे कभी जरा फुरसत मिली, तो जैसे बड़ी मजबूरी से, अपने पितरों का पिंड चलाने के लिए—औरत के पेट में भी ‘शुभ-लाभ’ लिख देता है।...”

और साबुली खिलखिला उठी।

रमौती भी।

जाते-जाते, साबुली बोली—“भोजी वे, मेरा दिल तो नहीं लगता देश...”

“किसी पहाड़ी को ठीक करले, रे !...” और, इतना बड़ा मजाक करने पर, रमौती खुद ही शरमा गई।

“तू मुई क्यों न हुई मरद, भौजी ? ऐसा ही कर लेती । इसको....” अपने पेट की ओर इशारा कर, साबुली बोली—“पनार की लहरों में बाहर निकलते ही बहाकर, पनार के छलछलाने पानी में खूब नहाकर, तुरुसे पिंड लेकर, यों कलेजे से लगा के रखती ।....” साबुली ने अपनी लम्बी लटी को छाती से लगा लिया ।

रमौती उसे देखती रह गई ।

नाथू होलदार के नाम 'सरकारी-आर्डर' आया था, कि 'छुट्टियाँ पूरी होते ही, पठानकोट की जगह, रुड़की चले जाओ।'।

दस-पाँच दिन ही रह गए थे। अबके न-जाने क्या लहर उठी आनसींग को ?

बोले—“बेटे होलदार, रुड़की से हरिद्वार एकदम नजीक पड़ता है। अब के ऐसा कर, ब्वारी को भी ले जा और धार ढलती छाया है, अपनी माँ को भी एक छपक अस्नान कराला गंगाज्यू के पवित्र जल में। ओम्.....हर..... हर गंगे-भागीरथी.....”

नाथू होलदार बोले—“बौज्यू, आप तो ऐसी बात करते हैं, कि जैसे रुड़की का मिलीटरी कंट्रोलमेंट नहीं हुआ, बगल के डुंगरी-बज्योली गों हो गए।.....पहली बात सुनिए, कि फेमिली साथ में ले जाने के सरकारी कायदे-कानून क्या हैं। नम्बर एक में, गवर्नमेंट को अप्लीकेशन लिखनी पड़ती है। नम्बर दो में, वह 'ओके—ओलरैट,' याने कि हस्ब-मामूल-कबूल, होके आजावे, तो फिर, नम्बर तीन में, रहने को क्वाटर और फेमिली लाने को रेलवी-वारण्ट कटाना पड़ता है।...तो ये हैं सब सरकारी कानून-कायदे। इसके अलावा, सिविल-लैफ तो वहाँ चलती नहीं। फेमिली वालों को समझाना पड़ता है, कि कौन-से टैम घर से बाहर निकलना और कितने टैम के अन्दर फिर अन्दर हो जाना। कौन-से टैम खाना पकाना और कौन-से टैम क्या करना। यह तो वहाँ चले नहीं, कि पीतल की घंटी (लुटिया) में पानी भरा और चल दिए कहीं जंगल में।...वहाँ तो, बौज्यू, 'फ्लैश-सिस्टम' टट्टी जाना होती है, जिसे 'लिटीरन-लेबोटेरी-यूरीनाल' कहते हैं। बस, हमारी वो दही-दूध

रखने की बड़ी अलमारी समझ लीजिए । ‘‘आपकी ऊँडलियों के लोग बिना साला-साँकल लगाए काम काज को चले जाते हैं, वहाँ लिटीरन में अन्दर से जंजीर चढ़ाके बैठना पड़ता है ।’’

सामने वाले की बोलती बंद कर देना तो कोई नाथू होलदार से सीखे । आज तक आनसींग महर की ना थी । गए तीन-चार बरस पहले की बात है, नाथू होलदार चंदरा होलदारन को फेमिली-क्वाटर में ले जाने का ‘प्लान’ बनाकर, रेलवी-वारण्ट के साथ घर लौटे थे । पर, आनसींग ने सी हीले-बहाने कर दिए और बोले, कि हम बुड़-बुड़ियों को घुमा ला इस रेलवी-वारण्ट से । चार धाम हो जाएँगे, तो तर जाएँगे ।

अब नाथू होलदार किन पत्थरों से सिर मारें, कि गोरखपुर के रेलवे-वारण्ट से काशी-पिरयाग और जगन्नाथ के धाम नहीं होते ।

सो, सोचना ही छोड़ दिया था, कि ‘फेमिली-क्वाटर’ मिलते भी हैं । बीच में एक बार अलमोड़ा गए, तो कचहरी में जाकर, गंगासींग अर्जीनबीस से अपने नाम पर, ऊँडलियों के पते से, एक रजिस्टरी खुद ही लिखा आए, कि ‘वेल होलदार नाथूसींग महर, ‘सनोफ’ आनसींग महर, फौर दी सेकिण्ड वरल्डोर—तुम्हारा फेमिली-क्वाटर-प्लानिंग और ऊँडलियों-टू-गोरखपुर रेलवी-वारण्ट कैंसल किया जाता है ।’’

नोटिस नाथू होलदार ने खुद लिखाया था । बीच में गंगासींग ने आपत्ति की थी, कि ‘अंग्रेजी अक्षर ठीक नहीं हैं, होलदार !’ और होलदार ने हाथ में लिखाई की अठन्नी थमा दी थी—‘‘पूरे बारा बरसों से अंग्रेजों की ही सरभिस में हैं, लिस्टन टू मी, मिस्टर गंगासींग !’’

और आज आनसींग को भी खबर पड़ी होगी, कि नाथू होलदार क्या है । दरअसल नाथू होलदार की तो शुरू से ही यह आदत रही है, कि हमेशा शक्कर के हाथ से मारना । नीचे-नीचे मुनडुब्बी तैरकर, नदी के पार हो जाना ।

अब उस दिन की ही बात कोई ले ले—‘कोटपीस’ के खेल में गुमानसींग थोकदार से झड़प हो गई थी । ‘‘पर, अब फिर ऐसी जमा ली है उनसे, नाथू होलदार ने, कि थोकदार के आँगन को ‘फील्ड ऑफ कोटपीस !’ खुद होलदार को कहना पड़ा । आँगन में अनाज भी, ‘कोटपीस’ के लिए जगह छोड़कर, बड़े जतन से डालना पड़ता ।

दल की दुकान में तो यह खोट भी थी, कि, अपनी 'पोजीशन' को बनाए रखने के लिए, 'चिलमसार' (सांभे की चिलम) की जगह केंचीमार सिगरेट फूँकनी पड़ती थी, कि दुकान की जगह ठहरी। चार-पाँच लोग बार-बार के आते-जाते रहते हैं। कल कोई कहीं यह न कहे, कि नाथू होलदार की नियत में भी कमचूसी (कंजूसी) आ गई है, चिलमसार की तमाकू में फूँक लगाकर टैम पास करने लग गए हैं।

वैसे इन जरा-सी तीर-पूर की बातों से नाथू होलदार का कुछ बनता-बिगड़ता या आता-जाता नहीं, पर, जरा बार-बार के चार गाँवों में 'नाथू होलदार—नाथू होलदार' नहीं हुई, कोई खास नामचीनी नहीं रही, तो क्या रुबाव रहा होलदारी का ? अरे, ऐसे जीने को तो पनार में सँकड़ों जात की मछलियाँ और कीड़े—और अपने ऊडलगो के सेलना वन में पचास जात के पंछी। चार आदमियों में चर्चा ही नहीं हो, ऐसे जीने पर नाथू होलदार अपना फौजी बूट मारते हैं।

वैसे नाथू होलदार को कोई उड़ोवा-फुकोवा नहीं समझे। सड़क देख के रफ़्तार कायम करना कोई उनसे सीखे। पानी के ऊपर जोर-जोर से छप्-छप् करके तैरने में हाथ-पाँव जल्दी फूल जाते हैं। नाथू होलदार को तैरना पड़े, मुनडुब्बी लगा जाएँ और, नीचे-ही-नीचे तैर के, पार पहुँचे हुए ही दिखाई दे।

याने, कि नाथू होलदार ने हमेशा खरा मिजाज रखा और जहाँ भी जरा-सी आव-भगत हुई, अलमोड़ा के सिलीमैन सैप की टाई समझ ले कोई, कि, बस, गले से लग गए।

सो, गुमानसीग थोकदार ने जब यह महसूस कर लिया, कि 'अगर रँग के लिए कोट-पीस' खेलनी हो तो नाथू होलदार की संगत में वैसे, बखत बिताने को तो, तेरह पत्ते कोई भी सँभाल लेगा।' तो, नाथू होलदार के लिए थोकदार गुमानसीग का मिट्टी-गोबर से लिपा आगन 'मिलीटरी-कैन्टीन का इसपोरटिंग-क्लब' हो गया।

यहाँ एक बचत यह थी, कि सिर्फ़ अपने गाँव के लोग-विरादर होते थे, सो चिलमसार की तमाकू छोड़कर, केंचीमार सिगरेट फूँकने की मजबूरी नहीं थी। फायदे कई थे। थोकदार के घर में भंडार भरपूर था। हाथ खींच के चलने की बात वहाँ थी नहीं। चहा की कितली चढ़ी ही रहती थी। वैसे तीनों

थोकदारनें तो, फसल का समय था, नाज-पानी बटोरने में जुटीं थीं, कि लाख बौलिया (मजदूर) लगे हैं, घर-घरनियों की हथेलियों से गुजरे बिना धनाज फलेगा नहीं ।

पर, साबुली मँत आई हुई थी । 'कोटपीस' का खेल जमाने को नाथू होलदार थे और खेलने वालों की आव-भगत के लिए, साबुली ।

यों थोकदार के आँगन में अड्डा जमाने के बाद, तो होलदार की छुट्टी और भी जल्दी पूरी हो गई ।

उधर साबुली की मुसराल से लाता लक्ष्मीनारायण अगरवाल की भी पत्नी आ पहुँची, कि 'कुशल-पत्नी लिखी लाला लक्ष्मीनारायण अगरवाल जी रुद्रपुर वालों के यहाँ से, जी ! उनकी सबको जंगोपाल बाँचना जी ! यह कुशल-पत्नी लिखना रुद्रपुर से, आपके जामाता लक्ष्मीनारायण जी की सास-ससुर को परनाम बार-बार बाँचने के साथ, खास कारण से इस वजह, कि जी, भगवान् मरजादा पुरखोत्तम श्री राम की कृपा से यहाँ सब मंगल-कल्याण से हैं और आप सबको सपरिवार जंगोपाल ब्रजवासी से चाहते हैं ।'

इतनी भूमिका के बाद कुशल-पत्नी में, रुद्रपुर की गर्मी कुछ कम हो जाने का जिक्र करते हुए—गर्मी कुछ कम हो जाने का जिक्र करना, साबुली को बुलाने के लिए था—वहाँ के हाल बाजार की मौजूदा दरे लिखी हुई थी, कि फलाँ-फलाँ चीजें आप अपने ट्रक से यहाँ पहुँचा दें, तो आमदनी अच्छी रहेगी । (दरअसल, यह साबुली को बुलाने का दूसरा बहाना था, कि आमदनी के लोभ से ट्रक यहाँ तक भेजेंगे, थोकदार, तो बेटी को भी जरूर उसी से भेज देंगे, कि अपने घर की गाड़ी होते हुए, टिकट लेके जाने-पहुँचाने की क्या जरूरत है ।)

अंत में लिखा था—“और श्री माताजी ने बड़े जतन से यह प्रार्थना जोग लिखवाई है, कि बहू को इसी महीने बीस-इक्कीस गते आश्विन तक यहाँ खयाल करके जरूर-जरूर पहुँचा देवे, जिससे कुल उजागर होने के दिनों में ठीक से सँभाल हो सके, जी ! श्री माताजी ने यह बिनती भी दोनों हाथ जोड़ के लिखाई, कि रुद्रपुर खास में इस समय एक सरकारी जच्चाखाना भी खुल गया है ।

**सं**योग कुछ ऐसा हुआ था, कि, हरसींग के पेड़ से गिर जाने के बाद, सरुली फिर थोकदार के ही घर लौट आई। और, चौथी अवस्था में ही सही, थोकदार गुमानसींग ने बेटे का मुँह देखा।

यह समय ऐसी खुशी का था, कि थोकदार ने अपनी छाती के बटन खोल दिए। इलाके भर में और बाहर जितने भी सगे विरादर थे, सबको न्योता जरूर। यह दूसरी बात है, कि खुद उनका जवाईं गंगासींग ही वहीं सुपे गाँव से दो कदम पर ऊडलगों नहीं आया, कि 'खास सौरज्यू का बेटा होता, तो जरूर आता।'।

थोकदार तो यह जानते हैं, कि मारने वाले के हाथ पकड़े जा सकते हैं, पर बकनेवाले की लपलपिया कोई कैसे थामे ?... वैसे, बाद में, यह भी खबर लग गई, कि हरसींग दूर के रिश्ते में गंगासींग का मामा लगता था।

तो, थोकदार ने दो पैसे का कार्ड 'पास पत्र मिले लछमीनरायण जी अगरवाले', के नाम भी डाल दिया, कि 'इस खुशी के मौके पर बेटा भी रहे, तो घर की शोभा बढ़ेगी।'।

यह सावन की बात है। चैत-बैसाख-जेठ की गर्मियों के दिन यहीं काट के, आषाढ़ में ही साबुली रुद्रपुर वापस गई थी। पर, लाला लक्ष्मीनरायण ने जब साबुली की आँखों के आँसुओं से लड़ने की कोशिश की, तो कामयाब नहीं हुए और अपनी माता जी के विरोध के बावजूद, कि 'इन पहाड़ वालों की रिश्तेदारी से तो, बस, श्री गोपाल बचावें। सुसरे महीने-महीने में तो इन मुँहों का कोई-न-कोई त्योहार आ जावे है। त्योहारों से बचो, तो आषा

बहू के भैया के पाँवों में सुसरी रस्मी डालनी है, तो कलबहू की मैया को लल्ला ! अरी देया, जब इन पहाड़ियों के घर बिना बेटी के दिया-बत्ती जले ही ना है सुसरी, तो इत्ती दूर ब्याहते काहे को हैं, मुई बेटी को ? परसों तो सुसरी गर्मियों के दिन काटके लौटी है बहू । अरे मैं पूछू हूँ, ऐसा क्या वह पहाड़ ही इस सारी दुनिया से अलग बसा हुआ है ? यहाँ तो फागुन-चैत-बैसाख याने जेठ तक निकल गया । श्री गोपाल साक्षी होवें, जो पंखा भी हाथ में लिया हो । ...इन मुसटंडी जवानों को मुई गरमी सताती है ! अरे, जवानों की बोटी तो जेठ की धूप से भी गरम होवे है । ...यों मैंने लाख कही बेटे लछमीनारायण से, कि लल्ला, बेजाने-पहचाने मुलक की चीज घर में मत डालो । ...पर, जब से वो नहीं रहे, इस घर का कुत्ता भी क्या मेरे कहे से दुम हिलावे है ?'—लाला लक्ष्मी नारायण साबुली को अलमोड़ा पहुँचा गए थे ।

और अब पत्र आया था, बुलावे का, तो भेजना ही था । थोकदार गुमानसींग का छोटा भाई अलमोड़ा ही रहता था और वह ट्रक को चला भी रहा था, किराए पर लगा भी रहा था । दो शादियाँ की थीं, एक भी नहीं रही, तो अब ट्रक को तेज रफ्तार से चला रहा था । वैसे थोकदार तीसरी भो कर देते, जरूरत पड़ ही जाती, तो चौथी भी । पर, बीरसींग खुद ही हठ पकड़ के बैठा था, कि घर-गिरस्ती जितनी होनी थी, हो चुकी ।

थोकदार ने उसको जबाब भिजवा दिया था, कि फलाने दिन ट्रक को 'रिजरब' रखना, साबुली को सौरास पहुँचाना है । लाला लक्ष्मीनारायण के कहे मुताबिक, धी, खल, मिर्ची और सोहागा भी खरीद के रख लिया था ।

साबुली को उन्होंने कहा—“चेली गाँववालों से भेंट-घाट मिलाप आज ही कर लेना । कल सबेरे ही यहाँ से चलना है । बिरग्रा ट्रक रिजरब करके बैठा रहेगा ।”

परम्परागत-रूप से सारे पड़ोसियों को भेंट लेने के पश्चात्, साबुली रमौती के पास गई—“आज जा रही हूँ बैंगीं, जाने अब कब भेंट हो ?” और लगी रमौती के गले में बाँहें डालकर रिरियाने ।

आज पहली बार साबुली ने रमौती को 'भौजी' के बदले बहन कहकर सम्बोधित किया था। रमौती उसके साथ बहुत हिल चली थी। जाने की बात से, अटपटा-सी गई। और तो कुछ सूझा नहीं, खुद भी रोने लगी।

मन की धुक-धुक जरा थमी, तो बोली—“ननदी !...”

“‘दीदी’ कहाकर...” साबुली ने टोक दिया—“रमौ, तू एकदम छोटा बहन-सी लगती है मुझे, री !” और उसने रमौती को एकदम कलेजे से लगा लिया।

रमौती, अपनी सोहबत-संगत के बीते-दिनों का हवाला देते हुए, बोली—  
“नन...दिदी, कैसे कटेंगे, रे, तेरे बिना पहाड़ के ये बड़े-बड़े दिन ? वन-खेत पीछे-पीछे ‘भौजी’...भौजी करता कौन दौड़ेगा, रे ननदी ? गंगनाथ की ऊँची धार में...”

“मोहनसींग को आने दे, छुट्टियों में। दिन-रात सब बिना धार की दातुली से कटने लगेंगे।”

“हट्ट रे ! चंट हो तुम। रुदरपुर जाकर, बहुत बाटुली (याद की हिचकी) लगाओगी।...”

“एक बात।”

“कह।”

“सुन, आज तक...”

“हाँ, रे, कह ना ?”

“तो सुन, आज तक तो मैं तुझे पैलाग कहती आई हूँ। आज...आज तू मुझे कह देगी ? बड़ी भली होगी मेरी बैणी।”

“मेरे पैलाग कहने से तुझे भला लगता हो, नन...दिदी रे, तो ये ले...” कहकर, रमौती ने साबुली के पाँव छू लिए।

“तेरे बेटों से ऊडलगों भर जाए, बैणी !” कहकर, कढ़ाई में भुन रहे धानों-सी खिलखिलाती, साबुली चली गई।

रमौती भरी-भरी आँखों उस चपला को हेरती रह गयी।

साबुली के लिए शाक-पूरियाँ रात को ही बन गईं। थोकदार ने अपने हाथों से एक अँगोछे में सामल बाँधा। फिर जरा-सा उनका मन भर आया। हर बार इस बेटी को विदा ही कर देना पड़ता है।

यों बेटी तो पराए घर की पुरूखों से चली आई है। अपनी गाँठ से गई, तो समझो, एक ऋण उतरा। पर, बेटी को जब विदा करने का समय आता है, तो न जाने क्यों ऐसा महसूस होता है, कि अरे हमने ऋण कहाँ चुकाया ? हम तो ठगे गए। हमारी तो गाँठ चली गई।

तब ये घने-काले बादल ऊँचे पहाड़ी टीलों से आकर चिपक जाते हैं, और पनार का पानी बढ़ जाता है।

सहमा, थोकदार को बीते-दिनों की सुधि आई। साबुली का हाथ माँगने को बड़े-बड़े घरों के लोग आए थे, पर थोकदार ने व्याहा उमे लाला लक्ष्मी नारायण के। थोकदार से सबका मन कड़ुवा हो गया।

इस अप्रत्याशित-विवाह की पृष्ठभूमि इतनी-सी रही, कि एक तो लाला लक्ष्मीनारायण से ही थोकदार ने दूक खरीदा था, जब वो काठगोदाम में आढ़तिए थे। थोकदार ने सोचा, जो आदमी दो-दो दूको को और आढ़ती की इतनी बड़ी दुकान को सँभाले हुए है, उमे बेटी देने में 'ना' कौन मूर्ख करेगा ?

अस्तु, लाला लक्ष्मीनारायण ने जब काठगोदाम बस गए दिगोली के गगनचन्द्र पंडे से, जो थोकदार के पुरोहित केशोचन्द्र के चचेरे भाई लगते थे, थोकदार से बात चलाई, तो थोकदार ना न कर सके। गगनचन्द्र ने भी डेढ़ घंटा विचार करने में लगाकर, कहा था—“बस, जजमान, बेटी के लिए यह विवाह-स्थान तो जन्म-जन्मान्तरों का है। लक्ष्मीनारायण नाम भी इसी संयोग से पड़ा है। याने अभी तो आप सिर्फ नारायण ही समझिए अपने जवाई को, लक्ष्मी आपके घर जन्मी है, उमे यह घर बसाना है।...साबुली नाम्नी, कन्या कुंभ राशि, भारद्वाज गोत्रोत्पन्नो...बस, भीम—चन्द्र...गुरु...शुक्र सारे मंगलग्रह एक विवाह-स्थान पर पड़े हैं। इस घर में लड़की साक्षात् लक्ष्मी बनेगी और बेटी-पोंनों की गिनती करना कठिन होगा।”

सो, थोकदार ने ठोक-बजाके घर-बर देखा था।

पर, साबुली जब-जब मंत आई, तो गुमानसीग थोकदार ने देखा है, वह सुख से नहीं रहती है।

खैर, बेटी के दुःख-सुख की तह में जाने से अब क्या होना है ? काठ की हाँडी है, बार-बार थोड़े चढ़ती है चूल्हे पर?

अबके साल तक थोकदार को कुछ ज्ञात न था। बेटी सिर-पाँव गहनों से लदकर आती थी। देह भी खिली रहती। थोकदार को सुख था। अबके सरुली ने ही उनके कान में बात डाली थी—“आज वन से बुलाने गई थी। साबू हौलदार की बहू रमौती से कह रही थी, कि ‘मेरा आठवाँ चलता है, पर मेरे से बड़ा पेट लाला जी का है।’...लाला खुद तो कई वर्षों से यहाँ आए नहीं। ऐसा ही है, तो बेटी को खसम का सुख तो क्या मिलता होगा ?...” कहकर, सरुली शरमाकर, चली गई थी।

थोकदार दुखी हो गए थे।

अँ...अँ...ये तो सब जैसी ईश्वर की मर्जी के मुताबिक दुनिया चलती रहती है।

थोकदार उठे, कि चलूँ, नाथू हौलदार को बुला लाऊँ। रात जल्दी कटेगी।

आनसींग के घर के आँगन पहुँचे ही थे, कि घी जलने की सुगन्ध से नाक भर गई। देखा, नाथू हौलदार बैठे-बैठे अपनी बूट-पट्टी चमका रहे थे, पालिश लगाकर।

“कहो, हौलदार भतीज ?” थोकदार ने आँगन से ही आवाज दी।

“ओ हो...आओ...आओ, थोकदार ज्यू !” हौलदार ने बूटों को, एक बार आइने की तरह देखकर, एक तरफ रख दिया और हौलदारन से बोले—“हैं वे, थोकदार ज्यू आए हैं। एक चिलम टेस्टदार तमाकू की भरदे। चहा की कितली चढ़ा दे। देख, जरा कोशिश-इंतजाम से बनाना। पत्ती बुरकबौंड औरेंज पीको हैं, कोयलों में पतीली रखके भून लेना, तब जाके चहा बरोबर खुशबू मारेगी, और...”

“ठैर, भतीज,” थोकदार बोले—“ब्वारी पूरियाँ उतार रही है, उतारने दे। मैं तो तुम्हें बुलाने आया था, कि चार हाथ ‘कोटपीस’ की खेल लेंगे, बखत बिलम जाएगा। तमाकू अभी-अभी पी है, चहा चढ़ाने को साबुली को कह आया हूँ।”

थोड़ी देर में ही थोकदार की चाख (बैठक) से ‘पान तुरुप’—‘हुकुम तुरुप’ और ‘मार एक्का’ की आवाजें आने लगीं।

एक बार पत्ते बँट रहे थे, तो तेरह पत्ते बँटने तक के समय को बिताने के लिए, थोकदार ने हौलदार से पूछा—“क्यों, नाथू भतीज, आज कढ़ाई चढ़ी है तुम्हारे यहाँ, किसका सामल-सरंजाम तैयार हो रहा है ? रमौती मँत जा रही है क्या ?”

‘नहीं, थोकदार ज्यू, कल मैं वापस छुट्टी काटके अपनी मिलीटरी ड्यूटी पर जा रहा हूँ। रास्ते का सामल<sup>१</sup> याने डिनर बन रहा है। अलमोड़ा-काठगोदाम के बीच में मोटर तो पच्चीस जगह खड़ी होती है, पर खाने का ठिकाना एक गरमपानी इस्टेशन में है—” नाथू हौलदार अपने पत्ते सँभालते हुए, बोला—“वहाँ खाना एक रुपया फी खुराक बैठता है, मगर फूड सड़िला मिलता है।”

“पर, तू तो कहता था परसों, कि अभी तेरी छुट्टी को पनर-बीस दिन बाकी हैं ?”

“सरकारी छुट्टी को सरकते हुए क्या समय लगता है, थोकदारज्यू ? जगह तक पठानकोट से सरकाकर, रुड़की कर दी है। खास अरजेंट रजिस्टरी से लेटर परसों आया था उसमें ‘छुट्टी कैंसल फिफटीन डे’ कर दिया है।... दरसल, सरकार का काम ही सरकाने का है।”

“कल तो अपना ठेला भी जाएगा। काठगोदाम होते हुए, रुद्रपुर तक। साबुली बेटी सोरास जा रही है। अलमोड़े तक मैं पहुँचा आऊँगा। वहाँ से बिरुवा के साथ जाएगी। जा ही रहा है, तो तू भी चले जाना अपने ही टिरक में ? किराया बच जाएगा। घर की गाड़ी है।...”

‘घर की गाड़ी है’ कहने के बाद, थोकदार ने चिलम को गुड़-गुड़-गुड़ जोर से गुड़गुड़ा दिया और पत्ते सँभालकर, अपने जोड़ीदार तेजसीग से पूछने लगे—“क्यों तेजुवा, तुरुप क्या बोला, चीड़ ?”

तेजसीग ने इशारा पकड़ लिया और तुरुप चाल कर दी। एक-एक करके छः हाथ बन गए, तो थोकदार ने ‘कोट’ कहते हुए पान का बादशाह फेंका। पान का इक्का तेजसीग पहले ही खा चुके थे।

पर, थोकदार का ‘कोट’ हौलदार ने काट दिया। तुरुप चाल में झड़ने से बच गई, चीड़ की बेगम को पाने के बादशाह पर घर दिया।

<sup>१</sup> सम्बल का अपभ्रंश।

“नाथू होलदार ने पान का पत्ता भड़ा लिया होगा।” थोकदार चिल्ला उठे—“और सब कामों में तू ईमानदार है, नाथू भतीज, पर कोटपीस के खेल में बेमांटी करने की आदत पड़ गई है।”

फिर सहसा उनको ध्यान आया, कहीं दल की दुकान की तरह बिगड़ न उठे—नाथू होलदार ?

पर, नाथू होलदार ने, सिर्फ मूँछों को फरफरा देनेवाली हँसी के साथ, अपने पत्ते दरी पर फँसा दिए—“चश्मा लगाके देख लो, थोकदारज्यू ! नाथू होलदार अगर कभी किसी पत्ते को काटता है, तो इंसाफ के साथ। यह नहीं, कि बादशा को दुगगी, तिगगी से काटकर, बादशा की इनसलेट कर दी। हम लोग मिलीटरी के कायदे-कानून से चलते हैं, कि अपने बादशा की जै बोलो। ‘लॉग लैफ़ अबर किंग’ बोलो। तो, बेगम से काटा। और...”

“बोज्यू, चहा के गिलाम लाई हूँ”, कहती साबुली आ पहुँची, पर नाथू होलदार ने अपना वाक्य पूरा कर ही दिया—“और बिलेत (बिलायत) में जहाँ से, कि श्रील ओभर इण्डिया के ऊपर सरकारी कानून और सिक्का चलता है—बादशा से बेगम को ऊँचा माना गया है।...”

और नाथू होलदार ने बादशा तो काट ही दिया था, सो ‘कोट’ बच गया और पीस नाथू होलदार के साथी खड़गमींग ने फिर से सँभाली और पत्ते बाँटने लगा, तो नाथू होलदार, चहा की घुटुक (घूँट) मारते हुए, बोले—“बस, लाख कहो, थोकदारज्यू ! चहा तो खुशबू घुंरुकबौंड की ही छोड़ती है।... और, यार खड़कसींग, तू ‘कोटपीस’ खेलने को आता है, तो एकाध सेर नोनी भी साथ में ले आया कर।... थूक लगा-लगाके पत्ते बाँटता है, तो भी जल्दी सरफते नहीं और सबके हाथ भी जूठे होते हैं।...”

टुलुक-टुल-टुलुक...

टुलुक-टुल-टुलुक...

रमोती के आँसू गिरते जा रहे थे। पनार-किनारे घुटनों-घुटनों जल में।

और...

और दायरे बनते जा रहे थे। फैलते जा रहे थे, सिमटते जा रहे थे। रमोती को उन दिनों की स्मृतियाँ, पनार के घुटनों-घुटनों पारदर्शी जल में, थामे-सँभाले रहीं, जिन दिनों उसकी छोटी-सी—किन्तु, छोटी-सी मछली की तरह फुदकने और डूबने-उतराने वाली भी—जिन्दगी के दायरे यों ही सिमट रहे थे।

ओह, दिगो

जिन्दगी के आखिरी सिरे पर पहुँचने के बाद ही, जिन्दगी गुरु से याद आती है।...और एक अनिवार मोह जिन्दगी के भूलते कंधों को थामकर, झुककर देता है—रमो...रमो...रमो...

‘रमोती रमोती महर किसका नाम है?’ चिट्ठीरसैन पीताम्बर पूछ रहा था।

रमोती अपना पटाँगण (आँगन) झाड़ रही थी।

घर में और कोई था नहीं। आनसींग खेतों की तरफ चले गए थे और होलदारन अपनी दोतलिया चप्पलें पहन पानी भरने नौल चली गई थी। नौल दो फाँग पर था और सीधा रास्ता था। सो, पानी भरने जाते में ही सँझिल पहनने का, औरों को दिखाने का शौक पूरा होता था। खेतों में या वन पहनने का तो सवाल ही नहीं उठता। लाख भले लगते हैं पाँवों में—पर, हैं तो देश

की मंदानी सड़कों में चलनेवाली चीजें ? पहाड़ में तो इनकी, बस, देखने की ही शोभा है। पहनने में तो ये है, कि इधर जरा फिसले और उधर हड्डी-पसलियों का तमाशा। चार नजरें देखती हों, तो फजीता ऊपर से, कि 'सिर्फ मिजात रखने से क्या होता है ? ठसके के साथ में सहर सलीका भी तो चाहिए। ऐसे तो, ऐने (शीशे) में मुख देखने का शौक बानरों को भी होता है। ...'

सो, चारों तरफ को देख के चलने का जमाना है। अलबत्ता हीलदारन ने अब नौल तक जाने और वहाँ से पानी लेकर लौटने तक का अभ्यास कर लिया है। सँग-सोबत की औरतें हसरत की नजरों से देखती रह जाती हैं। खास करके थोकदार की सरुली—“अरी, सिर्फ धन-दौलत से ही क्या होता है ? सँगी तो मौज-मिजात वह करे, जिसका खसम रँगाली तबियत रखता हो। ...”

अब यह सरुली क्या जाने, कि इन दो-तलिया चप्पलों को पहनकर, पानी भर लाने के अभ्यास में हीलदारन चार-पाँच कनिस्तर फोड़ चुकी है।

रमौती ने, सिर का चाल ठीक करके, हौले से जवाब दिया—“पानेज्यू, पैलाग !”

‘सौभाग्यवती भव’ कहते-कहते, ‘अष्टपुत्रवती भव’ कह गया पीताम्बर। रमौती लजा गई।

बोली—“पानेज्यू, रमौती तो मेरा ही नाम है, पर शिरीमती किसका नाम है, मैं नहीं जानती। ...”

पीताम्बर को हँसी आ गई—“अरे, श्रीमती तो मोहनदा की है तू। विवाहिता औरतों के पास-पत्र के आगे ‘श्रीमती फलाना’ लिखा रहता है। ले, अपनी चिट्ठी।”

रमौती ने धड़कते मन और काँपते हाथों से चिट्ठी थमा ली, तो उसे लगा, कि चिट्ठी के अन्दर से मोहनसींग उसके कंधों पर हाथ रख रहा है—रमौ...रमौ...रमौ...

और चिट्ठी उसके हाथों से छूटती-छूटती बची।

इससे पहले भी, एक महीना हुए, मोहनसींग की चिट्ठी आ चुकी थी। उस चिट्ठी में, जिसको उसने ‘पास पत्र मिल मेरे पिताजी सिरा आनसींग महर’ करके

आनसींग के नाम भेजा था, लिखा था—“सस्ती शिरी मरबोपमा पूज्य बौज्यू के चरगों में उनके चरगतल आशीष पावे बेटे मोहनसींग की हाथ जोड़ी पांव पड़ी पैलागन कबूल हो । ऐमे ही सस्ती शिरी माता जी से भी उनका बेटा मोहनसींग चरग-तल आशीष पावे और ऐसे ही होलदार दाज्यू और होलदारन भोजी को भी बार-बार पैलागन पहुँचे, उनके देवर मोहनसींग की । आगे हाल समाचार यहाँ का यह है, कि घर से आते समय मैं चितई के गोल्ल देवता के मंदिर में हाथ जोड़ आया था, भर्ती होने से पहले कुमायूँ राइफल नम्बर दू, सेक्सन नारदर्न इंडिया में, कि अगर खुदानखस्ता ईश्वर के नेक रखने से मैं पलटन की भर्ती में कामयाब फतह हासिल हो गया, तो आपके मंदिर में दो बकरे जरूर ठोकूँगा । सो आप ऐसा करना, कि पुरोहित केशोचन्द्र पानेज्यू को एक दिन, अच्छा वार देख कर, चितई के गोल्ल मंदिर में भेज देवें । एक नारियल जटावाली, सवागज लाल बस्तुर, सवा छटाँक बतासे, एक पत्ता पान का, एक दाना पूरा पूर्विया सुपारी का, सवा तोला दर्शाँग धूप, सवा सेर पकवान—ये सब सामान होवें । केशोचन्द्र ज्यू से मेरे दोनों हाथ जोड़ के पैलागन कहकर, कल्याणमस्तु लेते हुए, गोल्ल देवता के मंदिर में धूप-बाती करवा देवें । मंदिर में चढ़ाने के लिए अपने नाम की घंटी ‘रजिस्टर पागसल’ में भेजी । ठीक तारीख को दसखत करके अपने नाम से पोस्टमैन पीताम्बर से ले लेवें और मेरे दोनों हाथ जोड़कर, पैलागन कह देवें, कि मोहनसींग कुमायूँ राइफल नम्बर दू में आदर-कुशल पूर्वक है ।”

अंत में लिखा था—“बाकी क्या लिखूँ, आप खुद समझदार हैं । यहां के हाल-समाचार सामान्य हैं । इस समय मुझे पठानकोट छावनी में रेंगरूटी की ट्रेनिंग मिल रही है, जी ! मौसम यहाँ का अच्छा है । गाँव वालों को मेरी यथा योग कह देवें । थोकदार का, तेजू का, दनदा, रतनदा, आदि सबको हाथ जोड़ी पैलागन-राम-राम कह देवें । खेती-पाती भगवान् की दया से कैसी है ? धान-महुआ पकता छोड़ आया था । बखत बीत गया । अब तो ग्यूँजी को बाल फूटने लगी होगी ? गंगनाथ-की-घार की तरफ वाली बाड़ में अब के साल घिगारू के काने (कँटीले भाड़) काटकर लगा देवें, जिससे जानवरों के नुकसान से बचत होवे । कारण चित्त ठीक न रहने के और टरेनिंग की

जिम्मेदारी के पास-पत्र लिखने में सात महीने लग गए। असोज, कातिक, भंसीर, पूस, माघ, फागुन, चैत—बैसाख आ गया। घर की कुशल-पत्री बार-बार देखते पत्र देते रहें। पंचास रुपए अलग रजिस्टरी मनीओडर से भेज रहा हूँ। दसखत करके ले लेवें। रुपये भरपाए करके, रसीद वापिस भेज देवें, मेरे पते से पासपत्र करके। मेरा पता—कुमायूँ राइफिल नम्बर टू, सिपौय नम्बर थरटी टू, फिफटी सेवन, पठानकोट मिलीटरी कनटोनमेन्ट, क्वाटर नम्बर नैन, पास पत्र मिले जल्द-से-जल्द ठाकुर मोहनसींग महर को। ‘... बाकी आप खुद समझदार हैं। होलदार दाज्यू की कोई कुशल-पत्री नहीं आई। पार घर जमनसींग दाज्यू को भी मप भौजी के मेरी पैलागन पहुँचा देवें, कि अब हम दोनों भाइयों के पलटन में होने से घर के हाल-समाचार बरोबर लेके देख-भाल करते रहें। बाकी क्या लिखूँ, आप खुद समझदार हैं। छुट्टी मिलने पर घर आऊँगा। घर में बाकी सबको भी मेरी ओर से याद कर देवें। चरणतल-आशीष बार-बार पावे आपका बेटा मोहनसींग महर, सिपौय नम्बर थरटी थिरी, फिफटी सैवन, क्वाटर नम्बर नैन, कुमायूँ राइफिल नम्बर टू, नौरदर्न इंडिया सेक्सन, बिरटिश इंडिया पठानकोट। ‘...हाँ, बाकी लिखना तो पासपत्र आपका मिल जाने के बाद, लेकिन घर के गंगनाथज्यू के मंदिर में भी केशोचन्द्र पानेज्यू से धूप-वाती करवा देवें और दक्षिणा अच्छी मेरे मन्यो-डर में से दे देवें। जरूर-जरूर। आपका चरणतल-आशीष पावे बेटा मोहनसींग महर, सिपौय नम्बर थरटी थिरी, फिफटी सेवन। ‘...’

आनसींग ने पूरा पत्र पढ़ के सबको सुनाया था। और खुशी की ऐसी चिनगारियाँ उनकी आँखों से छिटक रही थी, कि तम्बाकू पीते-पीते हुक्के के कोयले बुझ जाने की भी उन्हें खबर नहीं मिली।

‘घर में बाकी सबको भी मेरी ओर से याद कर देवें। ‘...’ रमौती शरम और खुशी से गदरा गई थी—यह पंगित (पंक्ति) तो मेरे ही लिए लिखी होगी ?

और आज मोहन सींग ने खुद उसको चिट्ठी लिखी है !

रमौती के कर्ण-कुहरों को ‘रमौ-रमौ’ कुनकुनाती चली गई।

पीताम्बर जाने को तैयार हुआ, तो रमौती ने खरगोश-जैसी चीकोर आँखें कीं। फिर होले-होले बोली—“ऊँ तो तुम्हारे मितुर (मित्र) दे न ?

चिट्ठी में और क्या लिखा होगा ? यों ही तो घर की साधारण आदर-कुशल लिखी होगी ?”

“तुमको पढ़ना नहीं आता ?”

“नू...न ।”

“मैं पढ़ के सुना दूँ ?”

“हूँ...अँ ? हूँ ।” रमोती सिर का चाल दाँतों तक ले आई—“लेकिन, पाने ज्यू, जरा जल्दी और जरा होले ।...”

टलुक-टल-टलुक...

रमोती के आँसू...

छलुक-छल-छलक...

पनार का पारदर्शी-जल...

दिगो ।...

पानी के दायरों की पंगितों में लिखा है—“सस्ती सिरि सरबोपमा, मेरी रमो अच्छी-भली रहना । दशा मेरी उसी दिन रूठ गई, क्योंकि लाम में भरती हो गया । बखत का फेर क-ख ग-घ-ङ...की बारखड़ी-सा याद रह गया है । जब घर से निकला था, चौमास था । पनार में कमर-कमर पानी चढ़ आया था और अब बैशाख लग गया है । पनार का पानी घुटनों से उतर गया होगा । मगर, मेरा मन हमेशा तेरी याद में गहरे ताल की मछली-सा दूबा रहता है ।

जब घर से निकला था, तेरी याद को मेरे मन में चिड़िया के अंडे के बरोबर समझ ले । मन मेरा पापी धोंसला बन गया । याद तेरी भली अंडे से चिड़िया बन गई । मेरे सारे तन-मन में चूँ...चूँ करती उड़ती है और जब सारी बटालन घोरार (खरटे भरना) करती रहती है, मैं बैशाख की इन अनियारी-उजियारी रातों में बेचैन ‘रमो...रमो’ पुकारता रहता हूँ ।

मेरी प्यारी, चार आँखर खत लिखना । जरिये इसके, मन की व्यथा का बोझ हलका करना । बरमाजी ने बिद्या भी इसलिए बनाई । पेटशाल के परे-मरी स्कूल में दर्जा दो-तीन तक पढ़ा था । पीताम्बर पोस्टमैन भी—शायद, वही यह चिट्ठी तुम्हें दे—मेरे ही साथ पढ़ता था । मैं दर्जा दो-तीन पास

---

१. संस्कृति-जन्य उच्छ्वास-भरा एक शब्द, जो विद्रोह की व्यथा को व्यक्त करता है ।

होके भी, घर हल जोतने, गाय-भेंस घराने के कामों के लिए खींच लिया गया। पितुवा फेल होकर भी आगे की पढ़ाई मिडिल इस्कूल तक बरोबर करता रहा।...

तो, मेरे चार बातों का लिखना इतना, कि जरिए पासपत्र के तुमसे दिल की लगी को कहना। यह तो जैसी लगी या मेरे दिल को या उसी गोहल देवता को मालूम। चोट ऐसे जोर की लगी है कलेजे में, कि धाव दूँढता हूँ, मिलता नहीं है।

रमौ मेरी, प्यारी, तू क्या जाने, कि मैं किस दिन के इंतजार में था? बाकी खोल के क्या लिखना? समझदार को इशारे काफी होते हैं। लोगों की शादी होती है, इच्छा मन की मनोपूरण करते हैं। मेरे पूरब-जनम में खोट रही, भौरा-मन पाया। ललक लगाई। कली बंद पड़ी बगीचे में। चक्कर काटके कहाँ पहुँचा, परदेश?

प्यारी, जा तन लागी वा जानी और न जानी कोई। मन में आग लगी, किसने देखी? सब देखी बन की आग। लकड़ी जली, फिर कोयला भई, फिर जली, भई राख। मैं बैरी ऐसा जला न कोयला भई, न राख।...

खैर, मेरी सुवा, धीरज घर के जीना चार दिन का इसी आसरे, कि 'जा रे चिट्ठी, जल्दी जइयो। बेगि पहुँचियो मेरी सुवा के पास, कि पल-छिन तड़पे मन मेरो, भई सारी रैन उदास।'... कागद काटो पतँग बनाई, उड़ाई प्राण-पिरिया के सास—मिट्टी तो यहाँ रही, पतँग उड़ी आकाश।'...

प्यारी रमौ, बाकी चिट्ठी-पत्री में क्या लिखना? लिखना थोड़ा, समझना बहुत। आगे समाचार यहाँ के ये हैं, कि हाल में टरेनिंग रँगरूटी है। 'बरलड वार' चल रही है। शायद, कहीं 'बेटिल' में 'किक मारच' होना पड़े।

खैर, आगे जैसी ईश्वर की मरजी, वैसे होना। करम-रेख किसने टारी? होनहार होके रही, लाख करी किन कोय। होलदार दाज्यू ने लाम में भरती करवा दिया। ऊडलगों से पठानकोट पहुँच गया। लाम हीपीसर न जाने कहाँ पहुँचाएगा? खैर मनानी बाकी रहती जिन्दगी के छुट्टियों में एकाध साल में ही घर पहुँचूँगा। देखूँगा मेरी प्यारी तू कितनी बड़ी हो गई है?

प्यारी, देख, लम्बी-निर्मली-रातों में मुझे याद करके सिरान (सिरहाने) रख लेना। और बाकी क्या लिखना? नदी के किनारे रो खड़ा, घोबे कपड़ा

घोए । तुम ऊडगलों और, प्यारी, हम पठानकोट में, दिगौ, भेंट कहाँ से होए ?

याद करना, एक दिन तुमने गंगनाथ की धार से लाकर, बुर्रेश का लाल फूल मुझे दिया था । खुश रहो, आबाद रहो, मेरी प्यारी ! तुम्हारे बुर्रेश कितने फूले हैं ?

दर्जि हात टुटिजान, टुटिगे बटन ।  
रात-रात-दिन-दिना मैं तेरी रटन ।  
में कूँछियो रति-भरी, भँछो तन-मन ।  
आज रात मैले, सुवा, तु देखी सपन<sup>१</sup> ।

फूल तुम्हारा बुर्रेश का  
मोहन सीग महर  
सिपौन नंबर थरटी थिरी, फिफटी सेभन ।”

०

०

०

ओह, टुलुक-टुल-टुलुक...

चिट्ठी सुनते-सुनते क्या हो गई थी रमौती ? कहाँ चली गई थी तू रमौती ? हाथ से छूटी सुई-सी, बिन धागे की सुई-सी...खो गई, रे ?

रमौती को ऐसा लगता था, कि पीताम्बर चिट्ठी की एक पंक्ति पढ़ता है, और तभी, मोहनसींग चिट्ठी के अन्दर से ‘रमौ...रमौ’ पुकारता है । रमौती मन-ही-मन ज्यादा पक गए टमाटर-सो फूट रही थी—“हँ हो, तुम इतना प्यार करते थे मुझे ?”

पीताम्बर पाने बोला था—“इस तरफ तो इतना ही लिखा है । दूसरी तरफ लिखा है—‘मेरी प्यारी, चार आँखर विद्या पापी पहाड़ में औरतों के भाग में नहीं लिखी । तुम्हारा दोष क्या, विधना जो करी । तो, चिट्ठी पढ़ना तो तुमको आएगा नहीं ? मगर, किसी दूसरे को दिखाना मत ।...सीधे थोकदार की चेली साबुली के पास ले जाना । उसीसे मेरी विधा के ये लिखे चार

१. दर्जी के हाथ टूट जायें, ऐसे कच्चे बटन लगाए कि टूट गए । दिन-रात मैं तुम्हें याद करता रहता हूँ । मैं कहता था (यह बैचेनी) रत्तो-भर है, पर यह तो सारे तन-मन में व्याप गई है । प्रिय आज रात तुम्हें मैंने सपने में देखा है ।

आखिर, समझने को बहुत बँचवा लेना । अच्छा, अब बाकी लिखना फिर कभी । थोड़ी देर में ड्यूटी जमादार आवाज मारेगा । तुम्हारा सुवा, मोहनिया ।... और पता नीचे लिखा' नीचे उसने अपना पता लिख रखा है । कभी चिट्ठी लिखानी होगी, मुझसे लिखवा लेना । मेरा तो वह दोस्त था । इस चिट्ठी में उसने मेरा जिकर भी किया है ।...साबुली तो कभी की सौरास चली गई । आगे भी पास-पत्र मुझसे ही पढ़वा लेना । मेरी तो तुम भीजी खगती हो ।...”

समय पर-लगे पंछी-सा उड़ता रहा ।

रमौती को पन्द्रहवाँ वर्ष लग गया, इसी से अनुमान लगाती रही, कि इस माघ में उनको देश गए असोज से असोज तक एक साल, कातिक एक, मंसीर दो, पूस तीन और माघ चार—एक साल चार महीने हो गए ।

परसों रमौती अलग बैठी थी । पहली पाली थी । ग्यारह दिन अलग रहना था । चाख के एक अलग कोने में, उसे जगह दे दी गई थी और गोबर की बाड़ डलवा ली गई थी । बिछाने को दो बोरे और ओढ़ने को नाथू होलदार का घर पर छोड़ा हुआ मिलिट्टी कम्बल ।

इस बीच मोहनसींग की दो चिट्ठियाँ और आई थी और दो मनीआर्डर भी आए थे । रमौती के नाम की चिट्ठी पीताम्बर ने ही पढ़ के सुनाई थी । पहले की तरह प्यार की बातें लिखी थीं । पीताम्बर पढ़ रहा था । रमौती एक हलक हँसती थी, एक शरमाती थी ।

एक बात आज भी याद आ रही है ।

गोबर के बाड़ के अन्दर घुस रही माघ की हवा बहुत ठंडी है । रमौती ने उठकर, कम्बल अपने चारों ओर लपेट लिया और उकड़ूँ बैठ गई । घुटनों में सिर दिए-दिए, उसे चिट्ठी में लिखी बात याद आती रही—“माघ-फागुन की लम्बी और ठंडी रातों में मेरी याद करके सोना, प्यारी, कम्बल-निहाफ नहीं ओढ़ने पड़ेंगे ।...”

रमौती ने होले से मोहनसींग की आकृति को अपनी आँखों में बिठाया और फिर सो गई ।

आज बाड़ेछीना के ब्रांच पोस्ट-ऑफिस में चिट्ठियाँ छाँटते समय, पीताम्बर को एक बात याद आई थी—पीताम्बर चाहे, तो रमौती के नाम मोहनसींग की चिट्ठी आज भी तो आ सकती है ?

और ऐसा ही तो वह चाहता रहा है ?

मोहनसींग की पहली ही चिट्ठी पढ़ के सुनाते समय, वह सोच रहा था, कि यदि वह खुद पठानकोठ से रमौती को चिट्ठी लिखता तो ?

और, लड़कियाँ तो बहुत-सी होती हैं। उनके पहनावे से, उन्हें दूर से ही पहचाना जा सकता है। पर, रमौती तो गाँव-गाँव, घर-घर नहीं होती ? ... अब पन्द्रहवें से लग गई है, तो जैसे गंगनाथ-की-ऊँची-धार से बहुत तेज हवा दौड़ती आई है और ऊडलगों की चमेली और जाई के बेलों की सारी कलियाँ चटका गई है।

इस बरस तक घर रह गया होता, तो अब क्या मोहनसींग पलटन में भर्ती होता ?

तीन मील दूर रहकर भी, पीताम्बर का मन ऊडलगों में ही रह जाता है। पीताम्बर अब अपने से ही क्या छिपाए, कि वह रमौती को चाहने लगा है ?

दल की दुकान में, दानसींग के यहाँ चहा-तम्बाकू जल्दी-जल्दी पीकर, पीताम्बर बड़े-बड़े पाँव रखता हुआ, ऊडलगों की ओर बढ़ रहा था, कि कहीं से छपक-छपक कपड़े धोने की आवाज आई।

पीताम्बर ने जरा गौर से देखा, तो पहचान लिया। रमौती ही थी। पीताम्बर ठिठक गया। पनार सँपैली वहाँ मुड़ गई थी।

लम्बे पाँवों से वह रमौती के निकट आ पहुँचा—“भौजी, तुम्हारी चिट्ठा आई है।”

रमौती ने बड़ी-बड़ी आँखों से पीताम्बर के हाथ में थमी चिट्ठी को देखा, पर चिट्ठी के भीतर से मोहनसींग की तन-मन को झुझकोर देने वाली आवाज नहीं आई—रमौ रमौ ... रमौ...

शायद, पनार के शोर में डूब गई हो ?

रमौती, गीले ही कम्बल से अपने गीले शरीर को ढाँकते हुए, बोली—

“पानेज्यू, पैलाग कहने के लायक नहीं हूँ।”—और वह शरमा कर, बैठ गई। पीताम्बर ने तो उसके पनार-नहाने से ही समझ लिया था। बोला—“पैलाग कहने की जरूरत भी क्या है? रिश्ते में तुम भोजी लगती हो, मोहनदा के लग से। पाने न होता, मैं कह देता तुम्हें पैलाग।...”

“ना हो, पानेज्यू!” रमौती और लजा गई।

तबतक पीताम्बर ने चिट्ठी खोल ली थी—“इस चिट्ठी में लिखा है, ‘मेरी प्यारी’.....”

पनार के पानी में एक गदलुवा मच्छी होती है। धूप लगने पर, वह अपने गीले अंग सेकने पानी की सतह से ऊपर उठे पत्थरों से चिपक जाती है।

शिला-ऊपर बैठी, कम्बल-ढँकी रमौती भी एक गदलुवा है—पीताम्बर चिट्ठी पढ़ते-पढ़ते अटपटा गया।

माघ में चौथ नहाने को धूप का दिन मिल जाए, तो उसे चमकदार बेटा मिलता है...और आज आकाश खुला था। सूरज तप रहा था। धूप की मिठास से गीले पत्थरों से चिपके गदलुवे चिलमिला रहे थे।

रमौती को याद आया—जब पहले दिन उसे अपना अंग अशुद्ध हो जाने की खबर हुई, तो बकरियाँ चराकर लौटने के बाद भी, वह बड़ी देर गायों के गोठ की देली में ही बैठी, तिनके चबाती रही थी। सर्दी में ठिठुरती रही थी। उसे याद आ रही थी, मोहनसींग की दूसरी चिट्ठी की यह पंक्ति—“संन्यासी के हाथ के चिमटे-सी तेरी याद, हमेशा मेरे साथ रहती है, मेरी रमौ !...”

और वह सोच रही थी, कि ‘ऊँ’ भी तो उसे बहुत याद आते हैं न और अबके-जैसे माघ-पूस तो कभी नहीं आए। अबकी-जैसी सर्द रातें, न कटती रातें।

सरली सामू क्या कहती थी—“पहली पाल अलग हुई है, तू। मोहनिया छोरा घर में होता, तो अगले बरस आनसींग ज्याठजू<sup>१</sup> नाती का मुँह देख लेते। ब्वारी, खसम का देश जाना इन्ही दिनो अखरता है।...”

हाइवे, कैसी विशरम हैं सरली ज्यू और कैसी पगली थी रमौती, जो उनसे अलग हो जाने की बात कह दी? वैसे रमौती सरली ज्यू को देखती है,

तो उसे एक सिहरन-सी होती है। लोग कहते हैं—सहली थोकदार के घर से निकलकर, हरसींग के घरबार गई और पेट लेकर आई।... हाइवे, पेट कैसे लाते होंगे ?

और वो साबुली ननदी भी अपना पेट बार-बार रमौती को दिखाती थी, हालाँकि वह बिना दिखाए भी दिखता ही था।

रमौती की नजर, अनायास ही, अपने पेट की ओर गई, तो वह चौंक उठी। कम्बल नीचे सरक गया था। गीली धोती से उदर का सोना ढँपने की जगह और उजागर हो रहा था। पीताम्बर के हाथ में चिट्ठी थी।

“क्या लिखा है, पानेज्यू ?” रमौती ने कम्बल ठीक से ओढ़ा। कहीं किसी ने उसे ऐसे बँठे चिट्ठीरसैन से बातें करते देख लिया, तो ?

“लिखा है, मेरी प्यारी, माघ-पूस की ठण्डी रातों में सुवा के साथ सोने का मजा ...”

“पानेज्यू !” रमौती चीख-सी उठी। गरम के शोले उसकी आँखों में दहककर, अंगीठी को लाल कर गए।

अँ अँ...अँ... इसमें तो मोहनदा ने ऐसा ही लिखा है. भोजी !...ऊँ... ऊँ... खसम तो अपनी औरतों को कुछ भी लिख सकता है। ऊँ... ऊँ !...”

“पर, लाम के हौफीसरो के मामने ऐसी चिट्ठी लिखते समय उन्हें शरम नहीं आई होगी ? पानेज्यू, तुम एक चिट्ठी डाल दो मेरी तरफ से उनको, नहीं तो, कभी-न-कभी, उनको लाम के हौफीसरो और मुझे गाँव के लोगों से बातें सुननी पड़ेंगी।...और, पानेज्यू, मैं तुम्हारे पाँव पढ़ती हूँ, मेरे नाम से आए उनके पास पत्रों का जिकर किसी से न करना।...हाँ, उनको चिट्ठी लिख के भेज दें और उसमें लिखें, कि आगे से बगैर सोच-विचार के ऐसी चिट्ठी नहीं लिखनी, ये बात ध्यान में रहे।...और...और यह भी लिख दें, कि मैं उनकी दया से आदर-कुशन से हूँ, नेक चाहती हूँ भगवान् से उनको।...”

रमौती की आँखें डबडबा आईं, मोहनसींग की स्मृति के आवेग से। पर, पीताम्बर की आँखों में अनपढ़ी चिट्ठी किरक रही थी। विचने सोच-जतन से उसने यह चिट्ठी तैयार की थी ? एक-एक वाक्य को लिखते समय

उसका सरकारी-होल्डर कितना हिलता था ? कैसा घुड़क-घुड़क करता था हिया ?

“आगे लिखा है, मोहनदा ने” —रमौती की अन्यमनस्कता को पुनः भंग किया पीताम्बर ने—“माघ की ठण्डी रातों में धोंसलों के पंछी भी एक-दूसरे पर पंख डालकर सोते हैं । मेरी प्यारी, तू अकेली सोती होगी ? तुझे जाड़ा लगता होगा , मुझे कोसती होगी । सच, जिस उमर से तू लगी है, उस भर-पूर ज़ोवन की उमर में खसम के साथ सोने का मजा....”

“बस, बस, पानेज्यू !... ज्यादा मत पढ़ो । तुम बामुण आदमी ठहरे । ऐसी बातों से तुम्हारे कान अपवित्र होंगे ।....” रमौती कपड़ों की मटेड़ी बाँधने लगी —“उनको न जाने क्या हो गया है ? कैसी संगत-सोहबत मिलती है । हाइवे, कैसी-कैसी बातें लिख ठोकते हैं ! पानेज्यू, किसी से जिकर न करना हो, मेरे इन पासपत्रों का ।... अच्छा, अब चलती हूँ । बड़ी बेर हुई— जेठानी टोकेगी ।”

पीताम्बर का मन कड़ुआ गया, पर यह सोचकर कंधे से खिसकते हुए भोले को संभाल लिया, कि जल्दी से चारा तो पनार की मछली भी नहीं पकड़ती ।

फिर बोला—“मैं मोहनदा को पत्र लिख दूँगा, कि आगे से भोजी को संभल के पत्र भेजा कर । बड़ी तेज है, मेरी भोजी !... और, भोजी, मोहनदा से छोटा तो कोई है नहीं घर में ? तेरे नामकन के चौके में कौन बैठेगा ? खसम घर में न हो, तो देवर बैठता है । कुश के बेटे का नाम घरा जाता है । मैं बामुण न होता, तो मैं बैठता ।... मोहनदा से दो बरस छोटा हूँ ।....”

रमौती जल्दी-जल्दी आगे बढ़ गई । मन हुआ डपट दे । दुतकार दे । कल कहीं ऐसा न हो, कि कुछ और आगे बोलने लगे । नाक-नजर ठीक नहीं दिखती ।

फिर खयाल आया, दुतकारने से नाराज हो गया, तो कहीं मोहनसींग की चिट्ठियों को फाड़ के फेंक न दे ? भला, उसे क्या मालूम पड़ेगा ?

पीताम्बर फिर उसके पीछे-पीछे ही आ रहा था । उसे गाँव में चिट्ठी बाँटनी होगी ? अरे, रमौती ने अपना पासपत्र उससे माँग भी नहीं लिया ? न जाने उसमें आगे और क्या-क्या लिखा हो ? कहीं चिट्ठीरसैन ने उसे

आनसींग को दे दिया, तो ? किसी और को दिखा दिया, तो ? खाकी भोले से नीचे सरक गया तो ?

मुड़कर, बोली — “पानेज्यू, मेरे नाम वाला पासपत्र मुझको दे दो ।”

“तू क्या करेगी, भौजी ? पढ़ना तो तुझे आता नहीं ?” पीताम्बर जल्दी-जल्दी साथ हो लिया — “बोल तो, मैं पूरी चिट्ठी पढ़ के सुना दूँ फिर से ?...”

“ना, ना, पानेज्यू ! ...ओ बा, कैसी-कैसी बिशरम बातें लिखी हैं ! ... पानेज्यू, बड़ी मिहरबानी होगी, मेरा पासपत्र मुझे दे दो...!”

“तेरी अमानत है, तू सँभाल ।” कहकर, जब से मुड़ी हुई चिट्ठी निकालकर, पीताम्बर ने दे दी ।

रमौती बाएँ हाथ से कपड़ों की गठेड़ी थामे हुए थी । दाएँ हाथ से लेकर, उसने चिट्ठी को अपने आँगड़े (ब्लाउज) में खोस लिया । ...बुरूँश के फूल झलक गए । पीताम्बर कुनमुना गया — चिट्ठी मेरी, धन तेरे भाग ।

•

•

•

एकांत पाने पर, रमौती ने उस चिट्ठी को चुपके से खोला । मुड़ गई थी । घुटने से जरा ऊपर रखकर, ऊपर से धोती की दोहरी तह डालकर, बड़ी देर तक उस पर हाथ फेरके सीधा किया । बड़े जतन से हाथों में थमाकर, आँखों के पास ले आई । ...ओ बा, कैसी-कैसी बातें लिखते हैं, ऊँ ?

हाइवे, मरद का हिया तो डोली (डोलने वाला) होता ही है, उसकी जबान भी बड़ी चटुली होती है । कैसी-कैसी बातें लिखी हैं...? ओ बा, गंगनाथ की धार से तेज हवा फरफराकर आती-सी लगती है और आँगड़े के बटन खुलने लगते हैं ।

दिगो...आज वो घर होते !

रमौती को ऐसा लगा, कि जैसे कोई उसे झिझोड़ता है । पहली पाल से खुले उसके अंगों के भराव को मुरसुराता है और वह दिन और, रात और जवान होती है । ...मोहनसींग की मोहिनी मूरत का भंडा फूटता है, बच्चन निकलता है, चूँ-चूँ करता है । ...और...और...

दिगो लाली...घड़कते सीने में बर्फ जमती है...

भाँगड़े के बटनों को ठीक से लगाकर, रमौती अपने कोने में भ्राई। इधर-उधर देखा, सास-मसुर बाहर आँगन में तमाकू पी रहे थे। जेठानी भैंस दुह रही थी।

रमौती ने ऊपर दृष्टि की। उसकी 'दुलहन-पिटारी' ऊपर रखी थी। वही तो एक सन्दूक है उमके पास। उसकी चाबी भी उसी के पास रहती है। रमौती ने चुपके से सन्दूक उतारकर, उसमें चिट्ठी रख दी।

और आज, बहुत दिनों के बाद, उसे फिर साबुली की याद आई। पर, साबुली ननदी कहाँ आएगी अब मँत ?

अब तो, बस, गाँव-भरमें उसकी चर्चाएँ रह गई हैं। वह तो ससुराल जाने के दिन ही काठगोदाम से ला-पता हो गई थी।

बीरसीग ठेले से उतरकर, दुकान से साबुली के लिए चहा लेने गया था। चहा लेकर, लौटा, तो साबुली नहीं थी। होलदार भी उली ठेले में आया था। आगे जगह न होने से, पीछे बैठा था। दोनों ने पूरा काठगोदाम छान मारा, पर साबुली न मिली।

नाथू होलदार मुरादाबाद को चले गए। वहाँ से सहारनपुर होते हुए, रुड़की जाना था। बीरसीग बिना साबुली का ठेला लेकर रुद्रपुर पहुँचा और लाला लक्ष्मीनारायण से मिला।

सब समाचार जानने के बाद, लाला लक्ष्मीनारायण ने हाथोहाथ एक चिट्ठी थोकदार के नाम लिखकर दी, कि 'पत्नी जोग लिखी लाला लक्ष्मीनारायण जी अगरवाल रुद्रपुर वालों के यहाँ से' जी, कि आगे हमको इसमें किसी धोखा-धड़ी की बू आती है। आपको बेटी न लगानी हो साफ लिख दीजिए। हमारी श्री माताजी का भी यही लिखाना बदस्तूर है, कि मैं तो लल्ला लक्ष्मीनारायण से पहले ही कहती थी, कि इन पहाड़ियों से नाता-रिश्ता ठीक नहीं। न मानी लल्ला ने नेक, सो अब पछताते हैं। आगे माता जी ने यह भी लिखा है, कि मेरे लल्ला को कुछ जोरू-औरतों का तोड़ा हई ना। अपनी लाड़ली को अपने ही घर बिठा लीजियो। सुसरे कान पकड़े, ऐसी रिश्तेदारी से। ...'

पत्र के अन्त में उन्होंने यह भी लिख दिया था, कि घी, खल और सोहागे के दाम इधर बहुत गिर गए हैं।

टुलटुलाते आँसू...

छलछलाती पनार का ताल-थमा पानी...

टुलुक...टुल...टुलुक...

छुलुक...

ओह, कैसे-कितने दायरे बनते हैं। एक-के-पीछे-एक। एक-के-पीछे-एक।

टुलुक...

आदी हो रही है, यह मालूम था, पर क्यों हो रही है, इसका एक घुँघला-घुँघला अनुमान मात्र था। रमौती सौरास आती है। मोहनसींग की कहलाती है। अकेले-दुकेले में कोई उसके कंधों को हलके से दबा देता है—“रमो, जल्दी-जल्दी जवान हो ना?”

छुलुक...

नाथू होलदार की मति में कौवे बैठते हैं। मोहनसींग सरकारी-लाम में भर्ती हो जाता है। ओबा, कैसी-कैसी प्यार-भरी और जल्दी जवान कर देने वाले पासपत्र भेजता है?

टुलुक...टुल-टुलुक...

और—और इधर रमौती जवान होती है, गंगनाथ-की-घार से नीचे उतरने वाली हवा फरफराती है और उधर...चिट्ठीरसैन पीताम्बर आँगन में आता है।

“ठाकुर सैप कहाँ हैं?... ”

आनसींग अन्दर बैठे तमाकू पी रहे थे। बाहर निकले, तो, चिलम एक तरफ रखते हुए, बोले—“पैलाग, पानेज्यू ! कोई ऐमो है क्या ? नाथू ने तो

इस बार जब से गया, तब से पट कर रखी ही थी। इधर बहुत दिनों से, मोहनिया का भी न कोई ऐमो आता है, न कोई चिट्ठी। पूरे चार साल हो गए। चिट्ठीरसेन सैप, न-जाने क्या ईश्वर की इच्छा है। बुढ़िया पिछले महीने गुजर गई। नाथू और मोहनिया—दोनों को अलमोड़ा जाकर, तार कर आया था। कहीं से न कोई आया, न किसी की चिट्ठी...आप भी आज बहुत दिनों से आए हैं ?...

“दो महीने की छुट्टी ले रखी थी। मेरी शादी हुई, पिछले महीने ! आज ही ड्यूटी पर चढ़ा हूँ। इस बीच दौलतसिंग था ड्यूटी पर। कुछ नहीं लाया क्या ?...आज तो एक तार है आपका ।... ”

“तार ?...अरे रे, शायद, टैम से तार उन लोगों को नहीं मिले होंगे ? अलमोड़ा हरदत्त पनवाड़ी से भरवाए थे तार। उसका ध्यान चूने-कत्थे पर ज्यादा रहता है। अब खबर भेजी होगी बेटों ने।” आनसीग ने दस्तखत करके लिफाफा लिया और फाड़कर, बड़ी ललक के साथ, उसे देखा। पहले दूर से देखा, फिर आंखों के एकदम निकट ले गए—“किसने लिखा है, क्या लिखा है—मेरी सभर में तो एक आंखर भी नहीं आता है, पानेज्यू !”

तार को हाथ में लेते हुए, पीताम्बर पाने बोला—“अंग्रेजी में लिखा है। ओ...ओ...ओ... लिखा है, कि 'सोरी टू इनफार्म दिस दैट, मोहनसीग महर... ओ...ओ...ओ...अंग्रेजी भी जाने किसने लिखी है ? आगे के हरफ मेरी सभर में भी नहीं आते हैं।...ओ...ओ...किसी अच्छी अंग्रेजी के जानकार से पढ़वा लेना ओ...ओ...में चलता हूँ। रतनसिंग की चिट्ठी देनी है...कल्याण मस्तु ।...”

आनसीग परेशानी में पढ़ गए। एक दारुण-कल्पना-सी व्यापी और उनके मन-प्राण को कंपाकर, चली गई।

गाँव के जो दो-चार लड़के अलमोड़ा के हाई स्कूलों और कालिजों में पढ़ते हैं, सब अलमोड़ा ही रहते हैं। सिर्फ छुट्टियों में घर आते हैं। आस-पास कहीं अपर-प्राइमरी से ज्यादा शिक्षा की व्यवस्था है नहीं।...सो, अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोगों की कमी है। फिर खयाल आया, बाड़ेछीना जाकर, पोस्टमास्टर-मोतीराम से पढ़वा लाएँ। अन्दर से हौलदारन ने आवाज दी—“सौरज्यू, भात खाने को आओ ।”

आनसींग बोले—“बवारी, मैं जरा बाड़ेछीना हो आता हूँ। पोस्टमास्टर सैप के पास।...अँ...अँ...भात लोटके खाऊँगा।...”

०

०

०

बिना बादलों के बज्र कहीं गिरे, तो आनसींग महर के आँगन में।

शाम होते-होते सारे घर को शोक के बादलों ने ढँक लिया। आनसींग ने तो पत्थरों पर पटक-पटककर, अपना सिर फोड़ लिया। उनके करुण विलाप से, सुननेवालों की छाती फटने लगी—“बुढ़िया भागवान् थी, बेटे की बुरी खबर सुनने से पहले ही, पलक मूँद के चली गई। मुझ अभागी के, जनम-जनमों के पाप सामने आए हैं।...हे राम, ऐसा क्या मारा मुझे, तिनके-सा तोड़-तोड़ के? एक ही घात में उठा लिया होता।...शिव हरी, क्या पड़ी यह मुझपर...नाथू, बेटा तू तो मेरा है...पर, इस बूढ़े का हिया फटता है, यही आवाज फूटती है, तू भी पलटन में ही रह जाना। जैसे तूने मेरे कलेजे के टुकड़े मोहनियाँ को लाम में लगाकर, मेरी बूढ़ी आँखें फोड़ दीं, कमर तोड़ दी...तेरा बिचार भी ऊपरवाला ही करेगा।...हे राम...अब किसके कंधों पर चढ़के जागेश्वरं जाएगी मेरी मिट्टी? कैसे मैं तरूँगा। कैसे पिंड पाऊँगा?...अरे, वह जमनुवा नहीं मरता। दिन-दिन तगड़ा होता है। शायद, मेरे मोह से ही बैर है, ईश्वर को...शायद, मेरी नजर में ही विष है...जिसको कलेजे से लगाता हूँ, वही, आँखों से खून बनके गिरता है।...हे राम...”

हौलदारन अलग आकाश उठा रही थी।

विलाप वह ‘मेरे देवर हो...मोहनसींग हो...लाटा हो...’ पुकार-पुकारकर कर रही थी, पर महसूस ऐसा कर रही थी, मन-ही-मन, जैसे नाथू हौलदार भी...हे राम, ऊँ भी तो तीन साल से नहीं आए हैं घर? न कोई खबर आती है?

जमनसींग और उसकी घरवाली दोनों आकर शोक मना गए थे, कि अब ज्यादा रोने-पीटने से क्या होता है? छाती तो पत्थर की करनी ही होगी। विलाप करने से कोई जाके लोट थोड़े ही आता है।

...और बज्र जिसके ठीक सिर पर गिरा था, वह तो कौली ककड़ी-सी टूट-मुर्झा के रह गई थी। उसके मुख से विलाप के बोल नहीं फूट रहे थे—उसको तो कोई भिझोड़ रहा था...

दुलुक-दुलुक...

मेरी प्यारी,  
मेरी सुवा, रमौ...!...रमौ !!...रमौ...!!!...  
नीचे पनार छलछला रही थी ।

छुलुक-छुलुक...

मेरी प्यारी, रमौ !...

ऊपर गंगनाथ-की-धार से तेज हवा फरफराती आ रही थी ।

सी...स्यों...सी...स्यों...

मेरी सुवा, रमौ !!

और सामने अलमोड़ा-बाड़ेछीना लैन की बड़ी सड़क कसमसा रही थी,  
मिट्टी छोड़ रही थी ।

खटरट्ट...खटरट्ट...टे...टे...टे...टे...

होल्ट !!!...

रमौती ने सिर जरा ऊपर उठाया ।

अपने अपावन-शरीर को पनार की हिलोरों को सौपने से पहले, एक बार चारों ओर देख लेने का मोह जाग उठा । सामने अलमोड़ा-बाड़ेछीना लैन की बड़ी सड़क डिनाकी स्याप (बड़े साँप)—सी धरती पर पड़ी थी । ऊपर गंगनाथ-की-धार से सनसनाती बयाल नीचे, ऊडलगों की सीढ़ी-नुमा पगडंडी से नीचे उतर रही थी, जैसे जमे भी पनार की हिलोरों में विसर्जित हो जाना हो ।

और सामने दल की दुकान से अपने बेटे तिरलोक के लिए मिसरी लेकर, हौलदार नाथू पिन्शनर घर को लौट रहे थे ।...

रमौती के सामने एक दायरा और फैल गया ।...

**चा**र दिन पहले नाथू होलदार की चिट्ठी पहुँची थी—“सस्ती मिरी सरबोपमा सिरी एक-सौ-आठ पूज्य परम पिताजी के चरनों में पहुँचे बार-बार हाथ जोड़ी पैलागन उनके बेटे नाथू होलदार की पहुँचे । पासपत्र यह लिखना बतौर इस कारण के, कि आगे मैं दिन चार-पाँच के बाद यहाँ से बाई ट्रेन सहारनपुर होके मुरादाबाद पहुँचूँगा, जी । और वहाँ से या छोटी लैन से बाई ट्रेन फिर लालकुर्दा होके हलद्वानी-काठगोदाम में पहुँचता हूँ या वाई मोटर वाया काशीपुर होके और काशीपुर में ही बदल के पहुँचूँगा काठगोदाम से के. यम. ओ.यु.ली. की गाड़ी से तारीख उन्नीस या बीस की सुबह या शाम को और महीना यही सितम्बर सीधे अलमोड़ा केनल्ली सड़क वाले स्टेशन पर पहुँचूँगा । आपके चरन-तल आशीश और गोल्ड गंगनाथ की मिहरबानी पाने से, जी जानो माल सही-सलामत लेके, ताबे-जिन्दगी होल-नाइफ पिन्शन लेके घर लौट रहा हूँ । आप दो कुली सामान अदद सात-आठ के लिए और चार कुली मय डोली के तिर-लोक की माता के वास्ते भेज दें । जरूर-जरूर और ठीक-ठीक समय पर । उन्नीस-बीस सितम्बर सन् चालीस की सुबह या शाम को इसी महीने । अपनी बहू और नाती तिरलोक, नातिनी जूली की पाँव पकड़ी बार-बार पैलागन कबूलें आप और माताजी...साथ बहुत मजबूरी और दुःख के यह लिखना दोनों हाथ जोड़ के, जी, कि माता जी की आँखें बंद होने की डिथ-इनफरमिशन-बजह मोर्चे पर बाई औरडर गवरमिट ऑफ ऑल इंडिया—बहुत दिनों के बाद मिला । सो, माफ करना । परमात्मा उनकी आत्म को शांति देवे । पाते सबर के, हम दोनों ने छाक छोड़ी जी ! और पहुँचते रुड़की के, हरिद्वार जाके पिंड दिया । यह मालूम होवे, कि हरिद्वार हिंदुओं का एक बहुत बड़ा तीरथ

है। यहीं पर माता गंगा का वास है। तीरथ की जो शोभा, वह किस मुख से बतलानी। कोनों-कोनों से हिंदुस्तान के बेगुमार यात्रियों का आना-जाना। घरमशाले सब भर जाने से मय-तिरलोक की माता के उम रात को ओपन-ग्रोन्ड याने खुले मैदान में ठहरना पड़ा। बाकी हाल समाचार तो यहाँ सामान्य हैं। तहाँ के घर आने पर जरूर जरूर मालूम करूँगा ....”

हौलदारन ने पत्र को बार-बार पढ़ाया, आनसीग ने बार-बार अपनी बूड़ी आँखों के धुँधलके को चीरने की कोशिश की, पर सारे पत्र में यह खुलासा कहीं मिला नहीं, कि आखिर यह तिरलोक की माता कौन है ?

मन के काँटों को मन में ही छुटाकर, आनसीग ने कुलियों का बंदोबस्त किया, कि चलो, बुढ़ापे की बेला में वन का बेटा घर पहुँच रहा है, कंधा मिल जाएगा। पर, जब डोली लेकर कुली जाने लगे, तो हौलदारन डाट मारती बोली—“अरे, डोली क्या ले जाते हो, मेरे दुश्मनों को ? सौरज्यू को भी बुड़भस लग गई है। मेरी छाती पर बैठने को कोई देशी की राँडी आ रही है और सौरज्यू की मति में ऐसे पत्थर पड़ गए हैं, कि डोली भेज रहे हैं। ..अरे, डोल्यारो (डोली ले जाने वालो) ! यह आराम-पालकी लेकर किस चमारन-चूड़न-भंगन को लेने जा रहे हो ? कुल्हाड़ी हाथ में लो, दो लम्बे-लम्बे बाँस काट लाओ और उस पर चार गज लाल रेशम का कफन डालकर, उस देशी राँडी के लिए भाँभी (अर्थी) बनाके ले जाओ। अलमोड़ा गाड़ी में उतरे, वही से कंधे पर उठाकर, नजीक के तिथारा (श्मशान) दिसनाथ पहुँचा आना और लौटते समय एक काँटोवाला भाड़ पत्थर से दाब आना। ....”

पर, डोली तो गई ही। हौलदारन भाड़ू से छाना कूटने लगी—“आ, राँडी, बैठ इधर। जैसे मेरी छाती पर बैठने को आ रही है, यही भाड़ू न बिठाया तेरी मस्तानी छाती में, तो मेरा नाम हौलदारन—छी, थू पड़े, हौलदारनी पर—मेरा भी नाम चंदरावती नहीं, चमरावती कह देना।” फिर, थोड़ी ही देर बाद, हाथ में कोरे चावल लेकर, वह गगनाथ के मंदिर में घात<sup>१</sup> डाल आई—“उस देशी राँडी को पहाड़ न पहुँचने देना।”

बीस तारीख की संध्या को हौलदार अलमोड़ा पहुँचे। कुली उन्नीस तारीख से बार-बार मोटर स्टेशन के चक्कर काटते थे। नाथू हौलदार ने सबको

१. दबता के मंदिर में पुकार।

पहले स्टेशन के होटल में ही गरम-गरम चाय पिलाई और पकौड़ियाँ खिलवाई । फिर बोले—“बस, अब चहा के गिलास और पकौड़ी के पलेटों की तरह अलमोड़ा-से-ऊडलगों-तक का रास्ता भी खाली कर डालो, जवानलोग !”

सितम्बर की सर्दी, रात बढ़ते, बढ़ती जा रही थी । पर नाथू, हौलदार अपनी गरमा-गरम बातों से उनको जब ऊडलगो ले आए, और दाँए हाथ की कलाई पर बँधी घड़ी पर नजर डाली, तो रात के दस बजे थे । बोले—“घड़ी-में-घड़ी तो वेस्टैन्ड की होती है । लो, दस बजे पहुँचा दिया, करक्ट टेम पर । दूसरी कोई घड़ी होती तो, बारा बज गए होते ।....”

इसके बाद हौलदार ने आनसीग के पाँव छुए और तिरलोक की माँ से छुवाए । तिरलोक से कहा—“सनी, बूबू याने गिरान्ड फादर को ‘गुडनैट’ कहो ।”

तीन वर्ष का तिरलोक अपना छोटा, एकदम छोटा-सा हाथ माथे तक ले गया—“गु...गु...घु...घु...”

आनसीग का बुढ़ापा खिल उठा—“जी रौ, नाती ! ऊँ...ऊँ...बड़ा भला है रे, मेरा नाती ।....”

फिर हौलदार ने गोद की गुड़िया जूली को आनसीग के हाथों में दे दिया, तो आनसीग का मन एक दम गदगदा गया—“पोथी... जी रौ, मेरी पोथी !”

फिर हौलदार ने रमौती की खबर पूछी—“ब्वारी (बहू) कहाँ है ?”

रमौती घूँघट डाले आकर, दोनों को ‘पैलाग, ज्याठज्यू !’—‘पैलाग, दीदी !’ कह गई, तो हौलदार ने आनसीग से पूछा—“बौज्यू, मोहनिया कितनी दफा आया घर छुट्टी पर ?”

आनसीग ने काँपते-हाथों से बच्ची को माँ की गोद में दे दिया और जैसे एकदम थककर, नीचे बैठ गए । उनकी आँखों का घुँघलका आँसुओं में डूब गया—“ऊँ... ऊँ...मोहनिया मेरा बेटा तो हमेशा की छुट्टी में चला गया, हौलदार !”

और उनकी मर्मवेधी-दृष्टि से नाथू हौलदार काँप-काँप उठे ।....ज्यादा पूछने का साहस नहीं जुटा ।

अब हौलदारन की खोज हुई, तो उसका कहीं पता नहीं । रमौती गाँव-भर

में हूँ आई । आँगन में आकर, आनसींग ने जोर-जोर से—“ब्वारी ऊ, ओ ठुलि ब्वारी !” की पुकार लगाई, पर होलदारन की ‘हो’ किमी दिशा से नहीं आई ।

फिर जुगुत होने लगी खाने-पीने की । कुली भूखे थे । सर्दी ने भूख को और बढ़ा दिया था । आखिर रमौती ने आलू-प्याज निकाला और शक चूल्हे में चढाकर, आटा निकाल कर, गूँथने बैठी, तो नई होलदारन पास आकर, पहाड़ी में बोली—“ब्वारी, तू अकेली क्या-क्या करेनी ? ला, आटा मैं गूँथ देती हूँ ।”

रमौती चौक उठी —बड़ी होलदारन दीदी तो कहती थी, कि ‘लाम से किमी देशी रांडी को ला रहे हैं ?’...नई होलदारन का घूँघट थोड़ा-सा सरका आटा गूँथते-गूँथते, तो नीचे झुककर, रमौती ने देख लिया और उसका हाथ अपने दानो हाथों में दाब लिया —“साबुली ननदी !”

“बैरणी !” साबुली ने अपने आटा-सने हाथों से ही उसे बाँहों में भरकर कस लिया ।

बीतनी तो बीतती रहती है ।  
 जिंदगी भी एक चलता-पानी है ।  
 पनार अपनी रो बहती है ।  
 जिंदगी अपनी ।...

घाव पुराना पड़ जाता है, तो उसमें कीड़े पड़ जाते हैं । रमौती के मन का घाव भी पुराना पड़ रहा है और उसमें मोहनसींग की मर्मवेधी-याद के कीड़े सुगबुगाने लगे हैं । पहले याद आती थी, तो बहुत वेदना होती थी । ताजे घाव की पीड़ा तिलमिला देती थी, पर अब सिर्फ कचोटती है ।

और रमौती को लगता है, संन्यासी चला गया है, अपनी याद का चिमटा उसे थमा गया है और जरा-सा मन हिला नहीं, कि चिमटा छणाक्-छणाक् बजने लगता है । ...पर, यह चिमटा किस काम का ? इससे कीड़े निकलने की बजाय और कुलबुलाते हैं । पत्तों से निकल-निकलकर, सतह पर आते हैं... और चिमटे करते भी क्या है ? संन्यासियों के हाथ में रहते हैं, तोर दबी हुई राख उखेल-उखेलकर, अंगारे ऊपरी सतह पर लाते हैं...और सर्दों की रातों में उनकी आँच बड़ी मीठी तपन देती है ।...पर, जब अंगारे फिर बुझ जाते हैं, तब सर्दों दूनी होकर व्यापती है ।

रमौती की सदियाँ कट गईं ऐसे ही ।

मोहनसींग की याद को सिरहाने रखकर सोते-सोते ।...

नाथू हीलदार को घर आए चार महीने हो गए । शुरू-शुरू में गाँव-भर में खुसुर-पुसुर रही । लोगों ने दूर-दूर से थू...थू...छी...छी...भी की, पर नाथू

होलदार अपना शुरू से चली आती आदत का सहारा लेकर, पार लग गए—कि, भूँकते कुत्तों को 'हड़ी-हड़ी' कहके भूँकने से रोको, तो और जोर-जोर से 'हू-हू' करते हैं और 'यू-यू' कहके पास बुलाओ, तो मुँह चाटते हैं।

नाथू होलदार की सारी जिन्दगी 'पोलिटिक्स' में गुजरी है। लोग भींंकते रहे—“नाथू ने आनसींग का नाम डुबा दिया। खैर, दो ब्या कौन नहीं करता ? पर, ऐसी डुमिया-नियत भी क्या, कि सगे न मही, रिश्ते से तो 'थोकदारका-थोकदारका' ही पुकारा करता था ? यों साबुली बहन न हुई ?”

अब नाथू होलदार किस-किसको समझाएँ, कि जिस दिन से साबुली को ले जाने का विचार उनके मन में आया, उसी दिन से उन्होंने 'थोकदारका' कहने की जगह, गुमानसींग को, 'थोकदारज्यू कहना शुरू कर दिया था ?... अब कोई इस बारीकी को न समझे, तो पाप उसके सिर रहा, न कि होलदार के।

गुमानसींग थोकदार सबसे भली चुप करके बैठ गए, कि क्या करें, भाई, अपना ही सोना खोटा निकल गया, तो परखने वाले को क्या कहें ?

हाँ, कभी-कभी, उन्हें अपने कान बजते हुए मालूम होते—“अरे, नाथू होलदार उड़ाएगा, तो कोई बड़ी चीज उड़ाएगा।”

होलदारन अपने मँत पहुँच गई थी, कि “उस देशी रॉडी को छाती पर बिठाने को मेरी जाए दोतलिया-चप्पल ! अरे, भगवान की दया से, बिना अघार की वेत नहीं हूँ। सिर पर राजकुँवर जैसे चार-चार भाई हैं। यहीं दिन काट लूँगी।...”

नई होलदारन साबुली आज आंगन में टाँग पसारें बैठी, अपनी जूली को तेल लगा रही थी।

रमौती उसे 'दिदी' पुकारकर, गाय-बकरियाँ बन ले जाने लगी, तो साबुली बोली—“बेगा, भात खाने को जल्दी आना। गाय-बकरियाँ किसी ग्वाले को सौंप आना।”

'होई' कहकर, रमौती बकरियों को छ्यो-छ्यो करती आगे बढ़ गई। गलियारे में हाकर, गुजर ही रही थी, कि पीछे से आवाज आई—“रमौ, भोजी...”

रमौती ने मुड़ कर देखा, पीताम्बर पाँडे था ।

इधर बहुत दिनों से वह रमौती के सामने न पड़ा था । जब से वह तार दे गया था, तबसे । रमौती को याद आया, कि आनसींग एक दिन कह रहे थे, कि पानेज्यू तार को दो-चार आँखर पढ़के ही, अँ · अँ...करके अटकने लगे, तो उसी समय मेरी छाती बँठ गई थी । पानेज्यू ने जान-बूझ के तार पूरा पढ़ के नहीं सुनाया । नहीं तो क्या चिट्ठीरसैनी ऐसे ही कर रहे हैं । बार-भाषा जाननी पड़ती है, तब कही चिट्ठीरसैनी चलती है । पहले तो मोतीराम पोस्ट मास्टर सैप भी ऊँ-आँ करने लगे थे, मैंने टोपी पँरो पर रखदी, कि पढ़के सुना ही दीजिए अब । जो बजर गिरता है, अभी गिरे । मैं कहाँ-कहाँ ले जाता फिरेगा, इसको ।

मोतीराम मास्टर ने अपनी ऐनक को ठीक से लगाते हुए, तार का मजमून समझा दिया था, कि पठानकोट से मोहनसींग को दूसरे महायुद्ध के मोर्चे पर, अबीसीनिया भेज दिया गया था, वहाँ से वह लापता है । ब्रिटिश सरकार इसके लिए दुःख प्रकट करती है और मृतात्मा के परिवार का दुःख बँटाने की ईश्वर से प्रार्थना करती है ।

“भौजी, तू मुझसे नाराज है ?”

रमौती इस प्रश्न से ठिठक-सी गई । उत्तर देने की जगह, उसने अपने हृदय से प्रश्न किया—रमौती, तू पीताम्बर चिट्ठीरसैन से नाराज है ?

सिर का चाल ठीक करती हुई, बोली—“चिट्ठीरसैन सैप, लौकी के लगिल (बेल) का तो ठाँगर, (आधार-खम्भ) उखाड़ के फेंक ही दिया तुमने ? मुझे तो ऐसी मौत मार गए हो, कि चिता पर पड़ी हूँ, कफन नहीं मिलता है, आग नहीं सुलगती है ।”

“अँ...अँ...मैं क्या करता, भौजी ? सरकारी नौकरी है । ड्यूटी बजानी पड़ती है । कोई मैं तो जाकर लाम में किसी को गोली मारता नहीं ? ...पापी पेट के कारण, सौ गालियाँ मुझे भी सुननी पड़ती हैं । अपनी-अपनी को सब राई से परबत बनाते हैं, पराया दुःख हेरने को किसी की आँख नहीं खुलती । ” पीताम्बर बोला ।

“काम ही ऐसा करते हो ।...” रमौती, तिलमिलाकर, आगे बढ़ गई ।

वन को जाती बकरियों की घंटियाँ टुनटुनाती रहीं और रमौती छ्यो-छ्यो करती रही। वन पहुँच जाने पर, गायें घास चरने लगी और बकरियाँ हिसालू और किरमड-चलमड के पात चबाने लगी। रमौती एक नजर उन पर रखती, एक ऊँची शिला पर बुरूश-वृक्ष तने आ बैठी।

हवा का एक हल्का-सा भोंका आया। बुरूश-वृक्ष के फूल-पात फरफरा उठे—‘मेरी प्यारी, तुम्हारे बुरूश कैसे हैं ? ‘फूल तुम्हारा बुरूश का...’

रमौती को लगा, संन्यासी का चिमटा फिर राख उखेल-उखेल कर, अंगारे निकालने लगा है। ओबा, इस वन में ये बुरूश किसने बोए होंगे ?

घर पर साबुली है, तो धार (टीले) की हवा-जैमी फरफराती और पहनने में छोटे पड़ गए आँगड़े की आस्तीनो-मी कसमसाती बातें करती है। उम बरस गंगनाथ-की-धार की ऊँची-ऊँची शिलाओं पर बैठ-बैठ के की गई बातों को लार घुटुक-घुटुक कर दोहराती है—“तूने कहा था, किमी पहाड़ी को धर ले। सच, मोहनमीग पलटन में भर्ती न हो गए होते, तेरी छाती पर सौत बनके बैठती और विधवा-जीवन का जो दुःख पहाड़-मा तुझ अकेली पर टूट गिरा है, वह आधा बँट जाना।...पर, देख, सच्चा मोह था न तुझ पर ? लौट आई हूँ, बैणा ! मेरे कलेजे से लगे रह तू।...”

रमौती उसकी गोद में मुँह छिपा लेती। अब वह उदास हो जाती, तो जैसे फिर साबुली को बिच्छू काटते—‘क्या करूँ, ऊँ तेरे जेठ लगते हैं। वचन तोड़ने से पाप लगेगा। नहीं तो, पुरानी हौलदारन तो भग ही गई थी, मैं तुझे अपनी छाती पर बिठा लेती।...”

और रमौती बरबस ही साबुली की पीठ अपनी मुट्टियों से गदकाने लगती—“चल, बड़ी चट हो।...”

पर, साबुली दिदी की सगत एक तरह से उसे खटकती भी थी। साबुली अपने तड़के अनारदाने-जैसे प्यार के संस्मरणों का रमौती से ऐसी भाषा में जिक्र करती, कि वह शरम से लाल तो होती ही, उसका वैधव्य उसे और तिलमिलाने लगता।

दिन-दिन वह जवान हो रही थी। पर, जैसे बिन खम्भे की लता जमीन पर ज्यादा फैलती है और उसके ओर-छोर अपेक्षित बाड़-घेर न हो, तो आते-

जाते जानवर मुँह मार जाते हैं—ठीक ऐसी ही स्थिति रमौती की होने लगी थी। अपने ही गाँव के खड़कसींग-रुदरसींग-जैसे चार चंट सीटी मारने लग गए थे।

किसान-घर की बहू को काम-काज से चार ठोर जाना ही पड़ता है। बेर-अबेर भी होती ही है। अकेला तन भी रहता ही है। अपने गाँव के लोग तो कुछ लाज-प्रोट भी रख लेंगे, पर सबकी आँखों से तो वचना मुश्किल है। और साबुली दिदी कहती थी—“गले में काला चरेवा (मंगलमूत्र) रहे, तो चार काले करम उसी की ओट में ढँक-छिप जाते हैं और निभ जाती है। पर, आड़ को कोई न हो, तो बिन खाए का चोर बनना पड़ता है।”

और साबुली दिदी यह भी तो कहती थी, कि ‘बिना बाड की खेती कहाँ तक बच सकती है ? और बैणा, तुझे अब मैं अपने किम कलेजे से लगाके रखूँ—बाघिन वन में तभी तक चैन से सोती है, जब तक उसके मुँह खून नहीं लगता। तू अभी गंगाजल है। तुझे लगी-भीगी नहीं। पर, आता कल हमेशा एक-सी धूप साथ नहीं लाएगा...और, बैणा, तुझे मैं लोकी-ककड़ी-जैसी बढ़ते देखती हूँ तो...मेरा मन ऐसा होता है, कि आस-पास के सारे बनों के बानरों को दूर-दूर खदेड़ आऊँ।...’

और रमौती को बढ़ते डर लगता है। जवान होते डर लगता है। एक दिन वह था, कोई कंधों से झिझोड़ता था। और रमौती जल्दी जवान हो जाने के लिए, सबेरे जोर-जोर से अँगड़ाई लेकर अंगों को विस्तार देती थी। दो गास अन्न अधिक खाती थी। हौलदारन दिदी से नौनी माँग-माँग कर खाती थी।

पर, अब तो पूरी चाल से चलते हुए मन झिझकता है। अच्छी बुरी चीज खाते हुए, स्वाद बिगड़ना है।

पर, जिस भूत का भय व्याप जाए, वह पिंड कहाँ छोड़ता है ? लाख घुटनों सिर दे के कोई सोए, सबेरे उठने पर अंग खुल ही जाते हैं।

और जब-कभी गाय-बकरियाँ चराने बन आती है रमौती—डाल-डाल पात फूटे देखती है। दूब-घास को रोज नए कल्ले फूटते हैं। इस चैत-बैशाख में, तो इस बुरुँश की जाति भी बौरा जाती है !...

पर, इसमें सैमाधुर के वन का क्या दोष ?

उसे तो हरा होना ही है ?

धार की हवा का क्या दोष ?

उसे तो फरफराना ही है ।...

और पनार की हिलोरों को कोई क्या कहे ?

बिना छलछलाए, आगे नहीं बढ़ पाती है ।...

दाप तां विधाता को सारे रमौती में दिखते हैं ।

ऊँची शिला-बेंटी रमौती की गगन-आँख होने से क्या होता है ? दृष्टि तो कहीं हृदय के कोने-कोने में बैठ गई स्मृतियों की तलछेंट को टटोलती है ।

और रमौती सोचती है, कि ठेकेदारों को भी इतनी बड़ी धरती में और कहीं जगह नहीं मिली ? ठीक आँखों के सामने अलमोड़ा-वाड़ेछीना लैन की बड़ी सड़क बना दी । न मिले इस सड़क को भी कोई पड़ाव ! ...ओबा, कहाँ ले जाके छोड़ आई मोहनसींग को ?

मोहनसींग की याद आते ही, रमौती को चिट्ठीरसैन पीताम्बर पाने भी याद आ जाता है और रमौती सोचती है, उस बेचारे का क्या दोष-अपराध है ? उसे क्या कुछ खुशी हुई होगी, कि मोहनसींग 'ना, रे, ना !' ऐसा ही होता, तो वह तार पढ़कर मुनाने से इन्कार क्यों करता ?

इस पहलू पर सोचने से रमौती को पीताम्बर बड़ा भला लगता है—  
घमंड तो छू भी नहीं गया उसे । पाने है, दिवान-खानदान से सम्बन्ध रखता है । पर, कैसे लग-लगाके पुकारता है—“रमौ भौजी...”

**रा**जकुँवर-जैसे भाइयों के यहाँ उमर काटने की कौन कहे, भादों एक असोज दो, कार्तिक तीन, मंसीर चार, पूस पाँच, माघ छै, फागुन सात, चैत आठ और बैशाख नौ—एक भाभी के ताने-नटौरे होते, हीलदारन चन्द्रावती सह भी लेती, वरने चार बापों से हैं और एक-से-एक नम्बर एक ।

एक के बच्चों को खिलाया, खेल लगाया, तो दूसरी को ताप चढ़ाया—“चिपका के कलेजे से तो जेठानी के लल्लों को रखती है और खाते-पहनते समय यह घर याद आता है । आदमी तो वह भला लगता है, जिसे पाँचों अँगुलियों की पीर एक हो । चंदरा ननदी तो सगे भाई-भोजियों में फेर करती है ।”

जरा कभी गोड़ पसारे नहीं, कि किसी दूसरी भौजी के मुँह में अचार आ गया—“हमारे ऊँ तो कोई हीलदार-सुबदार हैं नही, कि आ रहे हों ऐमो-पर-ऐमो और साटन-रेशम की साड़ियों और दोतलिया-चप्पलों के पारसल-रजिस्टर ? यहाँ तो, बस, चार हल जमीन का आसरा है । इसी चार मुट्ठी मिट्टी में से घर-भर को उपजाना पड़ता है । ऐसे ही पाँव-पर-पाँव धरने लगें, तो कट चुके दिन । ननद तो वह भली, कि चार काम-काज भोजियों को सिखाए ।...”

चन्द्रावती हीलदारन का कलेजा फट के रह गया —“बस करो, भौजी ! हो गया, मीत, भर पाया । मैं तो यह सोच के आई थी, कि विपद पड़ी है, तो एक हाड़-मांस के भाइयों को छोड़ के और कौन घर ढूँढ़ूँ ? पर, मुझे क्या खबर थी, कि सब भाई तिरजाट (पत्नी के दास) ही निकलेंगे ? ये लो,

मैं चली। सँभाल के रखो अपने तोतों को। अरे, अकेली माँ ने मुझे दस महीने कोख में रखा। अकेले पिता जी ने तेर बरस पाल के, दान-दहेज देके विदा किया।...पर, इन चार-चार तिरजाटों को मेरा पेट भारी हो गया? न दे ईश्वर किसी दुश्मन को भी ऐसे कमनियत भाई

ऐसी जल्दी-कटी मुनाकर, होलदारन ने तो सँभाली अपनी पोटली और चल दी। बड़ा भाई भौनसींग मारने को दौड़ा—“साल-भर पकाया-तताया टाँग पसार के खा गई और उलटे हमी को तिरजाट कहती है?”

होलदारन शेरनी-सी विफर कर, अपना एक दोतलिया-चप्पल हाथ में लेके खड़ी हो गई—“आ, जरा छू के तो देख? गिर के वाल साबित छोड़ दूँ, तो होलदारन नहीं, चमारन कह देना। तुम्हारी बकतरुवा-पतरुवा सैणियों<sup>१</sup> की तरह मादिरा का डडुइया<sup>२</sup> खाकर दिन नहीं काटे हैं उमर-भर।... ठहरो तो सही, पलटन से पिनशन पर ऊँ आए हैं, तो गबरमिट ने बखशीश में दोनाली बन्दूक भी दे रखी है। एक-एक पर बन्दूक की फँर नहीं मरवाई, तो किसनू चम्बाल की नहीं चमार की बेटी कह देना!” भौनसींग पलट कर, अपनी घरवाली का मुँह देखता रह गया और होलदारन गाँव से बाहर भी पहुँच गई।

साबुली होलदारन जूली को दूध पिला रही थी और रमोती उसके सिर में ठुँग मार रही थी, कि बड़ी होलदारन को देखकर, दोनों चौंक उठीं—“दिदी!”

दोनों ने उसके चरण छुए, तो होलदारन गद्गद् हो गई—“जीती रहो, बैणा! मैं तो इस दरप से चली गई थी, कि इस छोटी बच्ची के बोज्यू पलटन से किसी राँडी को भरती करके ला रहे हैं घर।...” फिर साबुली के सिर पर प्यार से हाथ फिराती बोली—“जब से सुना, कि साबुली ननदी है, तो ‘बैणा’ कहने को तरसती रही। अरे, हम तो एक हवा-पानी की हैं। एक-दूसरे से बैर कैसा? अच्छी सौत भी बड़े भागवानों को मिलती है।”

१ औरतों।

२ तृतीय श्रेणी के अन्न मादिरा का पतला भात, जिसे ‘जौल’ भी कहते हैं।

साबुली बोली—“दिदी, यह घर तो असल में तुम्हारा ही है। मैं तो सदा ही तुमसे छोटी रही हूँ। तुम जिधर लगाओगी, उधर जाऊँगी—तुम जिधर से बुलाओगी, उधर से आऊँगी। कभी भूल-चूक हो भी जाय, तो छोटी हूँ ही, कान पकड़ के कलेजे से लगा लेना ...” और उसने फिर होलदारन के चरण छू लिए। होलदारन को तो जैसे खुशी का खजाना मिल गया। साबुली को अपनी बाँहों में समेटकर, बहुत-बहुत प्यार करने लगी। बच्ची को गोद में लिया, तो वह माँ-की बान-ठली अपने छोटे-छोटे हाथों में उसकी छातियाँ टटोलने लगी। बड़ा हीलदारन बोली—“अरी, पोथी इन पत्थरों में दूध कहाँ ?”

“अब फूट जाएगा।” साबुली हँस पड़ी। रमोती भी हँस पड़ी और अजाने ही उसके हाथ अपने अनछुए-ऊरोजों तक पहुँच गया और जैसे बिना बादलों की बिजली कौंध गई—“मेरी प्यारी, तुम्हारे बुरूश कैसे हैं ?”

नाथू होलदार सबेरे ही सैमाघुर के जंगल चले गए थे, कि दोनाली बन्दूक घर में है, दो फँर कारतूस छटका आएँगे जंगल में। जरा घुमाई-फिराई भी हो जाएगी और एकाध फँर किसी घुरड़-काँकड़ (पहाड़ी हिरन) पर बैठ गई, तो गाँव-भर का साग हो जाएगा। लोग भी कहेंगे, कि नाथू होलदार की दोनाली जीती रहे।

दिन-भर तेजसींग के लड़के पनुवा को साथ लेकर जंगल की धरती नापते रहे। भाँक होते समय खाली हाथ घर लौटने लगे—“अँ यार पनुवा, तू भी अच्छा मिला कन्या-राश का। भरी बन्दूक लेके ग्राए थे, शरम की बात है, खाली हाथ लौट रहे हैं। गाँव वाले देखते ही पूछेंगे, कि कहो, होलदार क्या ठोका ? ...जरा अँधेरा हो जाने दे, फिर घुसेंगे गाँव में। ...”

इतना कहकर, होलदार कँचीमार, सिगरेट सुलगाते हुए, एक शिला पर बैठने ही लगे थे, कि पनुवा चिल्लाया जोर से—“होलदार दा, वो घुरड़...”

होलदार ने ऊपर आँख उठाई, ढलती-घूप में घुरड़ सुस्ता रहा था। बस, पलटन की विद्या किस दिन काम आनी थी ? मक्खी पर आँख बिठाके, होलदार ने घोड़ी छटका दी—घाय ! ...

घुरड़ ऊँचाई पर था, गोली लगते ही लुङकता-लुङकता नीचे आ गया। होलदार से थोड़ी ही दूरी पर। होलदार और पनुवा दोनों खुशी से उछलते हुए दौड़े। पनुवा ने होलदार से पहले घुरड़ को हाथ लगाया और खड्ड से उठा कर, ऊपर रखते हुए, बोला—“होलदार दा, यह तो अपने थोकदारजू का भूरिया बकरा है ! दूर से तो एकदम घुरड़-सरीखा दिखता था। ...”

होलदार के हाथ से कैचीमार सिगरेट दूर जा पड़ी—“वया बकता है, रे ?”

घर के नजदीक होलदार पहुँचे, तो थोकदार गुमानसींग की आवाज सुनाई दी—“अरे, पनुवा, कहीं हमारे भूरिया बकरे को भी देखा है, जंगल में ? आज अभी तक घर नहीं आया। ग्वाला न-जाने कहाँ छोड़ आया।”

पनुवा वही से बोला—“ज्याठ वीजू, भूरिया तो कहीं नहीं देखा, एक बड़ा बबर बाघ जरूर देखा था। हम लोग बाल-बाल बचे आज। वैसे होलदार दा ने उम पर फेंर छटका तो दी थी, पर अँधेरे में लगी या नहीं—ईश्वर ही जानें। ...”

फिर होलार की ओर पलटकर, फुसफुसा कर, बोला—“लो, होलदार दा, बिगाड़ी बात बनादी। कल तक तो मरे बकरे को स्याल (गोदड़) साबित थोड़े ही छोड़ेंगे ? लाओ, कैचीमार सिगरेट की फूँक इधर भी दो। ...”

नाथू होलदार घर पहुँचे, तो बड़ी होलदारन दिखाई दी। होलदार को देखा, तो चन्द्रा होलदारन डरी, कि कहीं दो-चार खरी-खोटी सुना न दे, कि राजकुँवर-जैसे चार-चार भाइयों का हवाला देती थी, अब क्यों मरने चली आई है ?

पर, नाथू होलदार की तो शुरू से यह आदत रही है, कि बीती ताहि बिसार दे और सबर का फल मोठा।

रात को साबुली अपने बच्चों को लेकर, रमौती के पास सो गई और बड़ी होलदारन को होलदार के पास भेज दिया। होलदारन चुपचाप आकर, पाँव दबाने लगी।

हौलदार हँसकर बोले—“तू तो ऐसे चली गई, जैसे बन्दूक से गोली ।  
अरी, पहली शादी का प्यार तो पुराना गुड होता है और, खाने में तो  
ज्यादा मीठा हो, न हो—गुण उसी में ज्यादा होते हैं ।....”

हौलदारन बोली—“बस, बस ! अब अपनी यह नौनी अपने ही बरतन  
में रहने दो । यहाँ तो उनीस-बीस बरस सगत रही, पर बिन मन के क्या होता  
है ? पत्थर फूट के दो नहीं हुए कभी... और नई से तीन बरस में ही दो  
बनाके ले आए हो ? मरद का दिल तो इतने में ही देखा जाता है ।....”

“अब तेरा ही नम्बर है !” नाथू हौलदार बोले—“अब तक तो तेरा-  
मेरा साल-छः महीने का साथ कभी रहा ही नहीं । मिलीटरी-क्वाटर में तू रही  
होती मेरे साथ, तो अब तक....”

लाख दाबते-दाबते भी साबुली की हँसी फूट ही गई, तो हौलदारन ने,  
हौलदार के मुँह पर हाथ रखते हुए, दिया झुभा दिया—“सारी रात बातें ही  
करते रहोगे ?”

वैशाख बीता । जेठ बीता ।

आषाढ़ बीतते-बीतते, महुवा-मादिरा गोड़ने के दिन आ गए ।

लखुड़्यार के पुल के पास, पनार-पार जो दो-चार खेत हैं, आनसींग के ही हैं । इस बार वहाँ महुवा ही बोया गया था । बड़ी होलदारन घर-सँभालने को रह गई थी और साबुली होलदारन को चोमसिया-बुखार आ गया था । रमौती अकेले ही महुवा गोड़ने में लगी थी ।

मुँह से सीटी बजाते हुए, टे... टे... ट... ट करता जाता पीताम्बर पाने ठिठक गया—“रमौती भोजी !”

खेत बड़ी सड़क के किनारे लगे-लगे थे । संयोग-वश, रमौती ने ऊपर वाले खेत से ही गोड़ना शुरू किया था । पहचानी-सी आवाज सुनकर, पलटकर, देखा—पीताम्बर पाने चिट्ठीरसैन था । खाकी सरकारी वर्दी की जगह, घुटनों से थोड़ी ही नीचे आई धोती, गबरून का धारीदार कुरता और सिर पर दोपलिया टोपी । हाथ में नारियल के पनौटे वाली चिलम और बाँए हाथ में पतला सोटा ।

रमौती हँसने का प्रयास करती बोली—“अरे, चिट्ठीरसैन पानेज्यू ? तुमारी तो आज हुलिया ही बदली हुई है ।”

पीताम्बर को भी हँसी आ गई—“हाँ, भोजी, तुम्हारे कारण बदल ही डाली हुलिया ।”

“मेरे कारण ?” रमौती की आँखें बड़ी हो गई ।

“हाँ, भोजी, तुम्हारे कारण । चिट्ठीरसैनी के काम से तुम्हें नफरत थी न ? नफरत होती भी क्यों नहीं ? खबर भी वैसी ही मनहूस लाया था न मैं ?

दरअसल, चिट्ठीरसैनी की नौकरी है भी मनहूस ही, भौजी! खुश-खबरियाँ ले जाओ, तो कोई नहीं कहता, कि अच्छा हो तेरा, चिट्ठीरसैन !... मन्थीडर लेके जाओ, तो कोई नहीं कहता, कि ले, चिट्ठीरसैन, तू भी रखले दो-चार रुपए अपने बाल-बच्चों के लिए ? ... और जहाँ कभी एक भी बुरी खबर पहुँचाई नहीं, कि लगे छाती कूटने, कि अरे, चिट्ठीरसैन, तेरा नाश हो ।... सो, भौजी, मैंने तो तेरी बात गाँठ बाँध ली । छोड़ दी चिट्ठीरसैनी । अब ता खुश है ना तू ?”

रमौती का मन भर आया । तो, पानेज्यू ने इतना महत्व दिया उसका बात को ? लोग तो उसके कहने से जरा रास्ता भी नहीं छोड़ते हैं और पानेज्यू ने, उसकी बात रखने के लिए, उतनी बड़ी सरकारी नौकरी छोड़ दी ?

बोली—“मुझ अभागी के कारण आपने उतनी बड़ी सरकारी नौकरी छोड़ दी, पानेज्यू, मैं बहुत शर्मिन्दा हूँ ।...”

“रमौ भौजी, तेरे कारण मैं एक मामूली-सी चिट्ठीरसैनी क्या अपने प्राण भी छोड़ सकता हूँ ।” कहकर, ट-ट-ट करता हुआ, पीताम्बर आगे बढ़ गया । उसके खच्चर पुल के पार चले गए थे ।

पनार-पार के चार खेतों का मडुवा गोड़ने में चार ही दिन लगाए रमौती ने और साबुली दिदी की कही बात आगे आके रही—“बैणा, बिना खसम की जवानी के दिन काटना, चिफल पाथरों (चिकने पत्थरों) पर पाँव धरके चलना एक-सा होता है । अब नहीं, तो तब । बिना फिसले और चोट खाए तो पाँवों को कल पड़नी है नहीं ।...”

खच्चर हाँकते-हाँकते, पीताम्बर रमौती का मन भी हाँक ले गया—“वन का काँटा लगता है, तो पाँवों से तत्काल निकाल दिया जाता है, भौजी ! पर मन का काँटा तो कलेजे से लगा कर रखा जाता है । जबसे तुझे पहली चिट्ठी पढ़के सुनाई, तेरी सूरत तभी से कलेजे में दो-मुखिया काँटे सी चुभ रही थी, आज तक कलेजे से लगा रखा है ।...”

नौनी और नारी को पिघलते कहाँ देर लगती है ?

रमौती प्यार की भूखी तो थी ही, जो कुछ शंका थी वह भी पीताम्बर ने खच्चर-सी प्यार के एक ही सोंटे से हाँक दी—“तू कैसी बिधौ, रमौ ? तू तो अनचखा-फल है । फिर क्यों भूखी की आग में जलती है ?”

सच वैधव्य, के दिन भरी जवानी में काटना भूमी की आग में जलने-जैसा ही है।

बोली—“तो क्या करूँ, पानेज्यू ?”

“किसी के बैठ जा। खरी बात कहूँ, बिना मरद के किसी की जवानी नहीं कटी। लता को आधार तो लेना ही पड़ता है।”

“पर, पानेज्यू, मुझ अभागी को कौन देगा आधार ?”

“रमौ, तुझे जो पाएगा, कलेजे से लगा के रखेगा। जिमे देगी, तू आधार देगी। मैं तो तुझे पाकर, अपने सात जन्म धन्य समझूँगा।”—पीताम्बर ने उसका हाथ थाम लिया।

“कोई देख लेगा, पानेज्यू !” रमौती शरमाकर, पीछे हट गई। मगर, हाथ ऐसा लगा, जैसे झड़ गया हो। इतना ताप होता है, मरदों के हाथ में ?

बोली—“पानेज्यू, पानी पीकर जूठा कर देने वाले बहुत मिल जाते हैं। पर लगी को निभाना तो सब नहीं जानते न ? फिर ऐसा धागा जोड़ने से क्या फायदा, जो आगे चल के टूट जाए ? मैं ठहरी मिट्टी की हाँडी, एक बार जूठी हुई नहीं, कि...कहीं कुछ ऊँच-नीच हुआ नहीं, कि किसी को मुँह दिखाते लायक न रहूँगी।...डूब मरना पड़ेगा कहीं गलेमें पत्थर बाँधकर !...”

“ना, रे रमौ !” पीताम्बर ने उसके आँसू पोंछ दिए—“डूबके मरें, तेरे-मेरे दुश्मन। मैं तुझे हमेशा-हमेशा के लिए, अपने गले में रुद्राक्षों की माला-जैसी गूँथ के रखूँगा।...”

“मगर, पानेज्यू, तुम्हारे घर में तो पहले से ही एक है न ? दूसरे कहाँ मैं जिमदार (ठाकुर) और कहाँ तुम बाभुण (ब्राह्मण) ?...लोग तुम्हें बदनाम करेंगे।”

“अलमोड़े के शम्भुदत्त पंत लिली क्रिस्तान के प्यार में डेनियल पंत बन गए, किसी ने कुछ नहीं कहा। भानमती जोश्याण इद्रू कलाल के घर बुरके में घुस गई है, उसे किसी ने रोका-थामा नहीं।...” पीताम्बर बोला—“एक तू-मैं कौन-सा सन सतावन का गदर कर रहे हैं ? फिर तू और मैं तो एक-धरम—हिन्दू धरम के हैं। मैंने हिन्दुस्तान के इतिहास में पढ़ रखा है, अब तू सुन ले। जिन चार वेदों से हिन्दू धरम चलता है और जिनमें श्रेष्ठ ब्राह्मण, मध्यम ठाकुर और निकृष्ट शूद्र-वैश्य—ये चार जातियों को अलग-अलग काम

सोंपे गए हैं—उनमें भी यही लिखा है, कि खान-पान और ब्याह आदि में कोई भेद न था ।...

‘ओ बा, पानेज्यू कितने विद्वान् हैं ? सब वेद-शास्त्रों की विद्या जानते हैं । ब्राह्मणों को श्रेष्ठ इसीलिए तो माना गया है ? इतनी दूर तक सोच-विचार के हाथ थामे रहे हैं, तो छोड़ न देंगे ।

फिर भी बोली—“भार तो बन गया है, यह पापी तन मुझे । तुम्हारे कंधों का सहारा मिल जाए, पानेज्यू, तो घन भाग मेरे । पर घर की जो है ?...”

“अपनी किस्मत का वह खाएगी और अपने हिस्से का तू खाना-पहनना ।” पीताम्बर बोला—“चिट्ठीरसैनी क्या छोड़ी, तीस की जगह सौ का रास्ता बन गया है । बड़ी लैन के दुकानदारों के यहाँ अलमोड़ा से सामान पहुँचाता हूँ, चार रोटियाँ चोखी निकल आती हैं । मुझे तो लगता है, मेरी कमाई में यह बरकत तेरे ही हिस्से की आई है ।...”

बस, औरत की समझ कितनी ?

चिकने पाथरों का चलना पाँवों को ले ही बैठा और रमौती ने जी-भर वह सुख भोगा ; जिसे साबुली दिदी से सुना करती थी ।

छलुक...

पीताम्बर चिट्ठीरसैन के प्यार की सुनहरी, चमकीली, छोटी मछली रमौती के उदर-पनार में प्रवेश पा गई ।

आषाढ़-निकाल अलग हुई थी । फिर आगे के दिन तो ऐसे बीत गए, जैसे फरफराती हवा का एक शीतल झोंका भरे-भरे कपोलों और बिखरे-बालों पर से बिछुलता चला जाए । जैसे पनार की कोई छलुक-छलुक करती हिलोर पानी की सतह से ऊपर निकले पत्थर पर घूप सेंकती किसी गदलुवा मछली को अपने साथ दूर तक बहा ले जाए—और जैसे कोई कंधों पर बुरूश के फूल-जैसे गुदगुदे हाथ फिराता चला जाए...रमौ... रमौ...रमौ...

पीताम्बर चिट्ठीरसैन भी रमौती के प्यार में ऐसा डूबा, कि खच्चरों को, लादने की जगह, बाड़ेछीना से थोड़ा इधर शील गांव के पड़ाव में बांधकर—रमौती की प्रतीक्षा में—लखुड्यार की पुल के पास बैठा सीटी बजा-बजा के समय बिताने लगा और फिर बाकी हाल-समाचार तो बार-बार की गुफाओं ने ही जाने-सुने ।

आषाढ़ निकल गया, सावन लगा । बीता, भादो लगा । पनार का पानी बढ़ता गया, बढ़ता गया...और अब लग गया असोज...चौमसिया-मेघ-जर्मन-जापान की लड़ाइयाँ लड़के भी बच गए सिपाहियों की तरह घर लौटने लगे । पनार भी उतार पर आ गई ।

मगर...

मगर, रमौती की उदर-पनार का प्रवाह और तीव्र होता गया । पीताम्बर चिट्ठीरसन के प्यार की सुनहरी मछली वहाँ पलती गई और एक दिन उसने छलुक-छलुक करना शुरू कर दिया, तो रमौती को चिफल पाथरों में पाँव फिसलने का परिणाम मालूम हुआ ।...

यों, रमौती का मन तो तभी शंकित हो गया था, जब अलग होने की पाली टल गई ।...

सावन निकलने लगा था ।

साबुली दिदी बोली — “रमौ वे, अबके तेरे बिगौत खाने की बहार है । मुझे तो चौथा लग ही रहा था, तेरी बड़ी हीलदारन दिदी की भी यह पाल टल गई है ।...”

“पाल टल जाने से क्या होता है, दिदी ?”

“मोहनसींग होते, तो तेरी पाल भी खुद ही टल जाती और तब मुझे खुद ही मालूम भी पड़ जाता ...” साबुली दिदी ने उसे चिंगोटी काट दी थी ।

पर, उससे भी बड़ी चिंगोटी तो उसे पीताम्बर ने काट दी थी — ओबा, कहीं...

और एक दिन साबुली बोली — “बैणा, एक बात बहुत दिनों से कहने को थी । बखत बुरा है । लोगों की नियत बुरी और तेरी उमर बुरी । बिन ग्वाले की गाय को वन चरते में चारों ओर देखना पड़ता है ।... तुझे तो मैं पहले से ही छोटी बहन की तरह प्यार करती हूँ । तेरा तन आजकल बहुत खिल रहा है । कहीं गलत जगह पाँव मत रख देना । यह उमर बहुत बुरी होती है, बैणा !...”

पर, अब रमौती क्या करती ? पनार-पैठी मछली कहीं बाहर निकलती है ?

लाज के मारे तो मुँह टूटता था, पर कहना ही पड़ा एक दिन — “पानेज्यू, आज कल करते चार महीने हो गए । कब ले जाओगे मुझे अपने घर ? मैं तो... मैं तो महीनों से हूँ ।...”

बड़ी लैन में खच्चर हाँकता, आज बहुत दिनों के बाद मिला था

पीताम्बर । रमौती की बात सुनी, तो नारियल के पनोटे वाली चिलम ऊंची करली और दो फूँक मारने के बाद, टे-टे-टे-टू-टू खच्चरों को हाँकता, आगे बढ़ गया ।

रमौती बार-बार देखकर, कि कोई देख तो नहीं रहा, दीड़ी-दीड़ी आगे आई और पीताम्बर के पाँव पकड़ लिए—“पानेज्यू, मुझ अभागी की लाज रख लो । कहाँ मुख दिखाऊँगी, यह कलंक लेकर ? कौन ताल पत्थर बाँध के डूब मरूँगी ।”

“जो तुझको सबसे ज्यादा गहरा लगे ।”—पीताम्बर बोला—“मैं कहाँ ले जाऊँ तुझे ? ऐसे ही मेरी गत बिगड़ रही है । जहाँ जाता हूँ, लोग नजर फेर लेते हैं, कि दिवान-खानदान के पाने ने किस गू में मुँह डाला ।... बढिया इज्जत की सरकारी नौकरी चिट्ठीरसैनी थी । जहाँ जाता था, जो मिलता था, ‘चिट्ठीरसैन—चिट्ठीरसैन सैप’ होती थी । पर, तूने ऐसी मति फेरी, कि अब लोग ‘पितू घोड़िया रे’ कहते हैं । चमारों-कुम्हारों का घन्घा तो यह है ही । खच्चरों की पूँछ ऐंठते-ऐंठते हाथों में खड्डे पड़ गए, नून-तेल का खर्चा निकालना मुश्किल हो गया है । कोई निगरगडमोटा तो हूँ नहीं, कि न आगे नाथू, न पीछे सिद्धू ।... घर वाली है, ईश्वर ने उसकी गोद में अबके साल बेटा दे रखा है ।... भली, कोई और घर ढूँढ़ ।... यहाँ तो अपनी ही उबड़ी ढाँकने में जान जा रही है । अपना ही दो छटाँक का पेट परवत हो गया है । सरकारी नौकरी छोड़ के अब पछता रहा हूँ । मैंने तो फिर से अलमोड़ा के जनरल पोस्ट मास्टर सैप के यहाँ अप्लीकेशन दे दी है, कि भूल-चूक की माफी देके, फिर से चिट्ठीरसैनी पर लगा देवें ।...”

और पीताम्बर ने सोंटा मारकर, खच्चर हाँकने शुरू कर दिए—“चल्ल, बढ़ जा आगे, तेरी नानी की दुम में पड़ जाऐं कीड़े, सुसरी बीच सड़क में घंड़ती है ? - ”

“चिट्ठीरसैन सैप... इतना अन्याय न करो, मुझ गरीब पर । तुम तो उमर भर आसरा देने की बात कहते थे ? रुद्राक्ष की माला बनाकर पहनने की बात करते थे ?” रमौती रो पड़ी—“तभी मैंने भी बिन सोचे-समझे खड्ड में पाँव डाल दिया । पराई अमानत थी, तुम्हें तन सौंप दिया ।...”

“तो इसमें अहसान की क्या बात है ?” पीताम्बर मुड़कर बोला — “तुझ को भी कोई चढ़ती जवानी को संभालनेवाला चाहिए था और उन दिनों मेरे गिरिश की माँ भी महीनों से थी — दोनों की गरज निभ गई । कोई तेरा हाड़-मांस तो मैंने खा नहीं लिया ? फिर मेरे गले क्यों पड़ती है ? मेरी तो अपनी ही गृहस्थी नहीं संभल पा रही है । कोई जोबन तो तेरा ढल नहीं गया ? फिर मुझ-जैसे दश-पाँच यार और भी तो होंगे ? किसी को उन्हीं में से पकड़ ले ।”

“पानेज्यू... ऐसी पाप की बात क्यों करते हो ?” रमौती चीख उठी ।

“बस, बस, रहने दे ये सब तिरिया-चरित्तर ।” पीताम्बर कड़क कर, बोला — “कौन-सी सती सावित्री है, तू ? अरे, जो अपने घरम के स्वामी से घात कर गई, वह पाप के संगी का साथ क्या निभाएगी ? तेरी अथाम जवानी एक मुझ से तो थमी न होगी ?”

“मुझ पर न सही, अपने इस अजन्मे-बच्चे पर तो दया करो, पानेज्यू !” रमौती ने फिर दौड़कर पाँव पकड़ लिए ।

“हट्ट ! मारूँगा नहीं तो खच्चर हाँकने वाले सोटे से ही चार तेरे बमकुवा भेलों<sup>१</sup> में । न जाने किसका भुटका<sup>२</sup> गगाकर लाई है । मेरा ही क्या नाम लिखा है, उसके कपाल में ?” कहकर, पीताम्बर तेजी से खच्चरों को हाँकता आगे बढ़ गया — “चल्ल, तेरे बाप की घरवाली मर जाए । सुसरी बीच सड़क में लीद करती है ?...”

---

१—उन्मत्त अंग ।

२—अनैतिक गर्भ ।

**और**, यों, आज रमौती को आकाश देखनी, पाताल हेरनी हो गई थी ।...

पुल के पास से खच्चरों को 'चल-चल' करता, पीताम्बर पाने आगे बढ़ गया था और रमौती सड़क की धूल-गुबार में खड़ी रह गई । धीरे-धीरे धूल-गुबार भी थोड़ी उड़ गई, थोड़ी बैठ गई और तब रमौती को ऐसा लगा, कि जैसे चरमराते-चरमराते लखुड्यार का पुल एक ही भटके में टूट गया है । ..

सामने बाड़ेछीना की ओर से मुसाफिरों का काफिला आ रहा था, गाते हुए—'देगा हाता रुमाव तयारा, बों हाता में घड़ि—हाई, के भल देखीछ, रे मेर बलमा चाड़ि !' १

रमौती टूटे-पाँवों से सड़क-नीचे उतर आई । पनार के किनारे-किनारे चलती, वह दल की दुकान की सीध में, ऊडलगों वाले रास्ते में पड़ने वाले गहरे ताल भंसीखाल तक आ पहुँची । वहाँ बाँध बँधा हुआ था । प्रचंड असोजी-पनार हहराती नीचे गिर रही थी । शायद, वह सुनहरी, चमकीली और छोटी मछली भी बाँध-बँधी पनार की हिलोरों बहती-बहती, उस उतार से नीचे उतर गई हो ?

और अब रमौती का अपावन-शरीर भी पनार की असंख्य-हिलोरों में विलीन होता-होता, प्रचंड-प्रपात-सी बाँध-चूल से गिरती धारा में समाहित हो जाएगा ।...

---

१ दाँप हाथ में रुमाल है और बाँप हाथ में घड़ी बाँध रखी है, ओह, मेरा प्रियतम-पंखी कितना सुन्दर दिखाई दे रहा है ।...

और, शायद, उस प्रचंड-फेनिल धार में रमौती की अपावन-देह एक बार गोलाकार होकर, घूम जाए ? रमौती के गोल-गोल टुलटुलाते आँसुओं की तरह...और उनकी ही तरह गोल-गोल दायरों में बँटते, पनार के छुलछुलाते पानी की तरह ?...

रमौती को लगा, सारी पृथ्वी उसके सिर की तरह घूमने लगी है—आँसुओं की तरह, दायरों की तरह, वृत्ताकार होकर—और उस घुमाव में ही रमौती की बाह्य-चेतना भी विलीन होती गई ।...

दिगौ...ला...ली...

इस समय साबुली दिदी क्या करती होगी ? नानी (छोटी) जूली क्या करती होगी ? वह गठुवा तिरलोक क्या करता होगा ? बड़ी हौलदारन दिदी क्या करती होगी ? आँगन में बँठे गुड़-गुड़ तम्बाकू पीते, आनसींग सौरज्यू क्या करते होंगे ? तिरलोक के लिए मिसरी ले जाते हुए, हौलदार ज्याठज्यू कहाँ पहुँच गए होंगे ? भाई सडुवा क्या करता होगा ? चैत की 'भिटीली' किसे देगा अब वह ? इजा-बौज्यू-गांगुली दिदी—सब...सब क्या करते होंगे ?

दिगौ...

टुलुक...

दिगौ...

छुलुक...

ले, माँ पनार, सँभाल इस अपावन-अभागन देह को ।...

रमौती असौजी-पनार की प्रशस्त-गोद में समा गई । क्षण-भर में ही पनार का पानी भँवरा-सा गया—रमौ...रमौ...रमौ...

होल्ट !...

नाथू होलदार के बाएँ-दाँए बूट में अपने आप ही टक्कर हो गई। एक क्षण 'अटेन्शन' की मुद्रा में खड़ा रहने के बाद, उन्होंने पनार की ओर 'डबल-क्विकमार्च' किया।

दल की दुकान में 'कोटपीस' के चार हाथ फिराकर, सनी तिरलोक के लिए मिमरी के कुंजे लेकर लौट रहे थे, तो पनार-वार आने पर देखा, कोई औरत भुकी-भुकी, एकटक भेंसीखाल के गुरे-नीले पानी को ताक रही है। पुरुष होना, तो नाथू होलदार सोचते, कोई मच्छीमार बल्सी छटकाके खड़ा होगा। पर, औरत जात का गहरे ताल को टुकुर-टुकुर यों ताकना—नाथू होलदार के बूटों की कीलें उस समय ही, शंका के कारण, धरती में गड़ गई थी और वो 'स्टेन्डिजी' होकर देख रहे थे, कि आखिर भेंसीखाल के उथले-पाट में यह बारहपाट का घाघरा पहनने वाली औरत जात कर क्या रही है ?

नाथू होलदार अपनी अटकल भिड़ाने की सोच ही रहे थे, कि छपाक से वह भेंसीखाल में कूद ही पड़ी और नाथू होलदार ने एकदम दौड़ काटी और भेंसीखाल के किनारे जा पहुँचे।

भेंसीखाल की गहराई में तल तक डूबकर, बुड़-बुड़-बुड़-बुड़ पानी पीती-उगलती, सिर्फ एक बार रमौती सतह पर उतरी और दूसरे ही क्षण पानी के बहाव के साथ बह गई।

“होल्ट !” नाथू होलदार पूरी ताकत से चीखे और मय बूटों के भेंसीखाल में कूद पड़े।...

बहती-बहती ज्योंही बाँध के सिरे पर पहुँची थी, कि नाथू होलदार के हाथ में रमौती की लटी आ गई। नाथू होलदार ने एक हाथ से कसकर बालों को पकड़ा, दूसरे से पानी के बहाव का सामना करते हुए, उथले पाट की ओर आने का प्रयास करने लगे। पानी के प्रचंड-बहाव और दबाव से नाथू होलदार की पिडलियाँ ऐंठने लगीं थीं और घुटने टूटते-से लग रहे थे और नाथू होलदार को, जिन्दगी में पहली बार, अपने पलटनिया-बूँटों पर गुस्सा आ रहा था। पानी भर जाने से, बूँट भारी हो गए थे और तैरने में बड़ी परेशानी हो रही थी।

“मन ही मन, ‘हे ईश्वर ! जरमनी-जैपेन की खतरनाक लड़ाइयों से खैर-सलामती से जिन्दगी को सिर्फ भैंसीखाल की मछलियों के लिए ही लौटा लाया था क्या ?’ प्रश्न करते हुए और प्रार्थना करते हुए, ‘हे, दीनदयाल ! आज तू मेरी लाज रख ले, कल से मैं तेरा नाम लूँगा।’—नाथू होलदार पूरी शक्ति लगाकर, वारफाट आने की कोशिश कर रहे थे, पर हर क्षण ऊपर से आते बहाव की टक्कर से लड़खड़ा जाते थे। धीरे-धीरे उनके अंक एकदम शिथिल पड़ने लगे, बेहोश रमौती के भार ने तो उन्हें एकदम ही अशक्त कर दिया और वो बाँध के सिरे की ओर बहने लगे।”

नाथू होलदार ने तब तक रमौती को पहचान लिया था। उसकी लटी को वो कसकर पकड़े हुए थे, कि ‘रहती जिन्दगी की सलामती तक तो नहीं ही छोड़ूँगा।’ पर, आने वाला प्रत्येक क्षण उन्हें ‘डेथ-भैली’<sup>१</sup> की ओर खींच रहा था... यों भैंसीताल की गहराई से उथले पाट की ओर आ गए थे होलदार, पर पाँव लड़खड़ा गए, टिकाए नहीं जा सके पोली-पिलपिली मिट्टी पर और बाँध के सिरे पर से प्रचंड-धार पनार-पानी की आवाज नाथू होलदार के कानों के पास ‘हैंड गिरनट’ (हाथ-बम) जैसी फूटी और नाथू होलदार को याद आया, उनके कोट की जेब में सनी तिरलोक की मिमरी पड़ी हुई है... और, जब वो घर से चले थे, बड़ी होलदारन चन्द्रावती ने कहा था—“हँ हो, तुम्हारे कोट का एक बटन टूटा हुआ है, इसे लगा दूँ, फिर जाना।” और साबुली

हौलदार ने जूली के नन्हें-नन्हें हाथों को अपने हाथों से पकड़कर हिलाया था—“बेली, फादर को, बीज्यू को टा-टा कर...”

...और ‘हट, तेरे ईश्वर-पीश्वर की ऐसी-की-तैसी !’ कहते हुए, नाथू हौलदार ने एक ‘हाई जम्प’ सी मारी और फिर दूसरी, फिर तीसरी, चौथी... नाथू हौलदार भंसीखाल के किनारे से लग गए, पर हाँफते हुए गिर पड़े। उन्हें ऐसा लगा, जैसे किसी हवाई जहाज में बैठे हैं और पेट्रोल खतम हो जाने से हवाई जहाज तेजी से जमीन पर गिर रहा है... अपनी बेहोशी में ही उन्होंने रमोती की लटी को और जोर से कस लिया, तो उसमें लगी आलपीन खुलकर उनकी हथेली में जोर से चुभ गई और उनकी जाती चेतना लौट आई—“ब्वारी, रमो...”

अपने शिथिल अंगों को झटककर, नाथू हौलदार ने तेजी से अपने बूँट उतार डाले। रमोती की फटी-फटी, शून्य-दिशा में उघड़ी आँखों में मृत्यु की छाया उतरने लगी थी। लगातार डूबते-उतराते में नाक-मुँह की राह से पानी अन्दर भर गया था और वह निश्चेष्ट हो चुकी थी।

जिन्दगी में पहली बार नाथू हौलदार की आँखों से आँसू टपक पड़े—“ब्वारी रमो... ब्वारी रमो...”

उत्तर में सिर्फ रमोती के हाथ-पाँव मुड़ने लगे और गरदन ऐंठने लगी।...

सहसा नाथू हौलदार बाज की तरह झपटे और रमोती की लाश को हाथों में उठाकर, सूखी रेत में ले आए। आँधे-मुह रमोती को लिटाकर, उसके घाघरे को ऊपर कर, ‘शिवोम-शिवोम’ (शिव ओम्, शिव ओम्) कहते हुए नाथू हौलदार ने रमोती को अनावृत्त कर दिया और फिर सूखी रेत से उसे गरदन तक ढाँक दिया। कुछ देर हीले-हीले उसके पेट को दबाते रहे, ताकि पानी निकल जाए। इसके बाद उन्होंने अपने आँसुओं को पोंछा और उनके हाथ आकाश की ओर उठ गए—“ईश्वर हो, परमेश्वर हो ! है तू कही और तेरी कोई दया-माया किसी दुनियाँ में है और तू यदि दीन-दुखियों अपने भक्त-जनों की पुकार सुनने वाला और तू यदि चींटी से हाथी तक की सबकी विपदा को यदि हरने वाला है, भक्त अजामिल को तूने ही तारा कहते हैं, ऋषी-मुनी

लोग और यह भी ऋषी-मुनी लोगों ने ही अपने चार वेद-पुराणों में कहा है, कि जब बिपद पड़ी द्रौपदी पर, कि पापी दुशाशन ने दोनों हाथ से जोर लगाके माता द्रौपदी की चीर खैची, तो हे कृष्ण नमो भगवते, मथुरा में गए थे कंस को बध कियो, माता द्रौपदी की चीर बढ़ाकर सात मील (मील) लम्बी कर दी, कि दुशाशन के दोनों हाथ खींचने से मजबूर-चचूर हो गए !... तो हे विधाता, मेरे ही पूरब जनम में क्या खोट रही, यदि मेरी ब्वारी रमो देखते-देखते मेरी आँखों की रोशनी-सलामती के मुझे बिना ब्वारी की बना गई ?...हे ईश्वर, परमेश्वर ! मैंने वास्ते अपने नमक का हक अदा करने के, अपने भाई मांहुनिया को बिरटिश लाम में भेज दिया—उसकी आत्मा को मैं क्या मुँह दिखाऊँगा ?”

और नाथू हीलदार को प्रार्थना करते-करते जोर से रुलाई आ गई—  
“हट्ट, तेरे ईश्वर-पीश्वर की ऐसी-की-तैसी, मेरी ब्वारी ..”

“अं...अं...”रमौती का क्षीण-स्वर सुनकर नाथू हीलदार ने उसके सिर पर हाथ रख दिया—“मेरी ब्वारी, ब्वारी रमौ...हे, ईश्वर-परमेश्वर ! तेरी जै-जैकार चारो दिशाओं पूरब-पश्चिम में, उत्तर दक्खिन में होवे, मेरे विधाता !...लेटी रह, ब्वारी रमौ, थोड़ी देर और ऐसी ही लेटी रह...पानी को उका-उका उखाल दे, तन-बदन के पानी को सूखे बलुवे (बालू) से रत्ती-रत्ती सोख ले...मेरी ब्वारी रमौ...हे, परमेश्वर ! हे, ईश्वर ! तेरी दया-माया अपने इस गुनहगार भगत पर ताबे-जिन्दगी हील-लैफ ऐसी ही बने रहे ।... शिबोम्-शिबोम्-ओम्-नमो-भगवते...”

रमौती मत्त-मुख से लौट आई थी, पर अभी उसकी मूर्च्छना और अशक्तता दूर नहीं हो सकी थी।

आखिर नाथू होलदार ने उसे पीठ पर लादा और एक हाथ से कमर के पास रमौती को, दूसरे में फीतों में गाँठ देकर बूटों को लटकाए—नाथू होलदार गाँव की ओर चल पड़े। यों दलकी दुकान समीप पड़ती थी, पर वहाँ चार आदमी हर समय रहते हैं। लोग न जाने क्या-क्या कहें-समझें?... नाथू होलदार तो चाहते थे, कि घर पहुँचने तक कोई भी नहीं देखे तो, और अच्छा रहेगा।

मगर, आधी ही चढ़ाई तय की थी, कि ऊपर से रुदरसींग आता दिखाई दिया। नाथू होलदार को देखते ही, साश्चर्य पूछने लगा—“क्यों हो, होलदार दा, पीठ में क्या है?”

नाथू होलदार के कुछ कहने से पहले ही, वह करीब आ गया और रमौती को पहचानते ही बोला—“अरे, रमौती भोजी को क्या हुआ?”

नाथू होलदार चढ़ाई चढ़ते-चढ़ते थक गए थे। हाँफने के कारण, बोलना मुश्किल हो रहा था। रुककर, आराम करने का समय नहीं था। घर पहुँचकर, कुछ उपचार करने की आवश्यकता थी।

ज्यों-त्यों, बूट वाले हाथ की आस्तीन से माथे का पसीना पोंछा और चलते हुए बोले—“भाया, चौमास की गाड़ (नदी) ठहरी। पार-फाट कहीं खेतों में काम करने गई होगी। आते में पनार तर नहीं पाई, फिसल गई होगी, मरते-मरते बची है।... ओ-के, जैसी ईश्वर की मर्जी, मुझे घर जल्दी पहुँचना है।...”

बड़ी होलदारन आंगन की दीवार पर खड़ी हो-होकर, माथे पर हाथ-हथेली आड़े लगाकर, बार-बार दल की दुकान तक पहुँचने वाली सड़क को देख रही थी ।

आनसींग खाके, तम्बाकू पीके, सो गए थे । साबुली को भी बड़ी होलदारन ने ज़िद करके खिला दिया था, कि अब कब तक ठहरेगी उनके लिए तू, मैं तो हूँ ही ।

साबुली, सीढ़ियों पर बैठी, जूली को दूध-भात खिला रही थी । वहीं से बोली—“नहीं दिखते, दिदी ?” और, अभी तक रमोती ब्वारी भी तो नहीं आई ? छोरी आज-कल बड़ी दुखी-दुखी रहती है । अभागन को दुख के सिवा परमेश्वर ने और कुछ दिया भी नहीं । किधर पनार-पार के खेतों में गई है न ?”

बड़ी होलदारन पहले प्रश्न के उत्तर में ‘ना’ और दूसरे प्रश्न के उत्तर में ‘हाँ’ की मुद्रा में सिर हिलाकर, मुड़ने ही लगी थी, कि नाथू होलदार दिख गए । साबुली से बोली—“जातो, वे ! ऊँ नीचे से आ रहे हैं । पीठ पर न-जाने किसका बोझा उठा लाए हैं ? धवाँ-पवाँ-धवाँ-पवाँ कर रहे हैं । जा, तू जा तो जरा । मैंने एक ही धोती पहन रखी है और यह भी सुसरी पलटन से वैल की (वायल की) उठा लाए हैं, चलने-फिरने में लाज ढँकना मुश्किल हो जाती है ।...”

साबुली होलदारन, जल्दी-जल्दी चलते हुए, नाथू होलदार के समीप पहुँची, तो पीठ पर अस्त-व्यस्त और मूर्छित रमोती को देख भोचक प्रश्नचिह्न-सी खड़ी रह गई । नाथू होलदार के पीछे-पीछे रुदरसींग भी आ पहुँचा था । साबुली ने रमोती को खड़ा करने में सहारा दिया, उसके कपड़ों को ठीक किया और नाथू होलदार को एक तरफ कर, उसे अपनी पीठ पर लाद लिया ।

आंगन में पहुँचने तक, पड़ौस के लोग एकत्र होने लग गए थे, एक भीड़-सी लग गई । सबके मुख पर आश्चर्य पानी के बहाव से तैरते-नाचते तिनकों की तरह एकत्र हो रहा था ?...?...?...

बड़ी होलदारन ने तो समझा, कि रमोती मर चुकी है, सो लगी रोने—  
“अरी, मेरी ब्वारी, ये क्या देख रही हूँ तुझे मैं ? हाई, मेरी इन आँखों को

चील कौवे लग जाएँ, निकाल के सिमासार के ढाँसी पत्थरों पर रख आएँ .. हाई, मेरी बैणा-ब्वारी रमो, अब कौन मेरे सिर में अपने हौसिया हाथों से ठुँग मारेगा और कौन....”

“बसकर, वे, बसकर । साँभ समय के स्यालों (गीदड़ों)-जैसा सुर तुझे भी लगता रहता है । डेढ़-इंची जवान भी काबू में नहीं रखी जाती तुझसे ? मैं जब बटैलन नम्बर टू में था, तो पूरे फिफटी-फाइब जवानों को अन्डर ट्रेनिंग काबू में रख के लेफ्ट-रैट करवाता था ।...अब ब्योली की तरह मेरा मुँह क्या देखती है ? जरा कालीमिरच की चहा तैयार कर । पत्ती लिफटन की छोड़ना । सनी तिरलोक की माता से कमरे में मेरा मिलीटरी वाला कम्बल डबल-टिरवल करके बिछवा दे । जरा क्विकली दोड़ काट ।” नाथू होलदार बोले—“सौरी, सनी तिरलोक की माता ने तो ब्वारी को पकड़ रखा है । तू ही बिछा दे कम्बल ।...”

रमोती को कम्बल में लिटा लेने के बाद, नाथू होलदार ने इर्द-गिर्द खड़े लोगों की ओर मुख किया—“पनार-पारफाट के खेतों में गई थी छोकरी, आते वक्त गाड़ तर नहीं सकी । बह गई । बहते-बहते भेंसीखाल तक आ पहुँची । लेकिन जो मंजूरे-खुदाई होता है, लाख चाहे इन्सान क्या होता है ? जाको राखी साँइया, मार न सकेगा कोय । दल की दुकान से मैं सनी तिरलोक के लिए ‘स्वीट’ लेके लौट रहा था ।...”

“पर, होलदार दा, रमोती भौजी तो कबसे भेंसीखाल के पास खड़ी थी ? वहीं से उसने ताल में फटक मारी—और तू कहता है, वह ऊपर से बहती-बहती भेंसीखाल पहुँची ? अरे, उतनी दूर से बहती तो पनार के गंगलोंढ़ों से एक हाड़ के चार बन जाते ।...” पीछे खड़ा रुदरसींग बोला ।

“ईश्वर करे, एक हाड़ के चार हाड़ तेरे घरवालों के बनें । डैमफूल ! कीप क्वैट, गेटोट !...”—नाथू होलदार कड़ककर, बोले—“क्यों रुदर, तुझसे कौन पूछ रहा है, कि क्या हुआ, क्या नहीं हुआ ? कुबानी बोलता है ? अरे, सवाल यह थोड़ी है, कि कहाँ से बह के और क्यों आई, कहाँ पहुँची ?... फर्ज की, हक की, मतलब की बात तो चार आँखर की, दो लफ्जों की है, कि ब्वारी डूब गई थी और मैं न होता, मेरी पलटन की स्वीमिंग-नौलेज यानी

कि वौं काटने (तैरने) की विद्या नहीं होती, तो भेंसीखाल-की-भेंसीखाल में ही रह जाती आज मेरी ब्वारी ! और क्यों, रे रुदर, तू जब देख ही रहा था, कि रमौ ब्वारी भेंसीखाल के पास बहके डूब रही है, तो तू क्या अपने लड़ियों (लाड़लों) का धुँआ देख रहा था ?...जिलस, फूल, डैमिस परसन ! जब ब्वारी को पीठ पर लगा के घर के करीब पहुँच गया, तब अपना-जैसा हाथ लगाने को आता है।...ओके-ओल रेंट, कभी डूबने दे तेरी ब्वारी को भी।....”

नाथू होलदार रोष-पूर्वक बड़बड़ाए ही जा रहे थे, कि घोर विस्मय जताती, रुदरसींग की माँ बोली—“अरे, राम-शिव रे ! ब्वारी (बहू) को अपनी पीठ में चढ़ा के लाया, नाथू ? हे राम, हे राम, हे शिव ! पाप छिमा ! पाप छिमा !...हे, बिधाता, घोर कलजुग इसी को कहते हैं ? सुन लो, रे, सब गोंवालों, नाथू होलदार की करतूत देख लो। ब्वारी की छाया छूने में भी जेठाणे (जेठ) के लिए गऊ-हत्या के बराबर पाप माना गया है और नाथू उसको पीठ पर चढ़ा-चढ़ा कर लाया है। हे, राम ! इस पाप का पराशित (प्रायश्चित) भी तीन लोकों में कहीं नहीं है। आनसींग ज्याठज्यू (जेठ जी) कहाँ हैं, उनसे बोलो, कि नाथू की आतम-शुद्धि करवाले, किसी पुरोहित को बूला कर।....”

“आतम-शुद्धि कर तू, काकी, और आतम-शुद्धि करे तेरा बेटा रुदर ! नाथू होलदार का करता है बाँए पाँव का सत्तर कीलों वाला बूँट।”—नाथू होलदार बोले—‘मैं नहीं पानी में कूद मारके निकालता, मैं नहीं ‘आरटीफिशल-रेकरेशन’ देके फस्टेड (प्राथमिक-उपचार) करता, तो क्या ब्वारी को डूब के मरने देता ? जो इन्सान की जान की सलामती के वास्ते किए गए फर्ज-अदायगी को पाप कहते हैं, ऐसों के ईमान-धरम को नाथू होलदार ठोकर मारते हैं।.... जा, काकी, अपने घर जा। यहाँ ब्वारी की जान पर बीती जा रही है और इन दो माँ-बेटों को धरम-करम सूझ रहा है। हैलो, मनी तिरलोक की बड़ी माता। चहा तैयार नहीं हुई, काली मिर्ची की ?....”

रुदरसींग की माँ का अंग-अंग गुस्से से फिरकनी खाने लगा और कतुए-सी घूमती वह, रुदरसींग का हाथ पकड़कर, देली के बाहर आ गई। सीढ़ियों पर से गिरते-गिरते बची, तो आँगन में खड़ी होके दम लेने लगी—“चल, चल, बेटे रुदरिया ! पापियों को पुण्य के वचन देने से भी पाप ही लगता है। इस

नथुवा सिपाही से बात-चीत करना और बिच्छी की पूँछ पर हाथ फेरना—  
 दोनों बरोबर हैं। लाम में जिदगी-भर बिलेंत के गोरे बिरटिश सैपों की  
 गुलामी करके, एक फिटडी कंधे पर क्या लाया है, गों-भर में बाघ-जंमी डुडाठ  
 करता फिरता है ! ...चल, चल, बेटे रुदरिया ! अपने को क्या करना है ?  
 मैं तो चली आई थी, कि पास-पड़ोस का मामला है, जरा दुःख-सुख में सिर  
 पर हाथ फिरा देना अपना धरम है। ...पर, बवा रे, आनसीग ज्याठज्यू के  
 इस जतिए-जैसे नथुवे से बोलना, भिमोड़ो (बर) के पूडों में हाथ डालना, दोनों  
 बरोबर हैं। चल, चल, बेटे रुदरिया ! हमने अपना फर्ज अदा कर दिया,  
 पाप-पराशित इन पापियों के मिर रहा। ईश्वर परमेश्वर को भी दो आँखें हैं,  
 वही न्यो-निसाफ करेगा। चल, चल, बेटे रुदरिया ! ...”

सब लोगों का ध्यान अन्दर रमौती पर ही केन्द्रित था, सो रुदरसीग की  
 माँ को कोई तूल नहीं मिली और वह बड़बड़ाती चली गई।

दानसीग की माँ गंगोतरी घरेलू वैद्यकी में भी थोड़ा दखल रखती ही  
 थी, इसके अलावा देवता भी उसके शरीर में छातछाई (साक्षात्) आता था।

एक-दो बोले, कि भंसीखाल में डूब मारी है, कही कुछ छम-बिछम न हो  
 गया हो ?

बड़ी हौलदारन गंगोतरी से हाथ जोड़कर, बोली—“ज्यू, तुम जरा  
 ब्वारी की नाड़ी भी देख दो और पेट में पानी भर गया हो, तो वो भी—  
 हमारी रमौती को बचा लो ज्यू !”

गंगोतरी रमौती की नाड़ी को पकड़ते ही, एकदम जोर से, ‘छोर्त !’  
 चिल्लाई, तो नथुवा के बौज्यू तेजसींग बोले—“जरा गरम-गरम भभूत दे जा,  
 ओ तिरलोक की महतारी !”

बीच में किसी के मुँह से निकला—“पेट का पानी निकला नहीं है...”

गंगोतरी ने रमौती के पेट पर हाथ फेरा, फिर बोली—“जरा, तुम सब  
 बैंग लोग (पुरुष) बाहर चले जाओ। ...”

पुरुष बाहर चले गए, तो सारी औरतें रमौती को घेरकर बैठ गईं।  
 गंगोतरी ने थोड़ी देर पेट को इधर-उधर से दबाया, तो रमौती ‘आँ-आँ’ करती,  
 बदन को सँभालती उठ बैठी। एक बार उसने अपार विस्मय के साथ अपने

चारों ओर देखा और फिर दूसरे ही क्षण उसे रोना आ गया। साबुली हौलदारन वही पर थी। रमौती ने थोड़ा आगे सरककर, उसकी गोद में खिर डाल दिया और उसका करुण-क्रंदन साबुली की गोद भरने के बाद सारे कमरे में बिखरता-फैलता आँगन तक पहुँच गया।...

गंगोतरी काकी उठी, अपनी लाठी टेकी और बाहर को चली, तो बड़ा हौलदारन बोली—“ज्यू, एक घुटुक काली मिरची की चहा पीके जाओ।”

गंगोतरी काकी मुड़ी, और घृणा के साथ बड़ी हौलदारन को घूरा और मुँह में थूक बनाकर, देली से बाहर चली आई। सीढ़ियाँ उतरी ही थी, कि तेजसींग ने पूछा—“भौजी, रमौती ब्वारी के पेट का पानी निकल गया?”

गंगोतरी काकी ने मुँह में बने हुए थूक को जोर से आँगन में थूका और नाथू हौलदार की ओर आग्नेय-आँखों से देखती-घूरती बोली—“अभी तो नहीं निकला, लेकिन तीन-चार महीने में निकल जाएगा।”

**आ**नसींग महर के आँगन में ऐसी साँझ कभी नहीं उतरी, जैसी आज ।...

कौतुक-वश बरं के छत्ते को पत्थर मारने के बाद, चारों तरफ से क्रोधित बरों की भिनभिनाहट से सहसा ही घिर जाने पर, जैसे कोई चंचल-चपल लड़का हड़बड़ा उठता है, भीति-व्याकुल हो उठता है—कुछ ऐसी ही स्थिति आनसींग के सारे परिवार की हो रही थी । हर कोई ऐसा महसूस कर रहा था, जैसे नाथू होलदार ने अचानक-अचक किसी बहुत बड़े 'भिमोड़ो के पूड' (बर्गों के छत्ते) में अपनी दुनाली बन्दूक की 'मिसफ़ैर' छटका दी है और भिमोड़ों ने क्रुद्ध होकर, चारों तरफ से घेरा डाल दिया है ।...

यह कोई मामूली घटना नहीं घटी थी ।

आनसींग को तो सिर ऊँचा करके तमाखू पीना मुश्किल हो गया था । चिलम का काँसे का पनौटा खाली कर लिया था आनसींग ने, ताकि तमाखू पीते में गुड़-गुड़-गुड़ या गुड़ूँ-रुगुड़ूँ-रु-गुडुक की आवाज न हो और दो-चार हितंषी तमाखू की फूँक मारने के बहाने फिर कहीं आँगन में जमा न हों, कि 'क्यों हो, आनसींग, ब्वारी की तबयत अब कैसी है ?' हालाँकि, उन्हें रमौती की तबियत से कुछ लेना-देना नहीं, बल्कि आनसींग के मन की पतों में फफोले बनाती संताप की और शर्म की राख को कूरेदना होगा ।

नोगों की मनोवेधक-जिज्ञासा और सात जात के प्रश्नों से पीड़ित-परेशान होकर, आनसींग अपनी बिना पानी की चिलम लिए चाख (बैठक) के एक कोने में दुबककर बैठे, अपने जीवन की मारी अप्रिय घटनाओं का लेखा-जोखा लगा रहे थे... सुरुक्क...

कैसा आम के बगीचे-सा भरा-पूरा परिवार था। घर-गिरस्ती रामबाण की रस्सी-सी बँटी हुई थी। परिवार क्या था, सोने का राजवंशी महल था। आनसींग अपने चारों ओर आगे-पीछे, ऊपर-नीचे देखके तमाखू की फूँक मारते थे, तो धुँए का छल्ला खोंतयार (गोफन) से फरफराके घूमके छूटने वाले पत्थर की तरह आसमान की ओर छूटता था। एक दिन वह था।

फिर घर के आधार-खम्भ पुरखे गिर गए, तो आधी शान-शोकत और खुशहाली वैसे ही मिट्टी-पत्थरों के हिस्से लग गई। रही-सही को चूना लगाने के लिए, बड़ा लड़का जमनसींग अपनी घरवाली का हाथ पकड़कर न्यारा हो गया—“बोज्यू, दर असल तुमको मेरा ‘बोज्यू’ (पिताजी) कहना भी ऐसा ही है, जैसे डाँसी पत्थर पर अक्षत-पिठाँ चढ़ाकर, ‘सिरी गणेशाय नमो’ कहना। हो सकता है, जनम मैंने तुमसे ही पाया होवे, पर असली पिता तो आप नाथू और मोहनिया के ही हैं। पल्यूँ के कथा-वाचक पंडित जेदत जी ठीक ही कहते थे, कि जनक का अर्थ ये है, कि सिर्फ पैदा करने वाला, पर असली पिता पालनहार होता है। पर, चार आँखर विनती करने की गुस्ताखी के लिए गर्दन टोर (नत) करके बार-बार छिमा माँगता हूँ, कि आपने मुझ बेटे के और अपने दोनों बेटों नाथू-मोहनिया के पालन-पोषण में नादान काल से अलग-अलग हाथ-पात किया है। सो, आपके बेटे आपको मुबारक हों। मैं अभागा भूपाल की माँ के साथ रूखी-सूखी खाके दिन काटने को जाता हूँ, आगे सब ईश्वर के हाथ है।”

और आगे भी ईश्वर का हाथ ऐसा रहा आनसींग पर, कि मुँगरिया केले के पात-सा चौड़ा और गंगलोढ़े-सा चिकना बेटा मोहनिया हाथ से निकल गया...

और रह गई, बिना खूँटे-रस्सी की अन-ब्याई गौ-सी ब्वारी रमोनी, तो एक दिन यह देखने को मिला है, कि बिना पानी के चिलम में तमाखू पीनी पड़ रही है और धुँए को धीरे से, होंठों के दानों पार्श्वों से बाहर सरकाते हुए भी, इधर-उधर देखना पड़ रहा है।

आनसींग की आँखों से आँसू पहले भुर्रियों में एकत्र होकर, फिर एकबारगी नीचे ढुलक गए—सुरूक्क...सुरूक्क...सुरूक्क...

रमोती यों स्वस्थ हो चली थी, पर ठंड लग गई थी, ज्वर हो आया था ।

नाथू हौलदार चूल्हे में बंठी साबुली हौलदारन को समझा रहे थे—“गडुवे का साग मत देना बवारी को और ध्यू-छाँ की लसर-पसर भी मत करना । दो दाने पोटेटो के गरम राख में ‘फराई’ करके, जीरे का नमक छोड़ देना । चहा बनाएगी, तो बुश्क बौन्ड और लिपटन—दोनों की पत्ती मिक्स करके डालना, ऊपर से सात पात पूरे तुलसी के छोड़ देना ।...”

आनसींग ने घृणा से मुँह दीवार की ओर कर लिया—इसी नाथू हौलदार के कारण आज मिट्टी में मिलना पड़ा है ।...

अंदर नाथू हौलदार कह रहे थे—“ऐसे बवारी को जर चढ़ेगा करके जानता, तो पिनशन पर आते समय ओभरकोट की जेब में चार पुड़िया ‘एसपरो’ और चार खुराक ‘एपीसी’ की डाल लाता ।...खंर, आगे जंसी ईश्वर की मरजी ।...अच्छा डियर, मैं बाहर चाख में जाता हूँ । सनी तिरलोक और जूली से ‘हे प्रभो, आनन्द दाता’ करवाता हूँ...ओके...”

चाख काफी लम्बी थी । भीतर के हिस्से के तीनों कमरों के दरवाजे उसी में पड़ते थे । भीतर के तीन कमरों में से एक में रसोई-घर था, एक में नाथू हौलदार रहते थे और तीसरे में हौलदार से खाली हौलदारन और रमोती । आनसींग चाख में ही सोया करते थे, कभी तिरलोक को साथ लिए और कभी जूली को ।

रमोती अंदर कमरे में पड़ी, अपने कलंकी-भाग्य की विडम्बना पर, तेज धूप से तड़क गए अनार के दाने-सी हुँकुर-हुँकुर रो रही थी । ठीक उसी कमरे के सामने के हिस्से में, चाख में, नाथू हौलदार जूली की हथेलियों का ताल दे-दिलाकर ‘हे प्रभो, आनन्ददाता ! ज्ञान हमको दीजिए’ प्रार्थना करवा रहे थे ।...

और चाख के इस कोने में बैठे आनसींग क्रोध और संताप से तिलमिला रहे थे—अरे, इस पापी को ईश्वर ने जरा भी ज्ञान दिया होता, तो न गो-ग्रास में मुँह मारता, न खानदान की मर्यादा-प्रतिष्ठा पर बिना बरसात के बज्र गिरते ।...पहले ही से नाथू के करम खोटे रहे हैं । कोटपीस खेलते-खेलते,

थोकदार गुमानसींग की परिणीता बेटी साबुली को उड़ा ले गया ।...खैर, उस समय पराई हाँडी में मुँह मारने की बात थी । इस बार तो...अदम्य-घृणा से बिफरकर, आनसींग ने दीवार पर जोर से थूक दिया — “थू पड़े ऐसी कमीनी औलाद पर !... ”

पर, पिता की घृणा, लोगों के आक्षेपो-व्यंगों से अप्रभावित नाथू होलदार निर्विचल-भाव से ईश-प्रार्थना में लगे थे । जबसे पेन्शन पर घर आए, सुबह परेड और शाम को ‘हे प्रभो, आनन्ददाता’ का क्रम निर्विघ्न चला आ रहा था । आज भी वो अविचलित-भाव से प्रार्थना किए जा रहे थे । रमौती के डूबकर आत्म-हत्या करने के प्रयास का दुःख उन्हें था, पर गंगोत्री काकी के जाने के बाद सारे गाँव में उनके प्रति घृण्य-लांछनों के जो काले बादल चारों ओर से घिर आए थे, उनका उनपर जरा भी प्रभाव नहीं पड़ सका । वो संयत और उन्मुक्त अपना काम किए जा रहे थे ।

गाँव वालों की खुसुर-फुसुर चर्चा उनके कानों तक भी पहुँची थी, कि ‘अरे, नाथू तो पहले से ही कमनियत रहा है । थोकदार ज्यू की साबुली को इसी ने चरित्र-भ्रष्ट किया और अब ब्वारी की पाप-पोटली भी इसी ने भरी होगी । ...’

रुदरसींग ने तो यहाँ तक कहा, कि ‘मैं ऊपर से देख रहा था । नाथू होलदार सैंप दोनों हाथ से रमौती भौजी के पेट को दबा रहे थे । ...’

“अरे, अपना ‘भुटका’ गिरवा रहा होगा ।” रुदरसींग की माँ ने बेटे की बात के बसूले पर और तेज धार चढ़ाई थी—“हरे राम, हरे शिव ! ऐसे महापापी का तो नाम लेना भी गुनाह है । ...मैं तो आज से आनसींग ज्याठज्यू के घर का पानी तो दूर, उनके गोठ की गाय का दूध-गौत भी नहीं पिऊँगी । ...”

पर, नाथू होलदार फिर भी शान्त ही रहे । उनकी अविकार-मुखाकृति को देखकर गाँववालों ने ‘बेशरमी की भी हद होती है ।’ कहकर, कालिख पोतने की बात की । और तो और, दोनों होलदारनों ने भी, डरते-डरते ही सही, होलदार को प्रश्न-वाचक आँखों से घूर लिया ।

“मारने को कोई आता, तो हाथ-पाँव तोड़के बोरे में भर देता, पर

बकनेवालों का क्या तोड़ूँ, क्या पकड़ूँ ?” कहकर, नाथू होलदार फिर चुप्पो लगा गए थे ।...

०

०

०

कोने में बैठे-बैठे ही, सहसा, आनसीग ने नाथू होलदार की ओर देखा, तो नाथू होलदार प्रार्थना समाप्त करके, तिरलोक और जूली को साथ लिए, अंदर जा रहे थे—रमौती के कमरे में

आनसीग के वृद्धावस्था से जर्जर-शुष्क मस्तिष्क में बाँमे के लोटे-सा कुछ लुढ़का । भीषण मनस्ताप और घृणा से तिलमिलाकर, वो चाख के कोने से उठे । वहीं पड़ी कुल्हाड़ी को उठाया—जिस औलाद से वश-कुल की प्रतिष्ठा-मर्यादा को कलक लगे, उस बेटे से बाप कहलाने की अपेक्षा, निपूता कहलाने में ही अधिक पुण्य है ।...

एक ओर तो क्रोध कुल्हाड़ी की धार चमचमा रहा था, दूसरी ओर मोह हाथों की ताकत कम कर रहा था—बेटों के नाम पर, एक नाथू ही तो रह गया है आँखों-आगे ?

...पर, दूसरे ही क्षण गाँव-पट्टी के लोगों की थू-थू के दंशन ने मोह को डस लिया—ऐसे पापी-पातकी पूत से, निपूता भला ।

और आनसीग, कुल्हाड़ी लिए, रमौती के कमरे के बाहर पहुँच गए । अन्दर नाथू होलदार की आवाज गूँज रही थी—“ब्वारी, यह तेरा भतीजा तिरलोक है और यह भतीजी जूली—दोनों के सिर पर अपना एक-एक हाथ रख, और कसम खा, कि चाहे कुछ भी हो, पर आत्म-घात नहीं करेगी तू ।” गलती तुझसे हो गई, ईश्वर से माफी माँग लेना । बिलेंत वाले बड़े-से-बड़ा पाप करते हैं और अपने ईश्वर गौड के सामने हाथ छाती से लगाकर ‘कौनफिस’ कर लेते हैं, पराशित (प्रायश्चित्त) हो जाता है । ईश्वर बड़ा दया-दानी, हिया-जानी है, ब्वारी ! वह तेरी गलती को जरूर-जरूर इक्कूज कर देगा—याने कि माफी दे देगा ।...ना, ना, रख...अभी रख दोनों के सिर पर हाथ और कसम खा, कि ज्यादाज्यू, इन दोनों बालक की कसम, आत्म-घात नहीं करूँगी । कभी भी, किसी हालत में भी । ..बोल, ब्वारी, बोल..”

रमौती की आवाज काँप रही थी—“ज्याठज्यू, तुमने मुझ अभागन को आसरा देकर, पुण्य कमाया है, पर मुझ पापिन का मुँह सबेरे का सूरज देखेगा,

ग्रहण लग जायेगा। रात का दीपक देखेगा, कमरे में अँधेरा कर देगा।...तुम ही बताओ, ज्याठजू, मैं दिशाओं को अपना मुँह कैसे दिखाऊँगी ? जिंदा रहकर, लोगों की कलेजे को चीरने वाली बातों को सहने के लिए, लोहे की छाती कहाँ से लाऊँ ?”...

रमौती रोने लगी थी।

नाथू होलदार बोले—“ब्वारी, सब बातें मैं पीछे सुनूँगा, पहले तू बालकों के सिर पर हाथ रखकर कसम खा। ले ये मेरा सिर है, इस पर भी तीमरा हाथ रख...नहीं तो, लाता हूँ बाहर से रमुट (कुल्हाड़ी) और करता हूँ दोनों बालकों के सिर का हलाल और एक अपने सिर का...”

रमौती का अक्षर-अक्षर आँसुओं के भार से धरती पर गिर रहा था—  
“ज्याठजू, बस, बस। लो, पहले तुम्हारे चरणों में हाथ रखती हूँ, कि रत्ती-रत्ती टूट-फूट कर मरूँगी, पर एक मौत मरने के लिए आत्म-घात नहीं करूँगी।...”

“बच्चो के सिर पर भी हाथ रख के, ऐमा ही कह, ब्वारी !” नाथू होलदार ने आदेश दिया।

“तिरलोकी, जूली च्याल...” कहकर, रमौती ने दोनों को छाती से लगा लिया।

नाथू होलदार बोले—“बस, बात यह हमेशा ध्यान में रहे, कि तूने तीन सिरों की कसम खाई है। तू नहीं रहेगी, ये भी नहीं रहेंगे। तू जिस ताल में डूबेगी, तेरी बेइमानी और झूठ का पर्दाफाश करने, याने वचन-भंग की नालिश ठोकने के लिए—उसी में इन दोनों बालकों को भी डाल आऊँगा, फिर ईश्वर के यहाँ क्या जवाब देगी ? और देख, जब तक नाथू होलदार की जिंदगी सलामत-दुरस्त है, सिर्फ ईश्वर से डर और किसी से नहीं। गलती इन्सान से होती ही है, मिट्टी के हाथ-पाँव हैं। ईश्वर खुद सुधार लेगा।...इन्सान की जिस गलती को हम, याने कि इन्सान, सुधार नहीं सकते, वास्ते उसके हमको उस गलती या जुर्म की सजा देने का भी कोई हक नहीं है।...ब्वारो, मोहनिया को पलटन में मैंने लगाया। इसलिए और इस मकसद से लगाया, कि होनहार नौजवान है, तरक्की कर ले जाएगा, तो महर-वंश का नाम ऊँचा करेगा और

खुद सूट-बूट से लैस जिंदगी को बिताएगा। पर, मेरी अब्बल मुझको बन्दूक से भी सख्त गोली मारेगी, मुझे कहाँ खबर थी ?... और अब एक, बतौर निशानी मेरे भाई लवली-यंगर ब्रदर मोहनिया के, तू रह गई थी, तो तू ऐसा कर रही है।... ब्वारी, मोहनिया को पलटन में लगाकर मैंने जो गुनाह किया था, अपनी खिदमत का मौका देकर, तू मुझे उसके पराशित का मौका दे।... यों तू मेरी उमर से बहुत छोटी है, मेरे लिए जैसी यह जूली डौटर, इससे जरा बड़ी तू... फिर भी मैं तुझे हाथ जोड़ता हूँ, ब्वारी !... तू सब-कुछ करना, जीतेजी रहना। होलदारनों का भरोसा कर, वो दोनों तुझे चेली की तरह पालेंगी... लोग बके, बकने दे। जानता हूँ, तुझसे कहीं कोई, किसी जगह, किसी डैमिश से गुनाह हो गया—पर, नाथू होलदार एक गुनाह के लिए अपनी ब्वारी को मरने की इजाजत हरगिज-हरगिज नहीं दे सकता।... ओके...”

आनसीग के हाथ से कुल्हाड़ी अपने-आप नीचे छटक गई।

**ज**ब से रमौती का पेट देखकर, लौटी थी, तब से जिस घर-आँगन में जाती गंगोतरी काकी—मेले-नौटंकी की तरह भीड़ जुड़ आती ।

कल सुबह तक यह हाल था, कि अपनी ही ब्वायियाँ भी दो-चार आवाजों को पीठ फरका के अपनी-अपनी दिशा को चल देती थीं और गंगोतरी काकी ‘ब्वारी, वे ऊ ! ब्वारी, वे ऊ !’ करती रह जाती थी और आज गंगोतरी काकी जिस तरफ निकल जाती—तुरत दश-पाँच का घेरा पड़ जाता । जिस घर के आँगन में पहुँचती, कभी एक घूँट पानी के लिए न पूछने वाले साग्रह कहते—“क्यों हो, दनदा की माँ, हमारे पटागण के पत्थरों में पैर नहीं टिकते क्या ? ऐसे जा रही हो, जैसे किरमल (चीटी) चटका रहे हों ?... बड़े दिनों के बाद घर से निकली हो, एक घुटक चहा की तो मार के जाओ, काकी ? दो मुट्ठी चीनी-पत्ती हमारे घर में भी रहती ही होगी ?”

गंगोतरी काकी बड़ा अहसान जताती-सी बैठती—“ब्वारियाँ खेत-वन को जाने वाली हैं । ईश्वर ने चार-च्याँ-म्याँ करने वाले हरेक के आँचल में डाल रखे हैं । वूड़ी सामू पहरे की बिल्ली होती है ।”

फिर चहा पीकर उठने तक गंगोतरी काकी रमौती के पेट वाली बात को चारों तरफ विस्मय और वितृष्णा की जालीदार झालर-सी लपेटती—“नाथू की बड़ी बोली मुझे, ज्यू, जरा रमौ ब्वारी की जता दो । मैंने उसकी नब्ज को हाथ में लिया ही था, कि-हूँ...र...र...र...सारे आँग (शरीर) में खुमानी के पेड़ के सूखे पत्ते-जैसे फरफरा गए—छोर्त !...अन्दर के देवता—(हे, परमेश्वर, सात बार कान पकड़ती हूँ, अपने पाप का पराशित और तुम्हारे नाम की आरती करती हूँ)—की हलम-चलक फूट पड़ी—होर्त !...” और

काँपते हाथों से चढ़ा के गिलास और कटक के [लिए मिली गुड़ की डली को एक ही साँस में चढ़ाकर, गंगोतरी काकी आगे बढ़ जाती—“आगे कुछ कहना, अपने को गुनहेगार बनाना है ।”

घर से जंगल के बहाने निकल कर, बातों की पान-मुपारी बाँटती, गंगोतरी थोकदार गुमानसींग के आँगन तक पहुँची । यों, गंगोतरी काकी को तो सिर्फ जंगल जाना था । कही इधर-उधर बैठक, लबर-चबर करने की आदत मायके से ही नहीं रही । पर, गाँव के घरों की बनावट ही ऐसी है, कि जल्दी कही जाना हो, तो सबके आँगनों के पाथरों पर पाँव रखने पड़ते हैं । किसी से ज्यादा बकमध्यायी करने की गंगोतरी काकी को फुसंत कहाँ ? पर, गाँव वाले ही कुछ ऐसे हैं, कि एक आँखर की बात सातों में कहके भी, ठीक-ठीक नहीं समझते ।

यों भी गंगोतरी काकी गाँव के पुरखों की पगित में आती हैं । कोई हाथ-चोड़ा आसन देता है, तो, छोटों का मन रखने को, बैठना ही पड़ता है ।

गुमानसींग के तिमजले-मकान तक पहुँचते-पहुँचते, गंगोतरी काकी को धूप ने पकड़ लिया । सो गुमानसींग थोकदार ने जब, आँगन की दीवार पर भोटिया बकरे की ऊनदार खाल को बिछाते हुए, आग्रह किया, कि ‘गंगोतरी भौजी,’ बैठो,’ तो गंगोतरी काकी, लाठी को आगे बढ़ाकर, पाँव को पीछे हटाते हुए, बोली—“थोकदार हो, इस समय देर हो रही है । बवारियों को बन-खेत जाना है । घर में देख-भाल को कोई नहीं है ।....”

पर, गुमानसींग ने खाल का आसन कुछ इतने आदर के साथ बिछाया, कि लाठी एक ओर खड़ी करके, बैठना ही पड़ा ।

जब साबुली लापता हुई थी, तब गाँव के कुछ उपटापी (उपद्रवी) कहा करते थे, कि ‘जैसे पंचवटी में ‘सीता-हरण’ हुआ था, ऐसे ही, काठगोदाम के स्टेशन में ‘साबुली-हरण’ हो गया !’ और अकेले-दुकेले कुछ शतान छोकरे ‘साबुली प्यारी कवन हरी, भाई लछिमन ?’ गाते रहते थे ।

किसी ने तो यह अफवाह उड़ा दी थी, कि खुद गुमानसींग के भाई ठेला डिराईवर बीरसींग ने साबुली को किसी पंजाबी लकड़चिरवे के साथ लगा दिया है । उन दिनों कुमाऊँ में देवसींग-दानसींग मालदार का लकड़ी का ठेका

था और लकड़-चिरान के लिए उन्होंने पंजाब से कारीगर बुलाये थे। पंजाबी कारीगरों ने लकड़ियों के तख्ते चीरते-चीरते और भी कई किस्म की कारीगरियाँ दिखाई थीं—और विधवा, परित्यक्ता पहाड़नों को तथा लावारिश लड़कों को लाहौर-अमृतसर के शहर देखने लगा दिया था।

खैर, समय काफी आगे सरक गया, तो अफवाहे पीछे रह गई थी। पर, जब एक दिन अप्रत्याशित-रूप से नाथू हौलदार के साथ तिरलोक और जूली की माता साबुली हौलदारन फिर ऊडलगों पहुँची, तो जैसे एक विस्फोट-सा हो गया। पर, चूँकि समस्या यह, किसी ऐरे-गैरे की नहीं, गाँव के पुश्तैनी थोकदार गुमानसींग की थी, सो सबको अपना मुँह सँभाल के चलाना पड़ा।

पर, गाँव के उपटापियों (नटखटों) की गीत-पंक्ति (जो उन्होंने बाड़ेछीना की रामलीला के 'सीताहरण' के प्रोग्राम में 'सिया प्यारी कवन हरी, भाई लछिमन ?' से सीखी थी।) 'साबुली प्यारी कवन हरी, भाई लछिमन ?' की जोड़ मिल गई थी, कि 'साबुली भौजी नाथू हौलदार हरी, दाज्यू रामचन्द्र !'

थोकदार ने यह चाहकर, कि साबुली चाहे और कहीं रहे या मायके में ही—गंगोतरी काकी के हाथ एक-दो बार संदेशे भी भेजे थे, कि 'बेटी, ठीक आँखों के सामने रहकर, हमारी नाक पर चक्कू क्यों फेरती है ? इस घर के दरवाजे तेरे लिए चौबीसों बखत खुले पड़े हैं।'

पर, साबुली हौलदारन ने, दोनों बार, गंगोतरी काकी को अधसेरा गिलास भरके चीनी की चहा पिला के भेज दिया, कि—'मेरी तरफ से बाँजू को दोनों हाथ जोड़ के कह देना, कि चलती सड़क से दूसरी पर पाँव चला बँठी, इसकी माफी चाहती हूँ। पर, बार-बार गू खाना ठीक नहीं है। अपने स्वामी के चरणों में ही जिंदगी गुजार देना, यही हिन्दू औरत का धरम भी बताया गया है। '...कंजों (विमाताओं) को भी मेरी पैलाग कह देना।'

गंगोतरी काकी के लिए इस समय आदरपूर्वक आसन बिछाते में, थोकदार की नस-नस में पुरानी चोटें दौड़ गईं और उन्होंने गंगोतरी काकी को बच्चों की आदर-कुशल का फेरा देकर, फिर रमौती की कल वाली बात पर पहुँचा दिया—“समझ में नहीं आता, कि आखिर रमौती 'भुटका' किसका लगा

लाई ? लड़की तो बड़ी हयादार और सुजान-शरीफ दिखती थी ? मुझे तो नथुवा होलदार का ही भैम<sup>१</sup> पड़ता है ।....”

“और क्या...कहीं आसमान-परबत से थोड़े छूटा होगा !” गंगोतरी काकी घृणापूर्वक बोली—“इस अन्यों-पाप की खबर सारी लखनपुर पट्टी के गाँव-वरो में दशांग-धूप-सी फैली, थोकदार !... देख लेना, गंगोतरी भोजी क्या कह गई थी. कहना ।” फिर गंगोतरी ने दोनों कानों को अपनी हथेलियों से ढाँप लिया—“ऐसा अनर्थ कभी नहीं सुना था । जिठाणे की छाया लाँघने से भी औरत अपवित्र हो जाती है...यहाँ तो ब्वारियाँ जिठाणों से कमन (गर्भवती) होने लगी हैं, थोकदार ! यह घोर महानर्थ किसे ले डूबेगा ?”

थोकदार गुमानसींग के कानों में नाथू होलदार की आवाज गूँज रही थी—“नाथू होलदार जब उड़ाएगा, कोई बड़ी चीज उड़ाएगा ।....” और आँखों में नाथू होलदार की ही सूरत घूम रही थी, कि उनकी साबुली बेटी को अपनी पीठ पर लादे, नाथू होलदार मुसिया चील की तरह आसमान में उड़ रहा है ।....

“मैंने अपनी ब्वारियों को आनसींग के पटांगण के पाथरो पर पाँव टिकाने से होशियार-खबरदार कर दिया है ।....” गंगोतरी काकी सरुली थोकदारन के हाथ से चहा का गिलास लेती बोली—“अरे, रस्ता थोड़ा फेर का पड़ जाएगा बार-बार जाने को, पर उस पापी नथुवा बहौड़ की छेल-छाया से तो बचत हो जाएगी ? अरे, जब अपने ही गाँव को गोरु-बाछी (गाय की बच्ची) साबुली चेली का पिंड अपवित्र करते उसे लाज नहीं लगी, तो पराए गाँव की बेटियों को वह क्या बखशेगा ?... मैं तो कहूँगी, थोकदार, रमोती को नाथू ने जबरदस्ती भुटका लगाया है । अरे, बेचारी बिना घेर-बाड़ की खेती ठहरी, कभी रख दी होगी अपनी दुनाली बन्दूक छाती पर...औरत जात का कलेजा कितना ?”

गंगोतरी काकी की आँखों में आँसू छलक आए और वह जाने के लिए उठ गई—“खाल तो भेड़े की बड़ी ऊनदार बिछाई तुमने, थोकदार ! बूढ़ी

१. भ्रम का अपभ्रंश ।

हड्डियों को मलमल-जैसा लग रहा है। पर, अब चलूंगी। ब्वारियों को बन-खेत जाना है। दनुवा भी दल की दुकान को जाएगा। बड़ी ब्वारी चूल्हे की जताएगी। बाल-गोपालों को खेल कौन लगाएगा ?...और, हाँ, थोकदार ! ...घर में आग लग रही है, तो सिर्फ धुँवा देखने से काम नहीं चलेगा।...”

०

०

०

गंगोतरी काकी चली गई, तो थोकदार बड़ी देरतक विचार-मग्न, आँगन की दीवार पर बैठे रहे। अचानक ही उन्हें खयाल आया, कि इस बार उनके हाथ में तुरूप का पत्ता आ गया है और नाथू होलदार को सही-सही ‘गूकोट’ लगाने का यही मौका है !...

व्यवस्थित पंचायत-परम्परा उन दिनों कायम नहीं थी ऊडलगों में। फिर भी, गाँव के दश-बीस सयानों को एक जगह एकत्र कर लेने पर, समस्या को प्रचंड रूप दिया जा सकता था। आवश्यकता पड़ने पर दस-बीस पड़ोसी गाँवों के पुरखे-सयाने भी बुलाए जा सकते थे और ऐसी परिस्थिति पैदा की जा सकती थी, कि आनसीग के परिवार का नाथू-महित ऊडलगों में टिकना असम्भव हो जाए।

प्रतिशोध के लिए यह अनुकूल अवसर मिला है, तो चूकना नहीं है। हर बार चूहा जिबाली (चूहादानी) में पड़ता नहीं।...थोकदार गुमानसीग उठे और गाँव के लोगों की पंचैत बुलाने के लिए सलाह-मशविरा करने रुदरसीग के घर को चले। रास्ते में चिट्ठीरसेन पीताम्बर मिल गया। बोला—“थोकदार सैप, आप की एक चिट्ठी है।”

थोकदार को चिट्ठी देकर, पीताम्बर अपनी राह लग गया। रमौती के आत्म-हत्या के प्रयास की घटना उमे मालूम हो गई थी। आनसीग के घर को देखने से बचने के लिए, उसने अपनी लालधारी वाली खाकी टोपी को तिरछा कर लिया था।...

थोकदार गुमानसीग ने लिफाफे को एक सिरे से दाँतों से कुटकुटाया और फिर अन्दर से पत्र बाहर निकाला। रुद्रपुर से आया था।

लिखा था—“ओम् श्री जोग लिखी रुद्रपुर जिला नैनीताल से रुद्रपुर के मशहूर आढ़ती और थोक कपड़े के ब्योपारी श्री लाला लछमी

नरायण अगरवाल जी की तरफ से ऊडलगों वाले थोकदार गुमानसींग जी को हमारी जै गोपाल बंचना जी ।

आगे स्वस्ती श्री १०८ पूज्य श्वसुर जी को उनके जमाता लाला लछमीनारायण जी रुद्रपुर वाले की हाथ जोड़ के परनाम बंचना । पत्र को लिखने का खास कारण कुछ नहीं । आगे पीछे इतने लम्बे अरसे तक जो-कुछ भी विधि के लिखे को भेटने वाला कोई नहीं है, सो हो गया ।

आगे के लिए विनम्र विनंती के साथ हमारी श्री माता जी ने हाथ जोड़के आपको यह लिखवाया है—‘आगे हमको खास भरोसे के किसी आदमी के जरिए, वहाँ के आप के पास या आप के गाँव में लौट आने का ठीक-ठीक समाचार मिला है । मेरा एक ही बेटा लछमीनारायण है । दूसरा कोई नहीं । आगे मैंने अपने तँई हरचन्द कोशिश की और हजार बार बेटे लाला लछमीनारायण से कही, कि बेटा, जो बदजात तुझे छोड़ के हिंदू धरम और अपने माँ-बाप के नाम पर कलंक का टीका लगा गई, उसको नरक में जाने दे और अपने कुल की मरजादा को सँभाल । तेरी जान सलामत है, तो ईश्वर ने हमको रूपा-लत्ता बहुत दे रखा है और चार अरायों-परायों को खिला के ही खुद खाते हैं, सो दुलहनों की कोई कमी तो हुई ना । पर, बेटे लाला लछमीनारायण ने तो हमारी नेक न सुनी और अबलों बिना व्याह के बैठा है बावला । मैंने तो पहले ही कही थी, कि मुए पहाड़ियों से ले-दे रखना ठीक नहीं । वो समुरन पहाड़न गई, तो गई, पर न-जाने मेरे लल्ला लछमीनारायण पर क्या जादू डाल गई, रात-दिन उसका ही नाम लेवे है । लोगों से तो पँले ही मुन रखी थी और कही भी बेटे लछमीनारायण से, कि पहाड़न जादू-टोना बहुत जानती हैं, पर लल्ला ने तो हमारी नेक न सुनी और यह दिन देखने को मिला है ।’

खेर, आपको क्या दोष दें ? सब भगवान श्री राम की मरजी है । इस पत्र को तो खास लिखने का कारण यह है, कि आगे हमारे सुनने में आया है, कि लल्ला लछमीनारायण की बहू—जो कि खुद आपकी बेटा भी है—लौट के आपके पास या आपके गाँव में आ गई है । चुडैल जब यहाँ से आप के पास

मैंके (आप ने जब अपने पहले बेटे के नाम-धरन पर बुलाया था मैंके) गई थी, तो लाला लछमीनारायण का अंश लेकर ।...

आप बहुत समझदार और दया-धरम वाले आदमी हैं । आपने शतयुग भी देखा है । मेरी आँखों की जोत रोते-रोते मन्द पड़ गई है । वंश को चलाकर, पितरों को तारने वाला कोई नहीं है । मैंने तो सोची थी, जी, कि बेटा लछमीनारायण है, तो हल-बीज अपने पास है, मिट्टी सुसरी बहुतेरी मिल जावेगी, पर लल्ला ने तो हमारी हर आशा ही मिट्टी में मिला दीन्ही । ...

सो, अब इस बुढ़िया की आपसे दोनों हाथ जोड़कर, यह भीख माँगनी है, जी, कि आगे हमको अपने भरोसे के आदमी से यह खबर मिली है, कि आपकी बेटी हमारे लल्ला के बेटे के साथ है । मैं बेटे लछमीनारायण से हजार-दो हजार-तीन हजार जो-कुछ भी आपको मंजूर होवे, दिलाने को मंजूर हूँ । आप हमारे वंश के दीपक को हमको लौटा दें, जी ! लौटाकर, हमारे पास लानेवाले का गाड़ी-भाड़ा बेटे लछमीनारायण के जिम्मे रहेगा और इनाम मैं अपनी तरफ से तबियत खुश करके दूँगी । आशा है, आप इस गरीब बुढ़िया को झोली को खाली नहीं लौटाएँगे ।...

...इतना हाल-समाचार लिखने के बाद, मैंने माता जी की खूब खुशामद की, जी ! और पाँवों पड़ के यह मंजूरी ली, जी, कि यदि आना चाहे तो आपकी बेटी भी बेटे के साथ आ सकती है । पूज्य माता जी को कोई एतराज नहीं होगा, जी, इस बात का बरोबर विश्वास रखें ।

मेरी अपनी तरफ से आपको और सास जी को बार-बार हाथ जोड़ के विनंती है, जी, कि हमारे बेटे को मय माता के रुदरपुर पहुँचा दें । पर, इस बात का ध्यान जरूर-जरूर रहे, जी, कि हमारे बेटे की माता के साथ हमारे बेटे के अलावा और कोई दूसरा बच्चा हरगिज नहीं होवे ।

आगे बाकी लिखना कुछ नहीं है, जी ! पर जहाँ तक हो सके, हमारे बेटे की माता जी जब मय बेटे के यहाँ को तहाँ से चले, तब उनके हाथ से एक चौथाई पंचसेरा खालिस चौगरखा पहाड़ी घी का जरूर-जरूर भिजवा दें ।

कीमत और खाली टिन जिस आदमी के साथ हमारे बेटे की माना जी यहाँ  
आवेंगी, उसी के हाथ भेज देंगे, जी !

—आप का बिनम्र सेवक जामाता,  
लाला लछमीनारायण अग्रवाल जी,  
आढ़ती और कपड़े के थोक-फुटकर  
व्यापारी  
रुद्रपुर वाले, जिला नैनीताल !  
(यू० पी०)

**क**मरे के अन्दर बंटे-बंटे रमौती के मन-प्राण सद्यः जात-गोवत्स-जैसे कँप-कँपा रहे थे। उसकी आत्मा के बुरूश फूल पर बर्फ की तहें जम गई थीं, एक-पर-एक... और कभी-कभी, अधिक समय तक रह जाने पर, बर्फ का दाह-ताप आग की आँच से भी दुसह हो उठता है। बिना लपट-अंगार के जलाने की दाहकता होती है बर्फ की शीतलता में और फूल-पात के प्राणों को बड़ी करुण, किट-किट-किट-किट दाँत लड़ाकर, होंठों को भुलसाकर स्याह कर देने वाली मौत मिलती है !

असोज निकलने लगा है। पर, आस-पास की वन-चोटियों पर तो बर्फ जिन पूस-माघ के महीनों में गिरनी होगी, उन्हीं में गिरेगी—पर, रमौती के मन-बुरूश पर तो बर्फ इस असोज के महीने में ही आसन-मार के बैठ गई है।... और यह असोज निकलने लगा है, तो भी दश-पाँच दिन इसके बाकी और चार महीने कार्तिक, मंसीर, पूस, माघ के—बुरूश के फूल तो जिन फागुन-चैत-वैशाख के महीनों में आज तक फूलते आए, इस बरस भी उन्हीं में फूलेंगे...

पर, एक रमौती का मन-बुरूश था, उसकी फागुनिया-सरसों-सी उमर थी, एक चैतिया-याद मोहनसीग की थी, तीसरी वैशाखी-पवन-सी पीताम्बर चिठ्ठीरसन फरफरा गया, जिससे कच्ची फसल भी पकने लगती है।

और सबसे बड़े बुरूश-फूल सैमाधुर के सिमलिया-गैर वाले बुरूश के पेड़ में लगते थे, गए वर्ष उसमें बप्प पड़ गया था, टूट के चार हो गया। फूल

मिट्टी में दब-कुचल गए, लकड़ियाँ फाड़-सुखाकर, ऊड़लगों वालों ने जला डालीं ।...

मन-बुर्रूश इस साल, शायद, रमौती का बहुत ज्यादा फूला था । क्यों न फूलता ? एक फागुनिया-उमर, और कुसुमिया-पिण्ड (फून्-मा शरीर) रमौती का, उस पर चैत के महीने में चहकने वाले कफू पंछी की कफू-कफू-कफू की जैसी एकरट मोहनसींग की याद के संन्यासी के चिमटे की जैसी छणाक्-छणाक्-छणाक् 'रमो-रमो-रमो' और तीसरा शनि वैशाखी-पवन-सा पापी मिट्टी के तन को झुँझकोर गया पीताम्बर चिट्ठी रसैन—“रमौती भोजी, केले के पातल (पत्तल) में परोसी खीर का आनन्द खाने वाला ही जानता है, केले के पेड़ को उसकी क्या खबर ? तेरे जोबन ने मेरी मति में जो पाथर मारा, उसका स्वाद जिंदगी-भर नहीं भूलूँगा, किलोग घिनोड़ों को घंतर (गोरैया को पत्थर) मारते हैं, तो चोट से घरती पर लोटती हैं, दम तोड़ देती हैं—पर, तूने अपने प्यार का घंतर मेरे दिल पर मारा, तो मुझे ऐमा लगता है, मेरी भोजी और अब मेरी प्यारी, कि जैसे किसी ने दाँतों की टक्कर मुँगरिया केले में करा दी है । सो, मेरी हंसा, तेरे तन-जोबन का स्वाद केले के पातल में परोसी खीर वाली चीज हुई, उसका स्वाद मैंने ही जाना और ऐमे ही, मेरे दिवान खानदान के शरीर में जो आनन्द तेरे काँटे में लगे चारे को झटका देने वाली मछली-जैसे राजपूत शरीर को मिली, उसका स्वाद तूने ही जाना ।...”

और किसी एक घिनोड़ी को तीन घंतर लगे, तो वह उनकी चोट से कितना लोटगी घरती पर ?...

और इस साल तीन पूस-माघों की धुनधुनिया (घुटनों-घुटनों) बर्फ रमौती के मन-बुर्रूश पर जमी, तो अंतर्दृष्टि से तिलमिला रही है—बुर्रूश के पेड़ पर बज्र गिरा था, तो गाँव वालों ने लकड़ियाँ जलाकर, अपनी रोटियाँ सँकी थी ।... इस बरस का बज्र रमौती पर गिरा है, तो गाँववाले रमौती के हाड़ों का क्या करेंगे ?...

○

○

○

कन से रमौती अंदर ही पड़ी थी । रात को एक बार, माबुली हीलदारन के साथ, घर के पिछवाड़े हो आई थी, बस । कमरे के अंदर वह ऐसे पड़ी थी,

जैसे कोई गर्भिणी हिरनी-चारों ओर से व्याधों के घिर जाने पर, भाड़ी में घुसकर सुस्ता रही हो और व्याधों के तीक्ष्ण-धार तीरों के आनुमानिक-भय से जिसकी छाती के पास के सफेद, मुलायम रोएँ थुर-थुर ऐसे थुरथुरा रहे हों, जैसे रुक-रुक कर चलने वाली तेज हवा में उनकी खुली हुई लच्छी लटकी हुई हो ।...

पर, गायद, नहीं । रमौती की स्थिति ऐसी संव्रस्त हिरनी से भी करुण, व्यथापूर्ण और भीति-आकुल थी, क्योंकि उसके अंदर से भी कहीं तीर छूट रहे थे—रमौ, रमौ, रमौ ...।

मेरी सुवा, रमौ, रमौ, रमौ !!...

मेरी प्याँरी, रमौ, रमौ, रमौ !!!

जैसे पहाड़ी, वन में हरी घास चरते-चरते किसी गाय का पाँव फिसल पड़ा हो, और वह नीचे खाई में गिरते-गिरते किसी पेड़ के तने से लगकर, अटक के बच गई हो और संभलने की कोशिश कर रही हो—रमौती मन-ही-मन अपने भविष्य की रूप-रेखा गढ़ रही थी । मर गई होती, तो मुक्ति मिल गई होती । रमौती कल्पना ही नहीं कर पा रही थी, कि इस गुरुतर पाप के बाद उसके भविष्य के लिए मौत के अलावा किसी और चीज की भी गुंजाइश हो सकती है ।

इम भयंकर और दारुण-स्थिति का पूर्वाभास उसे मिल गया था, कि गाँव के लोगों में उसके अनैतिक-गर्भ की जानकारी से क्या प्रतिक्रिया हुई है । हालाँकि, नाथू होलदार ने दोनों होलदारनों को सचेत कर दिया था—“खबरदार, होशियार ! ब्वारी से कोई भी किसी किसम की आड़ी-तीरखी जीभ हिलाना नहीं । अरे, डियर बड़ी होलदारन, वो तो एकदम ‘किरेक-मैंड’ हो गई है, एकदम ! ...ओके, उसको बिलकुल बेबी, बिलकुल जूली की तरह, चुपका-चुपका के रखो, बिलकुल ! . ” तो भी रमौती को अपने चारों ओर भिनभिनाती मक्खियों की भाषा समझ में आ रही थी ।...

गाँव-घर का मामला है, जरा खाँसने-खँखारने को भी बाहर मुँह निकालो, तो किसी-न-किसी की नजर पड़ ही जाती है—“क्यों, वे, क्या हुआ ?” फिर बहू-बेटी का काम हमेशा वन-खेत का रहता है । आते-जाते में सात जात के

लोगों से टक्कर होती है और बचके निकलो, तो “ऐसी ही शरम-लाज थी, तो गू में मुँह डाला ही क्यों था ?” और निश्चित-निर्बन्ध पाँव धरो, तो “बिशरम देखे, पर ऐसा बिशरम न देखा। बाप रे, करम से देखो तो पापिणी, चाल से देखो तो साँपिणी ! ओबा, इसकी कमर को तो अपने ही घाघरे का नाड़ा नहीं दिखता।”

रमोती ने, बड़ी मुश्किल से आँखें उठाकर, सामने चाख की ओर देखा, तो ऊपर पाटी में रखी अपनी दुलहन-पिटारी को देखती रह गई। देखते-देखते मन इतना आकुल-व्याकुल हो आया, कि आँखों में धुँध-सी छा गई—“हे परमेश्वर !”

...हे...प...र...मे...स...र...अक्षर-अक्षर यों टूटता है, कि जैसे कलेजे में किरमड़ का पँचमुखा कँटीला पात नीचे ऊपर सरक रहा हो। हीलदारन ने पलटन में भरती करवा दिया, रमोती को छोड़कर मोहनसींग चला गया—हमेशा, हमेशा के लिए चला गया, रमोती रह गई...

और रह गई हैं, दुलहन-पिटारी में दो चिट्ठियाँ। दूसरी तो पढ़वाने-लायक ही नहीं लिखी उन्होंने। पर, पहली चिट्ठी लिखते समय उनकी कलम में देव-गंधर्वों का वास रहा होगा। ...ओ बा, विधाता की कौन-सी बेटी कुँवारी रह गई थी, जो मोहनसींग ही मिला घर-जँवाई बनाने को उसे ? ...हट्ट, तेरे विधाता की बेटी भी मेरी ही तरह...ना, रे, ना। यह तो उन्हीं को गाली हुई ? रमोती ने जिह्वा को हौले से दाँत लगा दिए—इस जून (योनि) में उनको पूरी उमर नहीं मिली, दूसरे जून में उन्हें मेरी भी उमर लग जाए...

मोहनसींग की दिवंगत-आत्मा के प्रति प्रस्फुटित इन आशीर्वचनों से उसे बड़ा सुख मिला। धीमे से वह व्यथा-भरी मुस्कान होठों तक लाई—“हँ हो, मुझे माफ कर देना। पिंड पाप में डूब गया है, पर मन से पवित्तर हूँ। तुम्हारी थी, सो जब-जब अब भी ख्याल आता है, कि तुम्हारी ही हूँ, तो अपने को पवित्तर ही लगती हूँ। ...”

भिन्...भिन्...भि...नू...एक मक्खी बिखरे हुए बालों से अटक गई कन-पटी के पास और तेजी से भिनभिनाने लगी...भिन्...भिन्...भिन्...रमोती को लगा, मोहनसींग की आत्मा उसके कान के पास मेंडरा रही है—“मेरी सुवा

रमो • मेरी प्यारी रमो...रमो, रमो, रमो ! ...और कनपटी के पार्श्वों के सारे बाल घुँघराले होते जा रहे हैं—‘तुम्हारा बुर्रूँश का फूल...’

रमोती मोहाविष्ट-सी हो गई...एकांत-कक्ष का निबिड़-मीन...आखों में छाई अनिवार-घुँघ-पतं और मन-प्राण का आकुल-प्रकम्पन...उसे कुछ ऐसी अनुभूति हुई, जैसे वह अपने पाप के प्रायश्चित्त के लिए किए गए प्रयास से और उससे उपजी संतुष्ट मन-स्थिति की दारुण व्यथा से थरथराकर, पूर्वा-पेक्षा पवित्र होकर, मोहनसींग की आत्मा के एकदम निकट पहुँच गई हो...

होले से कनपटी पर हाथ फिराया उसने, तो मक्खी उसकी अँगुलियों में फँसकर और जोर से भिनभिनाने लगी...रमोती ने मुट्ठी बन्द करके, उसके अंदर भाँका—मक्खी दो अँगुलियों के बीच की खाई में फँसकर, भिनभिना रही थी। रमोती उठी, बाहर आई और आँगन के एक कोने में रखे कनिस्तर के टूटे डिब्बे में उगी तुलसी के पौधों की जड़ में, ‘हे परमेश्वर’ कहकर, मुट्ठी को रोल दिया...

“आँ, ठहर, बैगा !...” सहसा, वन से लौटती बड़ी हीलदारन ने पीछे से आवाज दी—“तुलसी की तो न लग तू...”

रमोती को ऐसा लगा, जैसे उसकी अँगुलियों को किसी ने चक्की के पाटों में पीस दिया हो। वह तुलसी को नहीं छू सकती...? ...वह अपवित्र हो गई है न ?...

इस अनुभूति से, कि बड़ी दीदी की नजरों में भी मैं इस सीमा तक पातकी हूँ, कि तुलसी को नहीं छू सकती, रमोती को मर्म-रोंदी वेदना हो आई और उसका मन हुआ, कि अपनी पूरी शक्ति के साथ फिर पनार की ओर दौड़ पड़े और प्रचंड लहरों के अनगिन-अछोर दायरों में विसर्जित हो जाए...

“ब्वारी,” बड़ी हीलदारन ने पीछे से उसके माथे पर हाथ रखा और वहीं से अँगुलियों को रमोती की पलकों पर होले-होले फिराया—“रोती है, वे ? मर गई है क्या तेरी चंदरा दिदी, जो उसके लिए शोग-संताप मनाती है ? छोरी कहीं की। यह सँभ पड़ रही है और ये इसकी आँखों से दिये के पोत-जैसे आँसू गिर रहे हैं। चल भीतर।”

१. दिप की जलती-बाती से भरते रफुलिंग।

माथे से हाथ सरकाकर, कंधा पकड़कर, बड़ी हीलदारन ने रमौती का मुँह अपनी ओर मोड़ लिया और फिर कपकर अपने आँचल में छिपा लिया—  
 “रमौ, मेरी बैणा....”

o

o

o

भीतर आकर बैठी रमौती, तो इस बार फिर ऐसा लगा, जैसे वह सारा घर लकड़ी के खम्भों, गारे-पत्थर की भित्तियों से नहीं, बल्कि उसकी पीठ-छाती से लगकर टिका हुआ हो ।

खेत से लौटकर, साबुली हीलदारन गोठ भैंस-गाय का दूध दुहने को जाने लगी, तो रमौती के सिर पर हाथ फिराकर, कहती गई —“बैणा, ऐसे उदास मन नहीं बैठते, वे ! उठ दि-बाती कर दे । मुझे भैंस को हाथ लगाने को देर हो रही है ।....”

रमौती थोड़ी देर साबुली हीलदारन को जाते देखती रही । साबुली हीलदारन दूध दुहने की बाल्टी लिए, सीढ़ियों से नीचे उतर गई, तो रमौती उठी । आले (आलना) में से रुई निकालकर बातियाँ बनाईं और फिर दिए जलाने लगी । तभी उसे याद आया, कि पहला दीपक तो रसोई के कमरे के एक कोने में स्थित गोलन-गंगनाथ देवताओं और कालिका देवी के मंदिर में जलाया जाता है ?

लेकिन, वह कैसे जलाएगी ? बड़ी हीलदारन छत पर सुखाने को ढाला गया महुवा बटोरकर आने ही वाली है और उसने कहीं कह दिया, कि ‘ठहर, मंदिर के दिए को तो न लग ?’....तो ?

और रमौती को ऐसा लगा, जैसे सारी चाख में एक घनीभूत अंधकार उतर आया है, जिसमें अंधजले-दीपक की तरह टिमटिमाता हुआ मोहनसींग उसे झूठ रहा है—रमौ रमौ....रमौ

...और उस अंधजले-दीपक में तेल की जगह पनार-पानी के प्रचंड दायरे बन रहे हैं—पापिणी, कलंकिनी...

और रमौती के कानों में तभी नाथू हीलदार के फौजी बूँटों की आवाज आई —“अँवैरा हो गया है, बवारी, दिए जला डाल । ओ-के....”

**नाथू** होलदार ने अपनी दिनचर्या निश्चित कर रखी थी। उनका हर काम व्यवस्थित ढंग से होता था। सुबह जुगमुग (तड़के) ही उठना और फिर पाक-साफ-फरागत होने के लिए, घर के पिछवाड़े की चट्टान की ओर चल देना और फिर वहीं हरसींग के नौले को जाकर 'हर-हर गंगे भागीरथी' करना—उसके बाद, पहले सिंगिल और फिर डबल-मार्च करते हुए घर को लौटना।...

आज कुछ विलम्ब से आँख खुली थी, सो नौल से स्नान-ध्यान करके लौटने तक, चारों तरफ चकाचक उजास छा गई।

नाथू होलदार ने चाल और तेज की, कि गाँव की औरतों का भी पानी भरने आने का समय हो गया है। घर लौटे उनको एक लम्बी अवधि बीत गई थी, पर गाँव के बहुत कम लोगों ने उन्हें दिशा-जंगल जाते और नहाते देखा था और वह भी कभी-कभी ही। अन्यथा नाथू होलदार औरों की आँखों में रोशनी आने से पहले ही, अपनी 'मौरनिंग-रूटीन' से 'फारिंग-फिनिश' हो जाते थे।

उनका कहना था—“हमारे शास्त्रों में ऋषी-मुनियों और चार बेदाण्ट-की पंडीतों ने जिस 'बर्म-मुहुर्त' का जिकर बदस्तूर किया है, बिलेतवालों—यानी कि फिलहाल की हमारी अंगरेज गबरमिट—ने उसी मंत्र को 'वेकिंग ऐट दी अरली मौरनिंग' कहा है। मुहूर्त है, मुहूर्त में गाँव की करीब सभी पलाटून उठ जाती है। पर, उसके आगे 'बर्म' लगा देने से वह, यानी कि यह मुहूर्त, देवादिदेव बरमा जी का मुहूर्त हो जाता है—और इसमें कोई-कोई

परसनेंलिटी खास ही उठ पाती है। ऐसे ही, मोरनिंग, मने सबेरा और अरली मने फौरन—इसलिए, अरली मोरनिंग में उठना हर जवान के अण्डर में मुश्किल है। ‘‘अरली मोरनिंग’ के सिलसिले में मुझे बिलेंत वालों की एक अच्छी बात याद आ गई है—यानी की ‘वेलथ समथिंग इज, हेल्थ ओल थिंग इज लोस्ट’...’’

गीला भाड़न कंधे पर डाले, लोटा हाथ में लिए, नाथू हीलदार ‘डनल-मार्च’ करते और लोटे का पानी छलकाते, हर-हर करते हुए, घर के समीप पहुँचने ही लगे थे, कि औरतों की खिलखिलाहट से चौककर ‘अटेंशन’ हो गए। दो-तीन औरतें सामने से खिलखिलाती, आपस में बातें करती आ रही थीं। एक ने दूसरी को चिकोटी काटी—‘‘यह रमौती बड़ी जबर निकली, वे ! मेरी नानी भी (छोटी बच्ची) के बीजू को परदेश मए अठार बरस हो गए। अब थोड़ी लौटते हैं ?...पर, ईश्वर देखने वाला है, एक ज़िबुली को बनाके दे गए थे, उससे दूसरे को छाती का दूध नहीं सौंपा। फिर भी जोड़ने वालों ने किस-किस से मेरी सटबट नहीं बताई ? यार वे। जवान्यु के दिन तो जैसे मैंने काटे, मेरा दुश्मन भी न काटे। जरा छाती पर से धोती सरकी नहीं, कि लोग ऐसी हाय भरते थे, जैसे स्याप ने डंस लिया हो। जरा चलते में भैलों में लचक आई नहीं, कि...यार वे, मरदों की जात बड़ी चटुली होती है।...’’

‘‘औरत जात की जवानी में मरदों की दूध-बिरालू (बिल्ली) की साँठ-गाँठ होती है, वे !’’ दूसरी गदगदा कर, बोली—‘‘और जिस घरणी को दूध की फिकर होती है, वह ठेकी-बरतन सँभाल के रखती है। बिन ढक्कन-पहरे के दूध-दही पर न-जाने कब किस बिरालू-बनढाडू की नजर पड़ जाए।...और, दिदी, धन कह तेरे सत को, कि अठार-अठार बरस बिना खसम के काट दिए। लोग कुछ भी कहें, कहने दे। मान लिया, कभी-कभार तेरी मन-कैसी तूने कर भी ली, तो डर-फिकर में भूख ज्यादा रहती है, पेट कम भरता है।...’’

तीसरी हौले से बोली—‘‘चार लोगों के सामने चाहे, जिसको खुदाके घर की सुनाली जाए, पर हिरदे से सोचने को जाओ, तो न दोष रमौती छोरी का है। न नाथूसींग का। खोट रमौती के भाग की है।...पर, वैसे नाथूसींग ने

कुछ अच्छा नहीं किया जो अपनी ही ब्वारी पर हाथ मारा। देवर होता, तो और बात थी।”

नाथू होलदार ने खेत के किनारे से जरा उचक के देखा, एक रुदरसींग की घरवाली, दूसरी बचेसींग की थी और तीसरी का मुँह दिखाई नहीं पड़ रहा था।

बचेसींग की घरवाली की बातों का सिलसिला रुदरसींग की घरवाली ने आगे बढ़ाया—“हमारे ‘ऊँ’ कह रहे थे कल, हाइ वे, मुझे बड़ी शरम लगती है—ऊँ कह रहे थे, कि नाथू ज्याठज्यू रमौती दिदी का पेट दबा-दबा कर, गरभपात करवा रहे थे।...राम-राम, शिव-शिव ! अपने ही बोए बीज को कौन यों पीसता-कूटता है, वे ? ऐमा निर्दयी राक्षस ?...हमारे ‘ऊँ’ इस राक्षस पापी का हुक्का-पानी बन्द करवाने और गों-निकाल देने को पंचायत बिठाने वाले हैं।...कह रहे थे, रमौती को भी निकाल देंगे।...”

बचेसींग की घरवाली जरा रुक गई, सिर पर फौले को ठीक से जमाकर, दोनों हाथ हिलाती बोली—“रुदरसींग ज्याठज्यू की बात की भली चलाई। (शिवो, रमौती बिचारी ने किसी का क्या बिगाड़ा है ? वह छोरी तो वैसे ही फुटखोरिया है।) हँवे, जिबुली की इजा (माँ), तुम ही बताओ भर दोफर (दोपहर) में, खुले मैदान में भला कोई ऐसा करेगा ? गरभ ही गिराने की नियत होती, तो जोग्यूड़ गों के जनार्दन पंड से दवाई लाकर खिला सकते थे ?...”

“हाँ, हाँ, यह तो तूने इन्साफ की बात कही, ब्वारी ! परार के बरस मैंने जनार्दन पंड की ही दवाई खाई थी, तीसरे महीने का पेट छूटा...” जिबुली की माँ कहते-कहते हड़बड़ा गई और कुछ दूसरी बात चलाना चाहती थी, कि रुदरसींग की घरवाली हँसकर, बोली—“तो, परार के साल तुमने भुटका लगाया था, दिदी ?...च...च...च...घबराती क्यों हो ? कोई मरद जात तो यहाँ है नहीं ?...चार दुख-मुख और भेद-भरम की बातें औरतें आपस में ही तो करती हैं !...”

नाथू होलदार के कानों की पकड़ में उनकी बातें आ रही थीं और

जिज्ञासा बढ़ गई थी, सो खेत की दीवार से लग-लगकर, पानी के नौले की ओर आगे बढ़े ।

बचेसींग की घरवाली ने कमर में चिगोटी काटते हुए, लार-लटपटाएँ स्वर में पूछा—“किसके हाथ पड़ गई थी, दिदी ?”

“अरे, घर के ठेकी-बतनों के दूध-दही को घर की बिल्लियाँ मूख मारती हैं, नाम-बदनाम बनढाड़ों का करना पड़ता है । मैं कोई ऐसी बिशरम-निलंज तो थी नहीं, कि अराए-पराए गों के किसी बैंग (पुरुष) से पिंड अपवित्र करवाती ?”—जिबुली की माँ जरा सशक्त-स्वर में, बचेसींग की घरवाली का हाथ पकड़कर, बोली—“अब तूने ही बात फोड़ी है, तो तेरी जिठानी यह रुदरसींग की घरवाली भी यहीं पर है—दोनों कान खोलके सुन लो । परार के साल (दो साल पहले) की ही बात है । वैसे टोंट तो कभी भी कस दिया करते थे, कि भरे बरतन में से कुछ हमारे हिस्से का भी छलकेगा ?—पर, जिस दिन की बात मैं कह रही हूँ, छूँत नहाए छँसात ही दिन हुए थे । ‘ऊँ’ लकड़ियाँ काटने को और मैं घास काटने का संमाधुर गई थी । जिस दुकान से लाए होंगे, अपना रेशमी फूलवाला रूमाल खोलकर, बोले, ‘ले, भौजी, मिठाई खा ।’...मैं तो, बबारे, शरम के मारे चार हाथ उधर चली गई । पर, पाँव में पापी काँटा लग गया, ‘हाई’ कह के वही बैठना पड़ गया । अब बहुत ज्यादा बारीकी से क्या कहूँ, तुम दोनों कोई छोरी तो हो नहीं ? बंग लोग औरतों को कँसी-कँसी बातों से मतकाते-बोल्याते (बोराते) हैं, तुम दो भी जानती ही हो । उस दिन से वो रोज जंगल में ही ऊपर चिफलजड़ी के बड़े उड्यार (गुफा) में मिलने लगे । अब तुम ही बताओ, ब्वारियो ! मैं बिना-साँड-की-रांड ठहरी । बन-खेत न जाऊँ, तो मेरे गोठ के भूखे मर जाएँ ।...”

बचेसींग की घरवाली ने खिलखिलाकर पूछा—“लो, दिदी, क्या हम तुम्हारी आदत नहीं जानती हैं ? पर, तन-जोबन और मन—इन तीनों पर औरत जात का वश कहाँ चलता है ?...लेकिन, वो तुम्हारे तीन महीने के होनेवाले का घरवा-चटुवा था कौन ?”

“कौन था ? अब भी पूछती है, कौन था ?” जिबुली की माँ बड़े रोब और शिकायत के साथ बोली—“तेरा ही जिठाए, इस रुदरसींग की घरवाली का

खसम था। आजकल तो अब रास्ता बदल के चलता है, मगर परार के साल तक मुझमें अखण्ड-जवान्यू<sup>१</sup> थी, तो मेरे फचीने (आँचल) में सिर डाल के पड़ा रहता था, चिफल जड़ी के उड्यार में।....”

इतना कहकर, पाँव से धरती ठोककर, जिवुली की माँ बढ़ गई आगे और रुदरसींग की, बचेसींग की घरवालियाँ—दोनों देवरानी-जिठानी एक दूसरे का मुँह देखते रह गई।....

तेजी से मन-ही-मन में हर-हर-हर-हर कहते हुए, नाथू हौलदार भी घर की ओर मुड़ गए।....

---

१. अखण्ड तरुणाई।

अग्ने घर के पटांगण में पहुँच कर, नाथू होलदार ने 'जूली की अम्माँ' पुकारा जोर से, तो रमोती की नींद टूटी। साबुली होलदारन उसी के कमरे में सोई हुई थी।

“जूली की अम्मा कह रहा हूँ, कोई सुनता है, कि नहीं?” नाथू होलदार की दूसरी आवाज आई और उसके साथ ही तीसरी भी, कि ‘जूली की अम्माँ और जूली की मदर पुकारते-पुकारते थक गया हूँ, अरे, कोई है भी, कि नहीं सुनने वाला?’

नाथू होलदार साबुली होलदारन को ‘जूली की अम्माँ’ या ‘जूली-मदर’ और बड़ी होलदारन को ‘तिरलोक की अम्माँ’ या ‘तिरलोक-मदर’ कहा करते थे।

रमोती ने साबुली की बाँह पकड़ के हिलाई—“दिदी, उठो हो ! ज्याठजू पुकार रहे हैं।”

अचकचाकर, साबुली उठी और अभ्यास-वश सीधे चाख की ओर भागी। वहाँ नाथू होलदार का बड़ा ट्रंक एक कोने में पड़ा रहता था। उसमें से, बूँट-पट्टे निकाले। पोलिश करने का समय नहीं रह गया था, चाघरे के पाट से पोछा और बोली—“ला रही हूँ, हो। जरा बूँटों में पोलिश मार रही हूँ।...”

नाथू होलदार पटांगण के इस कोने से उस कोने तक चलते रहे। थोड़ी देर में, साबुली नाथू होलदार के मिलिट्री-कपड़े और बूँट-पट्टे लिए आ

पहुँची—“ओ बबा हो, आप तो ऐसे ओर्डर-पर-ओर्डर मारते हैं, जैसे अब भी किसी जरमनी-जपान की लड़ाई में जाना बाकी रह गया हो ?”

नाथू होलदार कपड़े पहनते हुए, बोले—“यह मेरी डेली-रूटीन है, डियर ! बरसों पलटन की रोटी खाई है, आदत पड़ गई है परेड करने की । नहीं करता हूँ, तो दिन-भर बदन-बोड़ी सुस्ती मारती है और क्या भूला, क्या भूला-जैसी होती है । ...”

नाथू होलदार ने बूट पहन लिए, तो साबुली फीते बांधने लगी । नाथू होलदार ने, ‘नो नो, डियर !’ कहते हुए पाँव हटा लिए—“सोलजर की ड्रेस में औरत का हाथ नहीं लगना चाहिए । जब पलटन की नौकरी में मैं हाजिर था—मान लिया, कि वहाँ के फेमिली-क्वाटर में तू भी मेरे साथ वहीं मौजूद थी और परेड के टैम मुझको बूट पहनाने में यों ही अपना मेरे लिए फरज समझ के यों ही कभी मदद करती—और ठीक उसी समय मेरा ड्यूटी-अफसर देख लेता, तो क्वाटर-गारद मिल जाती ।...ओ-के, आगे से ऐसा मत करना । जाके एकदम इसटोब जलाके ऊपर चहा गरम धर दे । मैं मौरनिंग-रूटीन करके फौरन फारिंग होता हूँ ।...”

उधर साबुली होलदारन अन्दर को मुड़ी और इधर नाथू होलदार मन-ही-मन ‘अटेन्शन...न्...न्...न्’ कहते हुए पटाँगण के इस कोने से उस कोने तक गए और ‘अबोटन्न्...न्...न्...न्’ कहकर, मुड़के, इस छोर को ‘लेफ्ट-रैट’ करने लगे ।...

बड़ी होलदारन भी उठ गई थी और रमीती भी । आनसींग तो उनसे भी पहले उठके, गोठ-भेंस दुहने चले गए थे । भेंस अब बाखड़ी हो चली थी, जल्दी पेंगुरती नहीं थी । नौनी के हाथ से आनसींग करीब घंटे-भर से यनों को हथिया रहे थे ।

साबुली होलदारन ने ‘स्टोव’ जलाकर, चाय की कितली चढ़ा दी थी । दूध का ध्यान आया, तो गोठ की देली तक आकर, बोली—“सोरज्यू, चोरी अभी पेंगुरी नहीं ?”

“म्योल पड़ जाए (पवंत से गिर जाए) यह चोरी, इसके हाड़ों को बाघ लग जाए, इसकी कचुनी में कीड़े पड़ जाएँ ! चार घंटे से ऊपर हो गए

थन मसारते-मसारते—मजाल है, जो पँगुर जाए ।” आनसींग, चौरी भंस के हाथ में पकड़े थन को जोर से भटका देकर, बोले - “मुझको लगता है, अब यह इकौली लग जाएगी, ब्वारी ! मैं इस उम्मीद में था, कि भागी के ब्याने तक चार छरक दूध यह चौरी देती रहेगी, घर का चहा-पानी चल जाएगा । पर, भागी तो फागुण में कमन हुई थी न ?” फागुण एक, चैत दो, तीन, चार, पाँच, सौण छै, भदौ सात, असोज आठ—अभी दो-तीन महीने हैं । यह भ्योल पड़नी अभी से इकौली लग गई, तो आगे कातिक और मंसीर में क्या दूध देगी ? ब्वारी, चहा चढ़ा दिया तूने इसटोंव में ? तू जा अब । चौखुटिया-गैर के खेतों का महुवा भड़ने लग गया है । दो डाले लेकर जा तू । मैं तेरे लिए चहा लेकर, वही आ जाऊँगा । चार बालड़े (बालें) हाथ आ जाएँगे । चहा तिरलोक की इजा, ठुली ब्वारी अपने आप बना लेगी ।” और, देख, महुवा के नलुवे के बीच-बीच में जो कौली-हरी पास होगी, उसे अलग निकाल लेना । इस भ्योल पड़नी (पर्वत से गिरने वाली) के चारे को हो जाएगी ।” जा, ब्वारी ! जा....”

साबुली ने दातुली कमर में खौंसी, दो डाले (बड़ी टोकरियाँ) थमाए और चौखुटियागैर को चल पड़ी । पीछे से, नाथू हीलदार की आवाज आई—“तू जाओ, दियर ! थोड़ी ही देर में, तेरे लिए चहा और बिरेक-फास्ट लेकर मैं भी आता हूँ ।....”

आनसींग ने पुकारा —“नाथू बेटे, जरा ठुल ब्वारी से पीतल वाले परात में पिमुण (घ्राटे) का चाटा बनाकर ले आने को बोल दे । पानी ज्यादा न छोड़े, लटपटा बनाके, परात के अन्दर चारों तरफ लगाकर, ऊपर से जरा-सा नमक का हाथ मार देने को बोल । यह कुजात भंस पँगुरती ही नहीं ऐसे ।....”

बड़ी हीलदारन सुन रही थी, सो नाथू हीलदार ने ‘तिरलोक-मदर’ पुकारा ही था, कि बोली—“सुन लिया है, ला रही हूँ ।”

भंस के लिए चाटा देकर, बड़ी हीलदारन अंदर लौटी । नाथू हीलदार अपनी ‘मोरनिंग-रूटीन’ खतमकर, बच्चों के पास आ गए थे । बच्चों को जगाने

के लिए, 'उठ जाग मुसाफिर भोर भई, अब रैन कहाँ जो सोवत है', की घुन होंठों-की-सीटी से बजाते हुए, बिस्तर पर बैठ गए ।...

रमौती चूल्हेवाले कमरे में, बड़ी होलदारन के पास आ गई थी । बोला—  
"दिदी, सोरज्यू के साथ मैं भी जाऊँ साबुलि दिदी का हाथ सारने ?"

"न रे, छोरी, तू कहाँ जाएगी । तेरे ज्यादाज्यू कहते हैं, कि तुझे थोड़े दिन घर में आराम करने दो ।..." बड़ी होलदारन बोली—“तू घर पर ही रह । बालकों को संभालना और खाना पकाना । मैं गाय-बकरी चराने जाऊँगी । तुझे लगाती, पर गाँव वालों के मुखों में कीड़े पड़े हैं, ग्रंट-शंट बकके ग्वाले छोकरे तुझे परेशान करेंगे । सबसे भली, घर में पड़ी रह । एक तो घर संभालने को चाहिए ही ।...पर, बुरा न मानना, ब्वारी, तू तो मेरी बेटी के बरोबर है । पूछ सिर्फ इसलिए रही हूँ, कि सातवाँ लग जाने के बाद सोरज्यू पेटाली औरत के हाथ का भात नहीं खाते हैं । मुझे यह छठवाँ लगा है, तुझे कितने महीने हुए हैं ? तेरे हाथ का तो वैसे भी...”

रमौती लाज और वेदना से अपनी जगह पर, आँखें नीची किए, खूँटी-सी गड़ गई । जीभ अटपटा गई, कान सुन्न पड़ गए और आँखों में आँसू आ गए—कितने महीने हो गए हैं ?...ओ बा, इस प्रश्न के साथ कैसी मर्मवेधी-छलना जुड़ी हुई है ?

कैसी हालत हो गई है उसकी ?

जैसे पनार की कोई नादान मछली, भूख में, किसी मछियारे की बत्सी का चारा खाके, काँटे में फँस गई हो और छटपटाकर, अधमरी होकर, बड़ी मुश्किल से काँटे से छूटकर, फिर पानी में आ गिरी हो...और साथ की मछलियाँ पूछ रही हों, “क्यों, री, कितना चारा खाया था ? क्यों, री, कैसा चारा खाया था ? क्यों, री, कैसा स्वाद आया था ?...”

रमौती को अपने गले से लगाकर, बड़ी होलदारन बोली—“ब्वारी, जा होना था, ईश्वर की मरजी पर बश किसका चलता है ? तू क्या करेगी करम-लेख को ? पर, यों कलेश न किया कर अब । यह न समझना, कि बड़ी दिदी चोट लगे में दुखाती है । पर, ब्वारी, तुलसी को तो मैं खुद भी नहीं

लगती न ? छोटी ही पानी चढ़ाया करती है । घर के रसम-रिवाजों को तो निभाना ही पड़ता है ।”

“दिदी....” —रमौती इतना ही बोल सकी ।

“छोरी, न बोलने से दुख और बढ़ता है ।” बड़ी होलदारन बोली—  
“दुख तो एक फोड़ा है, ब्वारी ! जितना ही इसे अच्छेदा रखो, उतना ही पीब चड़कता है । फोड़ा पीब निकलने से और मन का कलेश चार दुख-मुख की बातें मुख से निकलने से घटता है । यों तू अकेले-अकेले ही अपने दुख को छाती से चिपकाए रखेगी, तो रो-रो मरेगी, छोरी तू ! छोटी है, मैं हूँ । हमसे दुख घटाया कर । भारी बोझ अकेले नहीं ले जाता कोई, चार कंधों से लगाकर हलका किया जाता है ।....”

“दिदी...., मैं अभागी पापिन....मुझसे घिनाती नहीं तुम ?”

“तू छोरी तो मेरी पोथी (बच्ची) है, ब्वारी ! और अपनी पोथी गू लगी हुई भी प्यारी ही लगती है ।....” बड़ी होलदारन ने रमौती को छाती से लगा लिया—“और फिर कौन तूने किसी का खून कर दिया है ? इस कलजुग में तो रहते बाल-बच्चों और खसम के लगाने वालियाँ अपने देवर-चाचा-भतीजों, भिनों (जीजा) और जिठाणों से भुटका लगा रही हैं ।....तू तो बिना सिर-छत्र की ठहरी । उमर तो नहीं देखती, कि किसी का कोई है, या नहीं । पाक का समय आता है तो अनार-दाड़िम लाल होकर चटकते ही हैं ।....मन में ज्यादा शूल मत रख अब, बलिक मजबूती कर । तेरे सिर पर जठ-ससुर की छाया है, हम दो हैं—बहुतों को तो सभी के जूते रहते हैं ।....तू छोरी तो....”

खें....खें-खेंखारते हुए, आनसींग बोले—“ठुलि ब्वारी, ले, यह दूध की तोली सँभाल । बड़ी हुज्जत से चार चरक छोड़ो हैं । नाथू कहाँ गया ? उसको चहा-रोटी देकर, ग्वाल जाने को बोल दे । चौखुटियागैर मैं चला जाऊँगा । गुमानसींग ने, शायद, सिखा-पढ़ा दिया है दोलिया डूम को, उसके आने की ऐसी ही है ।”

“ऊँ तो कह रहे थे, कि दोलिया नहीं आएगा, तो तू चली जाना गाय-बकरी चराने ।” बड़ी होलदारन दूध कड़ाई में डालती बोली—“बोलते थे, ऊँ, कि बीज्यू चौखुटियागैर भी नहीं जावें । वहाँ से डेढ़ मील-दो मील चढ़ना पड़ता है घर को । भला, अब उनकी बोझ उठाने की उमर है ।....ऊँ कह रहे

थे, कि चौखुटियागँर वो खुद जाएँगे मडुवा के बालड़ों को लाने । गाय-बकरी चराने के बारे में भी कह रहे थे, कि बकरियों के साथ दौड़ने में कहीं गिर पड़ेंगे बीज्यू । सौरज्यू, ऊँ आपके काम करने से बहुत नाराज होते हैं, हम सब पर । सो, घर पर ही बच्चों का खेल लगाओ आप । बन ग्वाल में जाऊँगी... पर, खाना बनान की इल्लत है... रमौ ब्वारी पका लेती, पर आप की फिकर है...

बड़ी हौलदारन ने कह तो दिया, पर डर गई, कि न-जाने सौरज्यू क्या बोल दें ? रमौनी सुनेगी, तो और रोएगी ।

आनसींग बोले—“अन्न तो कोई भी पकाए, तुल ब्वारी, उसके सत-स्वाद में फरक नहीं पड़ता है । अन्न तो खुद ही पवित्र चीज है, किसी के हाथ से पके, पवित्र ही रहती है । नानि ब्वारी को तुम लोग अब रसोई सौंप दो । बाहर का काम इस छोरी से नहीं कराओ । अच्छा, तू मुझे जरा चहा दे जाना और एक चिलम तमाखू भरके । मैं जरा गोबर-गोंत के हाथ-पाँव धो लेता हूँ । और नाथू को बकने दे, वह क्या जानता है, कि खेती का काम किस उमर तक करना चाहिए । बीज्यू कहा करते थे, कि हमारे बूबू अठानव्वे बरस की उमर में खेत में ढल जोतते हुए मरे थे ।...”

हाथ-मुँह धोके पहले तो आनसींग, आँगन के कोने में, कुसम्यारू के पेड़ के नीचे बने चौतरे पर बँठ जाते थे—चहा, तमाखू पीने को, पर कल से अन्दर ही बँठने लगे थे । रमौती के लिए, उनके मन में रोष तो है, पर दया की, सहानुभूति की तुलना में हलका पड़ जाता है । मोहनसींग की है, इस विचार से ही दिवंगत बेटे के हिस्से का सारा प्यार भी उसी के हिरसे लग जाता है । आनसींग ने सतजुग-कलजुग दोनों देखे हैं । रमौती का अपराध मामूली नहीं, पर उसे अक्षम्य समझने की भावना मन में आते ही उनकी आत्मा वलेश से थरथरा जाती है । किसी ने नहीं देखा, तो क्या हुआ ? आनसींग दिन में हजार बार रमौती के मुँह को, हाथ-पाँवों को देखते रहे हैं । ऐसा लगता रहा है, बेटा मरकर बहू में समा गया है । बहू न रहेगी, तो...

आनसींग के तन-मन में इस कल्पना से ही भुरभुरी-सी उठती है और वो चाहते हैं, रमौ ब्वारी जैसी भी रहे, मेरी आँखों के आगे रहे । इसीलिए उन्होंने आज अपने मन को इस भावना से ही मुक्त कर दिया, कि बहू

पापिष्ठा है। यह भावना, जो बिच्छू की तरह उन्हें डँस रही थी, अधिक न रहे, विकसित न हो, इसीलिए उन्होंने डंक से तिलमिलाने वाली मान्यताओं को ही ठुकरा दिया है—और यह सोच लिया है, बहू जैसी पहली थी, अब भी है। वही मोहनसींग की छाया से भरी-भरी आँखें और वही वधुत्व की गरिमा से गदराया हुआ चेहरा और वही जतन से चलते हाथ-पाँव—बहू में से क्या गया है भला, जो वह गलित-पतित मानी जाए ? यह तो मन का दुश्चिंतन है भला, जो मन को सालता है, कचोटता है।

और यह उदारता ही क्या है ? बेटे-बहू के प्रति लाड़-प्यार है, जो मन को समझाता, संतोष दिलाता है। नहीं तो, आनसींग ने कभी नाथू होलदार की माँ के हाथ का भी पका भात नहीं खाया, जब जमनसींग, नाथू या मोहनसींग को उसके गर्भ में रहे सातवाँ महीना लग गया।

पर, आज मान्यता बदल देनी पड़ी है। अपवित्र वस्तु से धिन लगती है। बहू को प्यार करने के लिए, उसको पवित्र मानना ही आवश्यक है। इसलिए अन्न की पवित्रता आज उजागर हुई है।

पर, जहाँ तक कानों का सवाल है, लोगों के लाछनों का गरम तेल पड़ेगा, तो दाह होना ही ? बाहर का कोई एकटक आँखों से देखेगा, तो जहाँ तक आँखों का सवाल है, वो तो भुकेंगी ही।

बड़ी होलदारन चहा-चिलम आनसींग को दे गई और फिर नाथू होलदार के लिए चहा का गिलास लेकर, बच्चों के कमरे में गई, तो देखा—नाथू होलदार बच्चों के साथ सोए पड़े हैं और हाँठ सीटी बजाने की मुद्रा में मुड़े हुए हैं।

बड़ी होलदारन को हँसी आ गई—“उठने को उजाला होने से बँर है, नीन कैसे पूरी होगी ? हँ हो, सोना ही हो, तो बूँट-पट्टी उतार के सो जाओ ना ?”

“होल्ड !” नाथू होलदार अचकचाकर, उठ बैठे। परेशान-आँखों से बड़ी होलदारन को देखा—“व्वारी कहाँ है ?”

“क्यों ? चूल्हे में चहा पी रही है।”

“क्या बताऊँ, तिरलोक-मदर ! अभी-प्रभी आँख भूक गई, तो सपने में क्या देखता हूँ, कि चारों तरफ इधर-से-उधर तक चारों कोनों में एकदम गहरा

पानी फैला हुआ है—ऐसा एक तालाब है ।...और रमी ब्वारी उसमें कूदने को खड़ी है ।” नाथू होलदार बोले—“मैं तो ‘हील्ट’ कहकर, ब्वारी को रोकने वाला था कूदने से ।... इतने में तूने पीछे से आके अचका (चौंका) दिया ।”

“बस करो, हो ! बच्चों की तरह बातें बनाते हो ।—” बड़ी होलदारन बोली हँसकर—“ब्वारी को कूदने-झूबने से बचा के लाए हो, उसी का भामत (भ्रम) रह गया है ।...उठो हो, अब, चहा-रोटी ठंडी हो रही है ।”

○ ○ ○

आनसीग ने गाय-बकरियाँ खोल ली थीं और नाथू होलदार विरोध कर रहे थे, कि तिरलोक-मदर चली जाएगी, आप कहीं बकरियों के पीछे दौड़ सकेंगे ?

इतने में नीचे से अपनी गाय-बकरियाँ लेकर, पनुवा आ गया—“क्यों हो, होलदार दा ! दोलिया नहीं आया क्या तुम्हारी गाय-बकरियाँ ले जाने ? बूबू भला बकरियों को कहीं से सँभाल पाएँगे ?”

“पिन्गू बदर, क्या बताऊँ, याग !—” नाथू होलदार बोले—“बोज्यू तो मेरी सो-में से-एक भी नहीं सुनते हैं । दोलिया ससुरा आज आया नहीं है । थोकदार ने सनका दिया होगा ।...”

“ऐसा करो, आज तुम्हारी गाय-बकरियाँ मैं चरा दूँगा, होलदार दा !... मैं तो खाल जा ही रहा हूँ । चार थान अपने हैं, चार तुम्हारे सही ।” पनुवा बोला—“बूबू, तुम आराम करो । गाय-बकरियाँ मैं ले जाऊँगा आज । भोजी को लगाने की भी कोई जरूरत नहीं । चल ले काबरी, बिनुली... इस लाल बकरी का नाम क्या धरा है, बूबू !”

“लाली ।”

“चल ले लाली, जंगल में जाली, हरी घा मचकाली, पुछड़ी हलकाली ठेप-ठेप करली, आपण गुसें को नाम चलाली ।” चल ले...” कहकर, लाली की पूँछ को जलेबी-जैसे घेर देता हुआ, पनुवा आगे बढ़ गया—“और होलदार दा, कभी फुरसत का टैम मिले, तो मुझे बताना ! आजकल जंगल में असली घुरड़-काँकड़ फिर रहे हैं !...”

१. चल लाली, जंगल में जापगी, हरी घास खापगी, पूँछ हिलापगी, लड़ाई लकेगी (दूसरो की बकरियों के साथ) और अपने स्वामी का नाम चलापगी ।...

**सा**बुली ने एक आंचल मडुवा टिपा ही था, कि ऊपर के खेत से किसी ने पुकारा—“साबुली चेली, वे !”

साबुली होलदारन ने सिर उठाकर, ऊपर देखा, तो अपने खेत में खड़ी सरली थोकदारन दिखाई पड़ी। चौखुटियागैर की जमीन में ऊडलगों के हर ज़िमीदार (किसान) के दो-चार खेत थे। आनसींग के तीन बड़े-बड़े खेत थे। पहले खेत से ऊपर वाला खेत गुमानसींग थोकदार का था।

अबके साल फसल पछिया गई थी, देर से पकी थी। पर, एक-साथ अनाज बटोरने, घास-नलुवा काटने और हल जोतने, गेहूँ-जौ बोने का काम-भार पड़ जाने से, किसानों की व्यस्तता बहुत बढ़ गई थी।

अबके असोज निकलने लगा था। और वर्षों भादों नहीं निकल पाता था, कि गरम सारों की मडुवा-मादिरे की फसल आधी हाथ आ जाती थी, और नन्दादेवी के मेले में नाचने-गाने के लिए गाँववालों को यथेष्ट समय मिल जाता था। पर, अबके बरस कुछ ऐसी बे-मौके की खेती हुई, कि नन्दादेवी का मेला लगने का उत्साह धीमा पड़ गया। किसानों के लिए तो सबसे बड़ा मेला पहले अपनी खेती की अन्न-बालों का होता है। साल-भर की हँसी-खुशी उसी पर निर्भर रहती है। उसके आँगन में आ जाने पर ही उत्सास के गीत फूटते हैं।

सो, अबकी नन्दादेवी रूखी-रूखी ही चली गई थी। यों चार हाथ ‘हुडका’ ऊडलगों के कुछ जवान भी बजा आए थे, पर जनता-जनार्दन कम आई थी, सो मन नहीं लगा और लौट आए।\*\*\*

परन्तु, इधर सबसे नाथू हीलदार और रमौती की चर्चा चली थी ऊडलगों के कुछ मनचले लोगों को पछतावा हो रहा था, कि काश, यह बात पहले ही फूट जाती ?...

अबकी नन्दादेवी में एक गीत रंगोड़ वाले चला गए थे । उनके यहाँ भी एक ऐसी ही अनंतिक-प्रणय की सनसनीखेज घटना घटी थी । पुत्र-द्वारा परित्यक्ता पुत्र-बधू को समुर से गर्भ रहा था । लोगों ने उन दोनों का गीत चला दिया था ।

“ब्वारी, वे लछिमा ब्वारी, तीले धारो बोला ।

सौरा, रे सिमुवा सौरा, तीले धारो बोला !...”

ऊडलगों के लोगों ने तब भी नन्दादेवी के मेले में गीत चलाने की बात सोची थी, जब नाथू हीलदार पलटन से साबुली को साथ लेकर लौटे थे । पर, चूँकि साबुली गुमानसींग की बेटी थी, उसकी बदनामी के साथ गाँव के मुखिया की प्रतिष्ठा का भी होम होता था, सो लोग चुप लगा गए । पर, एक तो नाथू हीलदार के पलटनिया-स्वभाव से कुछ लोग चिढ़े हुए थे, दूसरे रमौती के रूप की चर्चा चलाने के लिए जीभ भी व्याकुल रहती थी, सो रुदरसींग ने इस प्रस्ताव को गाँव से बाहर के लोगों तक भी पहुँचाने का व्यवस्था कर ली थी, कि नाथू हीलदार और रमौती का गीत चलना ही चाहिए ।

पर, अबके वरस की नन्दादेवी इस घटना से पहले ही खिसक गई थी और गीत चलाने की सारी उपयोगिता-महत्ता तभी सार्थक सिद्ध होती, जब वह नन्दादेवी के मेले में चलाया जाता ।...

नन्दादेवी का मेला अलमोड़ा शहर में लगता था और इस मेले में अलमोड़ा-गढ़वाल-नैनीताल तीनों जिलों से जनता आती थी और गीत के दशों-दिशाग्रों, वारह पट्टियों में फैलने की सम्भावना रहती थी ।

रुदरसींग ने थोकदार गुमानसींग से कह दिया था—“ज्याठ बीजू, दुश्मन से अपनी कसर निकालने का यही मौका है । जो परमेश्वर की दया से हाथ आया है । इस नाथू सिपाही ने आपकी इज्जत बिगाड़ के रख दी थी, साबुलि बैणी को जबरन उठा ले गया था । आप अपनी लाज-शरम से माथे का

कलंक दबा गए ।...पर, यह एकदम गुलाबी मौका हाथ आया है, बदला लेने का ।...बस, नाथू सिपाही चार दिन में फिर गांव से लाम को भागता-फिरता नजर आएगा ।...

गुमानसीग थोकदार को क्या था ? अपना दुश्मन काटने को पराए म्यानों की तलवारें मिल रही थी। सो, रुदरसीग को कह दिया—“बेटे, नाथू ने तो मेरी जैसी मिट्टी पत्नीद की, किसी ने ढँकी-छिपी बात है नहीं। ऐसे खतरनाक और बेईमान-अधमी आदमी का गाँव में रहना ठीक भी नहीं। कल मेरी, आज अपनी, परसों तुम्हारी बहू-बेटियों पर हाथ डालेगा - जैसे भी हो, इसको बार-पतवार-घाहर तो कर ही देना है। और गाँव की इज्जत तो तुम्ह-जैसे चार नाकदार-ईमानदार जवानों के कंधा पर ही टिभी हुई है। मुझे बूढ़े का क्या है ? मेरे लिए दोस्त-दुश्मन एक सरीखे हैं। तू जो करेगा, मेरा पूरा जोर साथ रहेगा ।...”

रुदरसीग ने पंचायत भरने की व्यवस्था कर ली थी और आज दस बजे के लगभग गुमानसीग थोकदार के पटांगण में पंचों की सभा लगने वाली थी ।...

सरुली थोकदारन यही संदेश साबुली को सुनाने को विकल हो रही थी। साबुली ने ऊपर को मुख किया, पुकारने पर, तो शहद-भरे मुख से बोली—“साबुलि चेली, कितना टिपा<sup>१</sup> मडुवा ? थोड़ी साँस बिसाले। आ मेरे साथ एक गास कल्यी<sup>२</sup> कर ले, चेली !...” साबुली बोली—“कैजा<sup>३</sup>, थोड़ी ही देर में मेरे शीरज्यू आने वाले हैं, मेरे लिए चड़ा-कल्यी लेकर। उनके आने तक एक डाला मडुवा भर लेना है मुझे। घर से जुगमुग ही चली आई थी और अब घाम आ गया है। अभी आधा ही डाला हुआ है। तू कल्यी कर ले, कैजा, मुझे न भूख ही है, न फुरसत ।...”

साबुली के उत्तर से सरुली का मन खिन्न तो हुआ, पर हँसती हुई, कल्यी की पुतुरी (पोटली) लेकर, नीचे को चली आई—“चेली, तू तो निठुर हो गई है, पर ममे<sup>४</sup> का दिया तो बजर से नहीं बनता ?...जैसे ही मैं तेरे

१. ‘टिपना’ चयन करने के अर्थ में प्रयुक्त होता है।

२. अल्पाक्षर या कलेवा।

३. बिमाता।

४. माँ।

लिए बिलबिल करती बिलखती, सूरत देख-देख के कलेश से कलेजी के ककड़ी-जैसे चीरे बनाती हैं, चेली, ऐसे ही तेरे बौजू भी तुझे याद करते हैं, मेरी साबुली चेली, मेरी साबुली चेली !”

साबुली वाले खेत में आकर, सख्ती थोकदारन ने कल्यों की पुंतुरी एक ओर रखी और फिर आगे बढ़कर, साबुली को कलेजे से लगा लिया—“द, मेरी चेली ! शिबो, तू कितनी दुबली है गई है, पोथी ? मृट्टी से पकड़नी हो गई है, छोरी ! पहले कंसा गदगदान शरीर था ? घाम में चलती थी, तो घी-जैसा नितरने लगता था । अब गले लगाने में हाड़ बज रहे हैं ।...”

बहुत दिनों के बाद यों आकुल प्यार के साथ सख्ती मिली, तो साबुली का भी मन भर आया । लाख बिसरा दिया गया हो, प्यार पुराने गुड़ की जैसी मिठास देता ही है ।

साबुली ने सख्ती के पाँवों को छूकर, पहले ‘पैलाग कंजा’ कहा और फिर अंगाल मिड़ी (आलिगन) करती, जोर-जोर से रोने लगी—“कंजा...”

“मेरी चेली !...” सख्ती थोकदारन खुद आँसू बहाती, साबुली के आँसू पोंछती, बोली—“बड़ी अभागी निकली तू । एक डाल छोड़ के, दूसरी पर हाथ डाला, उसमें भी तिमुखिया-काँटे ही निकले । अधर्मी नाथू हीलदार-जैसा पापी, निर्दयी मिला । चेली, उस रनकरे का तो चटुवा-ढडुवा-जैसा चटोर सुभाव है, कभी इस बरतन में मुँह, कभी उस बरतन में ! ऐसा चटुवा खसम अपनी घरवाली को भला क्या सुख दे सकता है ? नाथू तो चमार-भंगियों से भी बदतर है । लोग अपनी गोठ की गाय को पराए गोठ के बहोड़े से कमन\* कराते हैं, मगर इस चमार की थू-थू-थू... अपनी ही बारी पर हाथ मारने में पापी की छाती फटी भी नहीं ।... मैं धन-धन कहती हूँ, जँवाई लाला लछमीनरायण को, कि देख, उसे कहते हैं खसम ! तूने छोड़ दिया, तो बिचारा आज तक बाल-बरमचारी बनके बैठा है । नहीं तो, वह चाँदी-सोने की मूरत—उसे क्या औरतों का अकाल था ? मैं...”

साबुली के हल्के से झटके से, सख्ती थोकदारन का वाक्य कच्चे धागे-सा टूट गया ।

भांगड़े की आस्तीन से, साबुली ने अपने आँसू पोछे और संयत-स्वर में बोली—  
 “कँजा, तू इजा की जगह है। मेरी पूज्य है। बौज्यू से यह मनखी-जून<sup>१</sup> मिली है।  
 उनकी भी मैं करजदार हूँ। पुरुषों का ऐसान<sup>२</sup> भुलाने से नरक भोगना पड़ता  
 है...पर, कँजा, अब दूध जमके जो दही होना था, वह हो गया है। उसे लाख  
 कोशिश करो, वह दूध अब हो नहीं सकता। मेरे भाग में जो लिखा था, मेरी  
 मति में जो फरक पड़ना था, वह एक बखत पड़ गया। कैसे, कहूँ, कि मैंने  
 लाला को छोड़के पतिबरत-धरम को खंडित नहीं किया? पर, होनी को कौन  
 टाल सकता है?...और अब तो यह है, कँजा, कि एक डाली छोड़के, दूसरी  
 का आधार ले लिया है, तो तावे-जिन्दगी उसी डाली को थाम के जिन्दगी  
 गुजार देनी है। तुम और बौज्यू मुझे भूल जाओ अब!...और कँजा, हमारी  
 जुली के बौज्यू को कोई लाख बुरा बहे, पर ऊँ तो लाख के आदमी हैं। मैंने  
 उनका-जैमा खरा और मोहिल हिया किसी का देखा नहीं।...”

“मोहिल क्या है, बार मुलुक बरमा-असाम-बंगाल घूम के आया है, कुछ  
 जादू-जंतर-माया-मंतर सीख के लाया होगा?” सरुली थोकदारन बोली—  
 “नहीं तो चेली, तू कितने ऊँचे खानदान में पैदा हुई थी और कितने बड़े घर  
 में डोली गई थी तेरी? इस अघरमी ने तुझसे कहाँ गू में मुख डलवा दिया  
 तेरा। थू...थू...थू...पापी, बहुत घिमंड क्या करता है, ईश्वर के भी चाद  
 हाथ हैं, वही तेरा भी नाश करेगा।...”

“कँजा!...” साबुली ने लपककर, सरुली के मुँह पर हाथ रख दिया—  
 “नाश हो उनके दुश्मनों का। तू ऐसे उनको गाली देगी, तो मैं तुझसे बिलकुल  
 नहीं बोलूँगी। अब जा, तू अपना काम कर। मेरे सौरज्यू मेरे लिए चहा  
 लेकर आने ही वाले हैं। कही सुनेगे, तो सोचेंगे, ज्वारी मेरे बेटे की तुराई  
 करती है।...”

“मेरा तो हिया फटा हुआ है, चेली, उसी से घन की जैसी दन्-दन् चोट  
 निकलती है। तू नादान है। तुझे अकल कहाँ? पीछे पछताएगी। ठर, एक  
 दिन तू खुद ‘सरुली कँजा ने क्या कहा था?’ नहीं कहेगी, अपने इसी मुख से,

१. मनुष्य-योनि।

२. अहसान का अपभ्रंश।

तो मेरा नाम सरुली थोकदारण नहीं, सरुली डुमुणि कह देना !”—सरुली थोकदारण, दातुली की नोक से खेत की मिट्टी खोदते हुए, बोली—“मैं तो फिर कहती हूँ, चेली ... और तेरे भले की ही कहती हूँ, कि लाला लछमीनारायण-जैसा खसम तुझे सात जनम में भी नहीं मिलेगा। मेरा कहना मान, शाम को घर चली आ। तेरे बोजू तुझसे कुछ नहीं कहेंगे। रुदरपुर से जवाई की चिट्ठी-पत्री भी आई है और तुझे देखती चिट्ठी के मय नाती तिरलोकिया के बुलाया है। तू लाख कह, पर तिरलोकिया नाती पर तो लाला लछमीनारायण जवाई का रुपए-पैसे-सोलह आना बरोबर हक है। ... नाथू से तो तुझे वह खड्ड-दबानी जूली-भूनी ही हुई है ? उसके पाप को उसी के सिर पर डाल जा। कन्या होने में औरत को कोई दोष भी नहीं है। धरम की घग्वाली तो वह उसी पुरुष की कहलाती है, जो उससे बेटा पैदा करता है। ... लाला लछमीनारायण के यहाँ तुझे इतना बोल-बुत का काम थोड़े ही करना पड़ता है। रईस घर ठहरा। पकाया-तताया, मोहन-भोग उठाय। अकड़-पेटपीड़ से पेट बचता है और हाथ-पाँव नीनी से चुपड़े-जैसे भलग दिखते । जब तू मंत आई थी उस बरस, कंसी कैरवा-जैती कौली<sup>१</sup> हो रही थी ? ... और अब ला दिखा तो तेरे हाथ, खड्ड पड़ गए होंगे ?”—कहकर, सरुली थोकदारण ने साबुली का हाथ पकड़ना चाहा। साबुली फिर मे बालें काटने में लग गई थी। सरुली की बातों से उसे क्रोध आ रहा था। हाथ पकड़ने लगी, तो दातुली उल्टी करके सरुली की अँगुलियों पर आघात कर दिया—“तू क्यों नहीं चली जाती खुद अपने जवाई लछमीनारायण के घरबार ? जा, तू ही करला अपना पिंड कैरवा-जैमा कौला ! ... कैजा थी, इजा-बराबर थी। चार अच्छी-भली बातें बताती। तेरी मति में ऐसे पत्थर पड़े हैं, कुमति सिंघानी है ! ... और, देख, मेरी बेटो को, उनको—किसी को भी ऐसी साली देगी, तो मुलैज<sup>२</sup> नहीं करूँगी। चार अँगुल पहले से ही ईश्वर ने चौड़ा कर रखा है तेरा मूख, मेरे हाथ पड़ेगा, तो दोनों कानों के साथ मिला दूँगी चीर के। ... तिरलोकिया की बात करती है तू ? तू देखने आई थी, कि तिरलोक को मैंने किससे पैदा

१. कैरवा-जैती कोमलांगी। कैरवा, एक कोमल वन्य पौधा।

२. मुजाहिजा का अपभ्रंश।

किया ?...सब जानती हैं, तेरे करम । अपनी शरम से चुप रहती हूँ । कंजा है करके, लिहाज करती हूँ, तो छाती पर घुटने टेकती है ? अरे, कंजा, पराई खूँत का खून सबको दिखाई पड़ता है, अपने दाग सब छिपा के रखते हैं ।...”

सरुली थोकदारन बोखला उठी । दाँत किटकिटा कर, बोली—“जा फिर, राँडी, उम पलटनिया मे ही लगी रह । यू, तेरी जात का मूख देखने को नहीं मिने । ठैर जा, अभी थोड़ी देर में हमारे यहाँ पंचैत बैठने वाली है । तेरे पलटनिया को दही-मोसा<sup>१</sup> मुक्त में लगाकर, मार जून ही-जूतों से मिर के बाल मावुत करके नहीं निकाला गों-गाड़ से, तो मेरा नाम भी सरुली थोकदारन नहीं ।...अतीजा रुदरिया तेरे पलटनिया का और तेरी लडिया ब्वारी रमौती राँडी के अधरम का गीत भी गवाने वाला है । नन्दादेवी का मेला चूक गया, तो क्या हुआ ? हमारे यहाँ खसडुवा का त्यार<sup>२</sup> तो होता ही है ? उसमें और बरस गों वाले ‘भैलो खतडुवा, भैलो, जी भैलो ! गाई की जीत, खतडुवा की हार ।’ कहते थे—अबके बरस, ‘भैलो जी, नाथू पलटनिया मरलो जी, पापी को मुख कालोजी, रमौती राँडी को पाप फुटलो जी । थोकदारजी की जीत, नाथू पलटनिया की हार !’ कहेंगे ।...ठैर, मैं भी देखूंगी, तेरी घिमडी बातों का धुँवा ।...”

“धुँवा देखना तू अपना, धुँवा देखना तू अपने पालने वालों का । ऐसा कहने वाले गों के सब लोग हो जाएँ तेरे मुस्यार<sup>३</sup> और उनके घर लग जाए ‘भैलो खतडुवा’ की आग ।...”

हर वाक्य की पूर्ति के साथ उलटी दातुली से अपनी हथेली को ठोकती, क्रोध से लाल आँखें दिखाती, साबुली सरुली थोकदारन की ओर बढ़ी—“राँडी, तू मेरे उनको ‘मरलो’ कहती है ? परमेशर करे, तेरा वह भोटिया बकरे-जैसे सफेद बाल वाला बूढ़ा अबके साल का मडुवा-मादिरा न भुगते । आ, राँडी, ले । मैं धर देती हूँ, तेरा सतधरिया-काला चरयो<sup>४</sup> डाँसी पत्थर पर ।”

१. तवे की स्याही ।

२. एक विजय-सूचक अग्नि-स्यौहार ।

३. खसम ।

४. सात घंटों में पहना गया मंगलसूत्र ।

सरली थोकदारन ने भी अपने हाथ की दातुली दिखाई, कि अपनी जपलपिया भीतर कर, नहीं तो आज इसी खेत में तेरी लाश होगी ।...पर, ढरने की जगह, साबुली बाज की तरह झपटी और सरली की कमर पकड़कर, उसे उठाके नीचे के खेत में डाल दिया—“देख फिर, रांडी, किसकी उमर कितनी है ।...”

सरली थोकदारन जोर से चीखी—“ओ बबो ! मर गई मैं । कोई है, रे, खुनने वाला ? आज इस खेत में इस साबुली रांडी के खसमों को हेजा हो गया है । इस रांडी ने मेरा खून कर दिया है, रे ! दातुली से मेरा गला काट दिया है ।...ओ, बबो ! कोई है, कि नहीं आज मुझे आज बचाने वाला ? ”

साबुली और दातुली दिखाती नीचे उतरने लगी—“अच्छा, रांडी, हलजाम तो तूने लगा ही दिया है, अब काट ही देती हूँ, तेरी पतख्वा गरदन...”

सरली थोकदारन कमर पर हाथ रख के उठी और ‘ओ बबो, ओ बबो’<sup>१</sup> करती अपने खेतों की ओर भाग गई ।...

---

१. अरे, बाप रे ! अरे बाप रे !

जमनसींग भेंस हथिया के<sup>१</sup> लौट रहा था छान से, कि 'राम-राम दाज्यू !' सुनाई पड़ी। पलटकर देखा, तो रुदरसींग ने दुबारा 'राम-राम, दाज्यू !' कहा।

"राम-राम, भया, राम-राम ! आज सबेरे-सबेरे किधर को चलाई हो रही है ?" जमनसींग ने दूध की बाल्टी पर कुत्ते का भगला पाट ढाँकते हुए, ताकि खुले दूध पर नजर न पड़ जाए, प्रश्न किया।

और आगे बढ़ते हुए, रुदरसींग जमनसींग के करीब आ गया—"बस, और कहाँ को होगी चलाई वलाई। इधर, जरा तुमारी ही कुशल-बात लेने आ गया हूँ। आज दोफरी<sup>२</sup> को बरा पंचैत बैठने वाली है। थोकदारज्यू के पटागण में। तुमको खास तौर से बुलाने के लिए मुझे कहा है उन्होंने, कि 'आनसींग के बेटों में जरा भगर कुछ ल्याकत<sup>३</sup> है, इन्सैनियत है, इज्जत-आबेरू है तो ले-दे के सिर्फ जमनिया बेटे में है। नाकदार बेटा था, अपनी आबेरू और पोजीशन का पक्का था, इसीलिए बाल-बच्चो को ले के शुक्का-फजीती से बच के निकल गया।'....और उन्होंने आज तुमको पंचैत में खास तौर से बुनाया है, दाज्यू !"

"क्यों हो, रुदरसींग किसकी पंचैत बैठने वाली है ?" बाहर की बातचीत सुनकर, जमनसींग की घरवाली बाहर निकली—"आओ, भंदर क्यों नहीं

१. यहाँ दूध लगाने के लिए हथियाना शब्द प्रयोग में लाया जाता है।

२. दुपहरी का अपभ्रंश।

३. लियाकत का अपभ्रंश।

आते ? तुम तो बिलकुल जैराम पटवारी के चपड़ासी की तरह बाहर से ही समन दे रहे हो ? ... मैं कोई गोठ तो डाल नहीं दूँगी तुम्हें ? ...”

“तुम्हारे गोठ में तो जमनी दाज्यू के लिए ही पूरी गुन्जैश नहीं है, भोजी, रुदरसींग को कहाँ ठौर दे के सँभालोगी ?” कहकर, हँसते हुए, रुदरसींग अन्दर की ओर बढ़ा ।

रुदरसींग के मजाक से जमनसींग तो भौंचक रह गया, पर बचुली, जमनसींग की धरवाली, बैठने के लिए चौक देते हुए बोली—‘ठौर की फिकर तो नहीं थी, देवर ! गोठ में जहाँ दो खँखा-भलुआ बन्द पड़े रहते हैं, एक किल-गल्यों’ का बन्दोबस्त तुम्हारे लिए भी हो ही जाता, पर बवारी उदुली का विचार करना पड़ता है, कि उसके घाघरे कौन धोएगा ?” और जोर से खिलखिलाती, जमनसींग के हाथ से दूध की बाल्टी लेकर, भीतर के कमरे की ओर बढ़ गई—“बैठो हो, देवर ! मैं दूध गरम करके चहा बनाके लाती हूँ ।”

बचुली के चहा बनाने तक, जमनसींग ने तमाखू की निलम तैयार कर ली और, हुक्के के कौयलों को फूँकता-फूँकता, चिलम के पसीटे में भरे पानी की जाँच के लिए एकाध फूँक खींचता, रुदरसींग के पास आकर बैठ गया ।

रुदरसींग को थोकदार ने समझा दिया था, कि जमनसींग अपने पिता आनसींग और भाई नाथूसींग—दोनों से खार खाके अलग वैठा हुआ है । उसको अपनी ओर कर लेना कुछ मुश्किल नहीं है ।

और थोकदार ने यह भी कह दिया था—“घेटे रुदर, बन की लकड़ी काटने के रमुट (कुल्हाड़ी) में बन की ही लकड़ी का बीन (बैट) डालना पड़ता है ।”

रुदरसींग की ओर चिलम की नली फिराते हुए, जमनसींग ने पूछा—“कैसी पंचैत बैठने वाली है, रुदर ?”

‘और कैसी बैठेगी, जमनदा !’ रुदरसींग धुँए को नकछेदों से धीरे-धीरे बाहर छोड़ते हुए, बोला—“यह तो कुछ ऐसी कथा हो गई है, कि बाँए हाथ की गलती और बाँए हाथ का इन्साफ । ... मगर, रामेण-महाभारत की कुछ बातें

की तुमने भी जानकारी कर ही रखी होगी, कि इन्साफ का जहाँ पर सवाल आता है, जब धिरिष्टदुमन गुरुदेव दुरणाचारी की हत्या करता है, तब अर्जुन—धिरिष्टदुमन अर्जुन का सगा साला था—उसे गांडीव धनुष से तीर ठोकने को दौड़ता है ।... और, जमनदा, छोटे भाई की घरवाली की हत्या गुरु और गुरु की हत्या से भी खतरनाक बताई गई है । रमैण में भगवान रामचंद्र ने कहा है सबसे, कि 'मातु-मृता और भगिनी-सुतनारी'... पत्न्यु के पंतज्यू कथावाचक ने इस दोहे का अर्थ समझा दिया था, इस समय ठीक से याद नहीं आ रहा है ।..."

"लियो, देवर, चहा पी लो ।" एक हाथ से मिसरी का कुंजा और एक हाथ से चहा का गिलास आगे बढ़ाते हुए बचुली बोली—“उदुली ब्वारी ने तो आज तुमको बन जाने वाले बोकियों से भी पहले ही निकाल दिया है अपने गोठ से, चहा कहाँ पी होगी ?... और हाँ, देवर, आज तुम्हारी सूरत आरसी के सामने रखने के लैंक (लायक) हो रही है । ऐसे गिरते-पड़ते कहीं आते-जाते, तमाखू की नली को दाँतों से कटकटाकर, परलोक-जैसे होकर बात करते मैंने तुमको आज ही देखा है ।..."

रुदरसींग के हाथ में मिसरी का कुंजा थमा ही रह गया—सच ही तो । बचुली की बातों से, सहसा ही, रुदरसींग की आँखें अन्दर को गईं, कि तेरे अन्दर क्या है रुदरसींग, जो तू इतना बोलाया-बोखलाया, नाथू होलदार और रमौती की पंचैत बिठाने के लिए, नारद-मुनी-सा फिर रहा है ?...

रुदरसींग ने अन्दर देखा, कि वह गुरु से ही रमौती पर आँख रखता चल रहा था, कि काश ऐसी चाल-ढाल मेरी उदुली की होती, ऐसी दोपहर में चमकनेवाली काँच-सी जवानी मेरी उदुली में होती ?... मगर, आनसींग और नाथू होलदार का डर था और रमौती उसके लिए पेड़ की चोटी में लगे फल-सी हो गई थी, जिसे बन के बानर भले ही खा जायें, पर घर बालों के हाथ आना मुश्किल ।

रुदरसींग की घरवाली उदुली भी तरुणी थी, सुन्दर थी । पर रुदरसींग के लिए कुछ ऐसी बात हो गई थी, कि अपने बगीचे के पेड़ के फलों में मिठास कहाँ ? अपनी इसी मान्यता के चक्कर में पड़कर, उसने अपने से उम्र में बड़ी

जिबुली की माँ का हाथ पकड़ा था, मगर जब जग्यूड़ के जनार्दन पंडे की दवाइयों की जरूरत पड़ने लगी, तो 'इतना खाया, बहुत हुआ, आगे पेट का भी कुछ खयाल रखना है,' वाली मिसाल को मानना पड़ा ।<sup>१</sup>

और यह भी सत्य है, कि बल्सी में लगी मछली से पानी के ताल में घूमती मछली हमेशा ही बड़ी दिखाई देती है । हाथ आए फल को खाने की अपेक्षा, दूर लगे फल को पत्थर मारकर भाड़ने में अधिक आनन्द आता है ।<sup>२</sup> और फिर ऐसा होता है, कि खुद तो फल भाड़ने की कल्पनाओं में छाती के अन्दर गोल-गोल पत्थर जमा करते-करते थक जाए और हाथ सिर्फ इसलिए रोके-थामे कोई, कि पराए पेड़ का सवाल है—पर, आँखों के सामने ही, कोई दूसरा उस फल का स्वाद दिखलाता फिरे, तो अपनी छाती के गोल-गोल पत्थर, अपने को ही दनादन लगते हैं ।<sup>३</sup>

नाथू होलदार से रमौती के गर्भवती होने की बात से, अनायास ही ईर्ष्या उपजी, कि मुझसे रहा होता रमौती को पेट ।<sup>४</sup>

बल्सी से निकल कर भाग गई बलैण मछली<sup>५</sup> को पानी का साँप सभी बताते हैं, देखने वालों को, ताकि बलैण हाथ से निकल जाने का अफसोस कुछ कम हो ।<sup>६</sup>

रुदरसींग ने अनुभव किया, कि फिलहाल वह सिर्फ ईर्ष्या-वश ही सारी दौड़-धूप कर रहा है । पर, ईर्ष्या का आनन्द भी एक नशे की तरह होता है, जिससे और कुछ सूझता नहीं, सिर्फ एक निराकार-संतोष उपलब्ध करने की धुन लगी रहती है ।

अपने को टटोलते-टटोलते, रुदरसींग की अन्दर की आँखों में अपनी गति-विधि की स्वार्थान्विता के प्रति उपजी आत्म-ग्लानि से, एक घुँघलका-सा सिमट आया, तो रुदरसींग ने बाहर की आँखों को अचकचा कर उधाड़ दिया और मिसरी के कुंजे की कटक लगाकर, चहा पीने लगा ।

जमनसींग भी चहा पीने लगा था । बचुली भी अपने लिए चहा लोटे में भरके, वहीं बैठ गई । बच्चे अभी सोए हुए थे ।

१. एक साँप से मिलती-जुलती मछली ।

रुदरसींग को कुछ अटपटी-सी लग रही थी अपनी स्थिति, कि कुछ भी हो, आखिर सगा भाई तो है ही ? पर, बचुली से उसको आशा बैंधी हुई थी, कि नाथू हीलदार और रमौती के विरुद्ध कुछ भी करने में उसकी 'ना' नहीं हो सकती । और—जहाँ तक जमनसींग का सवाल था, सारा गाँव ही यही कहता था, कि 'जमनसींग बर्म' भगीवान की बात ठुकरा सकता है, पर बचुलीकी नहीं ।....' बल्कि गाँव के कुछ लोग अपनी घरवाली को डाँटते हुए बहुधा कहा करते थे, कि 'मुझे जमनसींग समझ रखा है क्या ?'

जिस दिन आनसींग के परिवार में दरार पड़ रही थी, सिर्फ बचुली की सास से न पटने के कारण, तो आनसींग ने जमनसींग से पूछा था—“क्यों रे जमनिया, तू सचमुच न्यारा होना चाहता है ?”—तो जमनसींग ने साफ-साफ कह दिया था—“बौजू, वैसे तो आप मेरे पितर हैं । आप की बात से आगे बढ़ने की कोशिश करूँ, ऐसा कमीना कपूत नहीं हूँ ।.... पर, जहाँ तक मेरे अलग होने का सवाल है, इस मामले में मैं आपसे माफी चाहता हूँ । भूपाल की इजा (माँ) आपकी ब्वारी ने जो-कुछ करना है, मेरे लिए तो वही होना है । उममें आगे बढ़के बोलना, मेरे लिए, अपनी जिन्दगी को खराब करना है । और उसका कहना है, आप एक हाँडी में डबल खीर पकाने लगे हैं । यानी, कि अपने दूसरे बेटों-ब्वारियों की टक्कर में, हम दोनों से फेर करने लगे हैं ।”

यह तो खैर बड़ी समस्या थी । छोटी-छोटी बातों में भी जमनसींग को घरवाली की राय लेने की आदत पड़ गई थी, कि हँवे, मेरी मुरयाल (पायजामा) के लिए कौन-सा कपड़ा ठीक रहेगा ? नौल से पानी में भर लाऊँ, या तू नौल तक जरा घूम-फिर आयेगी ? हरकसींग राठ बल्द पलटे के लिए माँग रहे हैं, अब तेरी जो राय होती है ? मन हो रहा था, एक फेरा जरा अलमोड़ा का लगा लेता, तून-तेल-तमाखू भी सस्ते भाव से ले आता, जरा शहर-फिराई हो जाती—देख, नाथू सैकड़ों देश-परदेश घूम-फिर के आ गया है, मेरे लिए अलमोड़ा ही इंगलेंड हो गया है—क्या कहती है फिर ?....

और वस्तुतः, बचुली जो कुछ कहती, जमनसींग वही करता । इस प्रकार अपनी घरवाली की प्रत्येक बात मान लेने में एक अव्यक्त आनन्द-सा मिलता

था और धीरे-धीरे उसकी प्रकृति ही कुछ-ऐसी हो गई, कि बिना बचुली से पूछे किसी खाने-पीने की चीज को हाथ लगाने में भी उसे झिझक होने लगी और टोकरी में से रोटियाँ भी बचुली से पूछ-पूछकर लेने लगा ।

गाँववालों को तिनकों का तोरण बनाते क्या देर लगती है ? सारे गाँव-इलाके में तरह-तरह की बातें चौमासे के पानी की तरह अपने-आप फूटने लगीं, कि अरे, आनसींग महर का बेटा जमनसींग तो तिरजाट<sup>१</sup> हो गया है ।... जमनसींग खाना पकाता है, बचुली ठाट से घुपड़क-सुपड़क ठोके लगाती है... जमनसींग चहा बनाता है, बचुली मिसरी के कुंजे कटकाती है... जमनसींग छाछ बिलोता है, बचुली नौणी चाटती है... और जमनसींग चिलम भरता है, बचुली लघार लेकर (लेटी-लेटी) गुडुर-गुडुर धुआँ नली से बाहर छटकाती है... और जमनसींग बिस्तर लगाता है, बचुली घुर-घुर घौराट करती सोती है ।...

इसलिए, रुदरसींग का ध्यान, हाथ में थमे चहा के गिलास और मिसरी के कुंजे के बाद, बचुली पर ही अधिक था—“भौजी, थोकदारजू ने कहा है, कि यह गों-की-बहू-बेटियों की—तुम्हारी-हमारी सबकी औरत जातो की—इज्जत-आबरू का सवाल है । और, उन्होंने पंचैत में एक तरफ औरतों के बैठने के लिए भी अपनी बड़ी वाली दरी बिछवा दी है, कि बचुली ब्वारी को जरूर-से-जरूर आने को बोलना, क्योंकि जमनिया बेटा तो सीधा है बेचारा । वह नीति-रीति की बातों को कम समझता है । पर, बचुली ब्वारी है तो औरत-जात, पर दिमाग बड़ा आलीशान पाया है । और वही बेटा थी, जो जमनसींग को आनसींग के फजितवा<sup>२</sup> घर से सही-सलामत निकाल ले गई और आज के दिन ऐश कर रही है और सारे गों में अपनी इज्जत बनाके बैठी हुई है ।...”

इतना कहकर, रुदरसींग—बचुली पर अपने वचनों की प्रतिक्रिया देखने के लिए—जरा ठहर गया ।

बचुली ने पूछा—“रुदरसींग, हो, आज तुमने अत्तर (चरस) तो नहीं पी है ?...”

१. पत्नी-दास ।

२. ‘फजोइत’ से बना अपभ्रंश शब्द ।

‘एक बात सोर, एक असकोट’<sup>१</sup> की कहते हो और मेरे लिए, ‘स्याल बहुत बाँसे,<sup>२</sup> कानों में आवाज बहुत पड़ी, मगर शगुन-अशगुन समझ में नहीं आया।’<sup>३</sup> हो गई है। ‘पहले यह तो बताओ, कि पंचेत बिठानी किस मामले में है? क्यों बिठानी है, और थोकदारजू ने उस पंचेत से अपने लिए क्या करना है?’

बचुली की इस अप्रत्याशित-बेरुखी से रुदरसींग को बड़ा आश्चर्य हुआ। ऐसा तो हो ही नहीं सकता, कि बचुली को इतने बड़े काण्ड की कुछ खबर ही न हो। परसों शाम से आज सुबह तक नाथू-रमौती की चर्चा मुँह-मुँह का बताशा रही थी। दरअसल, गाँव की क्रमबद्ध और घटना-हीन जिन्दगी में नाथू-रमौती की बात चलने से एक ऐसी मुखरता और चपलता आ गई थी, कि हरेक के हाथ-पाँवों और जवान में स्फूर्ति आ गई थी।

जो श्वाले बन बैठे-बैठे ऊबकर, सूरज की ओर माथे में आड़ा पंजा लगाकर देखते थे, कि दिन कितना रह गया है, कल से उन्हें दिन डूबने का ध्यान ही नहीं रह पा रहा था। रुदरसींग के छोटे भाई बचेसींग ने एक पार्टी बना ली थी छोकरों की और उन सबका सारा समय नाथू-रमौती की चर्चा को, जोड़ों<sup>४</sup> में बाँधने की कोशिश में व्यतीत हो रहा था।

हालाँकि, यह निश्चित-रूप से प्रमाणित नहीं हो गया था, कि रमौती को गर्भ है ही और नाथू हौलदार से ही है—पर, रमौती की चुप्पी से लोगों के ऐसा अनुमान लगाने की गुँजाइश पैदा हो गई थी। कुछेक ऐसे भी थे, जो कहते थे, कि एकाएकी नाथू हौलदार ऐसा पाप नहीं कर सकता। और, ऐसे लोगों को यह जिज्ञासा हो गई थी, कि सत्य सामने आए। मगर, संख्या ऐसे लोगों की अधिक थी, जो घटना के तथा-कथित प्रचारित-स्वरूप की सत्यता के विरुद्ध न कुछ सोचने की आवश्यकता अनुभव करते थे, न सुनने की। बल्कि

१. सोर-असकोट, दो पहाड़ी श्लाके, जो एक दूसरे से काफी दूरी पर हैं। यह एक मुहावरा है।

२. गीदड़ बहुत भूँके।

३. एक कहावत।

४. पहाड़ी लोकगीत-शैली के छंद-विशेष।

उन्हें तो इस कल्पना से ही एक शिथिलता-सी अनुभव हो रही थी, कि नाथू हौलदार निर्दोष सिद्ध हो जाए, शायद !...

रुदरसींग बचुली के विषय में यही धारणा बनाए बैठा था, कि बचुली को सब-कुछ मालूम हो चुका होगा, और अपने ससुर-देवर और बहुओं के प्रति ईर्ष्या और अलगाव के कारण, वह रुदरसींग की बातों को ज़मीन पर से उठाकर सिर पर रख लेगी और नाथू हौलदार की मिट्टी पलीद करने के लिए 'चायत' में सम्मिलित होने वाली औरतों का नेतृत्व करेगी ।

बचुली के परिहाम और प्रश्नों से ऐसा लगा, कि नाथू हौलदार वाली चर्चा के प्रति बचुली विशेष उत्सुक और व्यग्र नहीं है और बचुली के जिस प्रचंड स्वरूप की कल्पना रुदरसींग कर रहा था, कि, काले गाड़े के घाघरे और काली गबरून के सफेद, धारीदार आंगड़े के बीच में बची हुई कमर को सफेद मारकीन की धोती से कसकर बांध के, वह नाथू हौलदार और रमौती के पाप का बखान ऐसे-ऐसे शब्दों में करेगी, कि शायद पंचायत के बैठने से पहले ही, रमौती और नाथू...दोनों घर से लापता मिलें—उसके लक्षण भी नहीं दिखाई दे रहे थे ।...

बचुली के प्रश्नों में, तथ्यों की जानकारी के वावजूद, अनभिज्ञता का भाव-प्रदर्शन अवश्य था, पर रुदरसींग को आश्चर्य इस बात का था, कि बचुली ने उसकी हर बात को यों ही उड़ा दिया था । उसने तो अपनी ओर से कहने में कसर नहीं की थी ।

बचुली रुदरसींग को देख रही थी ।

रुदरसींग का मुँह अपने-आप ही खुल गया—“भोजी, जहाँ तक पंचैत किस सिलसिले में बिठाने का सवाल है, तो तुमसे कुछ ढँकी-छिपी बात है ही नहीं, कि जो नाथू हौलदार के अपनी ब्वारी को भुटका लगाकर, कुल को कलंक लगाने की बात फिर से बतानी पड़े... और, भोजी, जहाँ तक पंचैत थोकदारज्यू के किस मतबल से बिठाने का सवाल है, इस सिलसिले में, मेरा कहना यह है, कि यह पूरे गों-घरों की इज्जत-आवेरू का सवाल है और थोकदारज्यू इस गों के सिर-छत्र हैं । वो कह रहे थे, कि गों-घरों में कोई भी गलत काम करे, पहले नाक-नीची थोकदार-पधान की ही होती है और बाहर के लोग 'फलाने थोकदार के गाँव में, फलाने पधान के गाँव में-ऐसा द्रुप्रा,' कहते

हैं।...तो, भोजी. अब मैं चलूँगा। आप दोनों जरूर-जरूर हाजर होना। जमनदा, तुम जरूर-जरूर आना।...”

जमनसींग बचुली की ओर इशारा कर, बोला--“जैसी तेरी भोजी की राय होगी।”

रुदरसींग फिर बचुली की ओर मुँह करके, बोला—“भोजी तुम लोगों के आने से ज़रा पंचैत की शोभा बढ़ जाएगी। वैसे तुम्हारी भलाई के हक में चार बातें और भी कई अच्छी हो सकती हैं, जैसे कि—थोकदारजू खुद कह रहे थे—अब रमौती का तो मोहनसींग के हिस्से पर कोई हक रहा नहीं, क्योंकि इस कारस्तानी के बाद, तो उसको मोहनसींग के नाम की पित्तान मिलनी भी बन्द हो जाएगी।... और बाँकी रह गया नाथू होलदार, उसको पाप के फल ऐसे चखाने हैं, कि अपने ही घदन पर थूकता-मूतता, पराशित<sup>१</sup> करने के लिए कहीं तीरथ-घामों में फकीर बनके फिरे।...और रह गई अनू ज्याठ बोज्यू की जैजाद<sup>२</sup>, सो उस पर सिर्फ तुम दोनों का भरपूर हक रहेगा।...”

इस बार रुदरसींग ने अपनी ओर से अमोघ-शक्ति छोड़ी थी, कि जाय-दाद के लोभ को तो बचुली कदापि नहीं छोड़ सकती, पर बचुली इतना ही बोली—“देवर हो, अभी तो मुझे पाप-पुण्य की ठीक-ठीक खबर नहीं है। कल नहीं जा पाई थी, क्योंकि बन से ही अवेर लौटी। आने-जाने का मिजाम<sup>३</sup> बँठा रही हूँ। देखूँगी, रमौती ब्वारी से पूछ के, कि असीलत<sup>४</sup>-हकीकत क्या है।...वैसे, जहाँ तक पंचैत में आने का सवाल है। ये सामने ही भूपाल के बोज्यू बँठे तो हैं। जैसा ठीक समझेंगे, करेंगे !...”

रुदरसींग कृत्रिम हँसी हँसकर बोला—“जमनदा कहते हैं, ‘जैसी तेरी भोजी की राय होगी।’ और तुम कहती हो, ‘ये सामने ही भूपाल के बोज्यू

१. प्रायश्चित्त।

२. जायदाद।

३. तरक़ीब।

४. असलियत।

बैठे तो हैं ।'...मेरे लिए तो ऐसी हालत हो गई है, कि 'दौलतसिंह की दौड़-दौड़ और ठाकुरसींग की ठहर-ठहर में, बचेसींग बीच में ही रह गया ।'... सच कहूँ, बुरा न मानने की कोशिश करना । भौजी हो ! जमनदा को तो तुमने गोठ के बल्दों से भी ज्यादा वश में कर रखा है ।...अच्छा, भौजी, यह तो सिर्फ एक देवर की तरफ से कुछ हँसी-खुशी की बातचीत हुई । जाते-जाते, दुबारा यही बिनती है, कि दोनों आना पंचैत में ।...अच्छा, हो जमनदा, राम-राम !...”

रुदरसींग सीढ़ियों से नीचे उतर गया, तो क्रोध से होठों को, नमक खाती बकरी की तरह हिलाकर, आपस में मिलाते हुए, बचुली बोली—“छी हो, तुमने तो मुझे सारे गों में बदनाम करा दिया है । तुम सचमुच ही तिरजाट हो गए हो । मरद के जैसे लक्षणा ही तुममें नहीं हैं । हगने-मूतने के लिए भी—बिना मुझसे राय लिए, तुमको चैन नहीं पड़ता है । जो भी बात हुई, बम, जैसी तेरी मरजी ।...हे भगवान्, मैं अगर किसी दूसरे के घरबार भी जाने लगूँगी, तो तुम, ‘जैसी तेरी मरजी हो’ ही कहोगे ?”

जमनसींग बचुली के इस प्रश्न से अचकचा-सा गया—“कभी कही है मैंने तुझसे ऐसी बात ? जो तुझे अपने घरबार ले जाने की बात करेगा, उसे जमराजा के घरबार भेज दूँगा । जमनसींग को क्या समझ रखा है ?”

जमनसींग के मुँह से जीवन में पहली बार ऐसी पौरुषेय-बात सुनकर, बचुली को बड़ा सुख मिला, कि आखिर मर्द की जात है, औरत की इज्जत के लिए उबाल खा ही गया ।

फिर भी—बोली—“बस, बस, बहुत शेखी मत मारो, हो । इस समय बिरालू<sup>१</sup> के जैसे बाल खड़े कर रहे हो, उस समय चुतरीलू<sup>२</sup> की तरह पूँछ उठाके भागोगे । आज तक कभी मर्द की तरह कुछ माँगा है मुझसे, लिया है मुझसे ?...तुमको तो शरम नहीं है, पर लोग क्या कहते हैं ?...कहते हैं, जमनसींग बच्चे भी अपनी घरवाली से इजाजत लेके बनाता है ।...धक्कार

१. एक मुहावरा ।

२. बिल्ली ।

३. एक वन्य पशु, जो किसी मनुष्य को देखते ही दम उठा के भागता है ।

है तुमको भी । मैं तो इसी लिहाज से हमेशा चुप रही, कि खसम के मुँह लगना औरत के लिए ठीक नहीं । मगर, सच्ची पूछो तो, तुमसे जवाँमर्दी का सुख मैंने कभी नहीं देखा । अरे मर्द तो वह भला, कि औरत के भेलों<sup>१</sup> में हंटर मार के अपनी खिदमत कराए ।...ऐसा भी तिरजाटपना क्या, कि हर बात में जोरू का मुख देखना...अब वो रुदरसींग आया था, पंचैत की बात लेकर आया था । अरे, यह कोई मामूली बात है, कि तुम्हारे पूरे महर खानदान की नाक कटने का सवाल है ? मैं तो पराए गोत की हूँ, पर मेरी छाती में भी बिजली-सी चमक रही है । हमारा-सौरज्यू का लाख भगड़ा है । मगर, परायों के सामने तो उनकी-हमारी इज्जत एक ही है ? नाम तो बदनाम सभी महलों का होगा ?...और फिर लोग क्या कहेंगे, कि जमनसींग भी एक ही विभीषण निकला, अगर तुमने नाथूसींग के खिलाफ पंचैत में थोकदार का पक्ष लिया ।...तुम्हारा तो फरज यह है, कि जैसे भी हो खानदान की आबरू बचाने की कोशिश करो !...मरद आदमी को चार हाथ आगे बढ़कर बात करनी चाहिये ।...सुन रहे हो क्या ?”

जमनसींग सिर हिलाते हुए बोला—“आज से, जैसा तू कह रही है, ऐसा ही करूँगा ।”

**क**ल्यो (उपाहार) की रोटियाँ, साना हुआ प्याज एक चाल में बाँधने के बाद, बड़ी हीलदारन ने लोटे में एकदम गरम चहा भरी—और फिर नाथू हीलदार को आवाज लगाई—“हैं हो, जूली की इजा के लिए चहा-रोटी कब लेके जाओगे ? तुम जाओगे, या सौरज्यू जाएँगे ?”

“मैं जाऊँगा, डियर !” नाथू हीलदार एकदम पास आकर, हीले-से बोले—“बोज्यू कहाँ चौखुटियांगर की उतराई-चढ़ाई करते फिरेंगे । मैं जाता हूँ, मेरा सरकारी किट दे दे । उसी में भर के मडुवा भी ले आऊँगा । बोज्यू से कहना, कि घर में ही रह के, चौरी भेंसी को नहला के सरसों के तेल से चुपड़ना और जूली को धुनकुतुरी-धुनकुतुरी पटाँगण में खेल लगाना, ऐसे ही कुछ मामूली घर का काम, याने कि ‘होम-वरक’ कर लेवें ।...और तू चलती हो, तो चल । गोरू-बाछी को आज पनुवा ब्रदर ले गया है ।...”

बाहर आनसींग कुसम्यारू के पेड़ के पास खड़े-खड़े, अपना समय बिताने के लिए काम ढूँढने की फिफ में कुछ सोच रहे थे, कि सामने से तेजसींग ने आवाज लगाई—“अनदा हो, राम-राम !”

“राम-राम, भया !”

“थोकदार के यहाँ से आ रहा हूँ । तुमारे पास भेजा है, कि आनसींग और नाथू हीलदार को पंचेत में आने के लिए कह दे । पंचेत का टैम दश बजे से रख रखा है ।”—तेजसींग पास आते हुए बोले ।

तेजसींग उम्र में आनसींग से एक-दो वर्ष ही छोटे थे और आनसींग के निकटस्थ पड़ोसी थे । आनसींग से उनका बचपन से ही घरापा चला आ रहा

था। बिरादर भी थे। काम-काज और जरूरत की चीजों में बलटा-पलटी भी चलती थी। उनका बेटा पनुवा नाथू होलदार को बहुत मानता था। और जब कभी भी नाथू होलदार शिकार खेलने जाते, पनुवा उनके साथ जरूर जाता। आज आनसींग की गाय-बकरियाँ बन चराने वही ले गया था।

आनसींग ने हाथ में इशारा करके, तेजसींग को अपने पास बुलाया। फिर दोनों चौतरे (चबूतरे) पर बैठ गये।

तेजसींग चिलम की नली को घुमाते हुए, बोले—“अनदा हो, बड़ी बुरी बात हो गई है। सच्ची-भूठी की वह परमपिता परमेश्वर ही जानता है अभी तक, हमारे सामने तो हकीकत बाद में आयेगी। जहाँ तक मेरा सवाल है, नाथू भतीज ऐसा गलत काम नहीं कर सकता। पलटन में रहा हुआ आदमी है, सो जरा जोर से चलता-बोलता है और गों के लोगों की परवा नहीं करता। बार देश घूमा हुआ है, सो अपने हो डिमैक<sup>१</sup> से काम लेता है—गों के लोग इससे तमाखू की गिट्टी की तरह मन-ही-मन में सुलगते रहते हैं।....”

“मैं क्या कहूँ, तेजू ? मैं तो लाव कहता हूँ, कि नाथू बेटे, गों-घर में सबकी सुनने-मानने से ही काम चलता है। पर, वह तो, गों वालों की बात दूर रही, मेरी ही बात नहीं मानता, कि ‘बौज्यू, ऐसे नहीं’।....” —आनसींग चिलम पर से हुक्का उतारते हुए, बोले। हुक्का लेकर, आनसींग अंदर को गए और बड़ी होलदारन को पुकारा—“ठुली ब्वारी वे, जरा तेजसींग आया है। एक घुटुक चहा हो तो दे और जरा चार क्वैल इस हुक्के में डाल दे। क्वैलों<sup>२</sup> का छारा जरूर टटका लेना, नहीं तो तमाखू खँखरैली हो जायेगी।”

बड़ी होलदारन नाथू होलदार के लिए किट ढूँढने दूसरे कमरे में जा रही थी, लौट आई—“हँ हो, जरा तुम ठहरो। सौरज्यू धाध लगा रहे है, उनके हुक्के में क्वैल डाल आऊँ। फिर तुम्हारा किट ढूँढ़ूँगी।....छोटी ने न जाने कहाँ सँभाल रखा है।....”

---

१. दिमाग।

२. कोयले।

हुक्के में कोयले डलवाकर, चहा का गिलास लिए, आनसींग फिर कुसम्यारू के चौतरे पर, तेजसींग के पास आ गए ।

आनसींग को आते देखकर, तेजसींग ने चिलम की नली को ठीक से पनौटे में बिठाने के लिए, नली में लपेटे कपड़े को खोलकर, दुबारा लपेटा । पानी की जाँच करने के लिए, चिलम को तिरछा करके अंदर को फूँक मारी और फिर आनसींग के हाथ से हुक्का लेकर, चिलम पर रख लिया—“चहा के लिए बेकार में क्यों तकलीफ दी बवारी को, अनदा ? मैं तो अकसर ही तुमारे घर की अच्छी-बुरी चीज चखता ही रहता हूँ और आगे भी कोई एतराज नहीं कर सकता । ठुलि बवारी के हाथ में स्वाद भी है ।... मगर, इन गों वालो को जाने क्या हो गया है ? ‘बाघ-बकरी पहचानी नहीं, बन्दूकों में जोर ।’ वाली हो रही है । आदमी वो भले होते हैं, जो कसूर-बेकसूर को अलग-अलग करते हैं, फिर निसाफ करते हैं । हमारे गों में यह हाल है, कि देखना नहीं, सुनना नहीं और ले जवरजंड हाहाकार ।... कल से एक और ही जैसी हवा कूद रही है गाँव में, अनदा !... लोग तुम्हारा-नाथू का हुक्का-पानी बन्द करने की कुमेटी<sup>१</sup> कर रहे हैं ।...”

आनसींग ने मौन, प्रश्न-भरी आँखों से तेजसींग की ओर देखा । तेजसींग ने समवेदना से अटपटा कर, चहा को तमाखू की जैसी फूँक मारी—फुः रू...रू...रू...

आनसींग ने अपने सिर की दोपलिया टोपी उतार कर, सिर के सफेद बालों को हथेली से सहलाते हुए, इधर-उधर देखकर, तेजसींग के चरणों में रखदी—“तेजा, तू मेरी लाज रख ले । तू गों का एक झूला-फूला हुआ और बाल-बच्चेदार आदमी है । मेरे तो कुछ ग्रह-नक्षत्र ही ऐसे चलने लगे हैं, कि पाँव पीछे रखता हूँ, ठोकर पहले लगती है । जिसके सिर पर भी हाथ फेरने की सोचता हूँ वही साँप की तरह फुर्वा-फुर्वा करता, काटने को दौड़ता है । तुझसे मेरी कोई बात छिपी हुई नहीं है । जबसे मोहनिया ने फौज में पाँव रखा था, बिपत्ति के सिवा सुख नहीं देखा । नाथू घर आ गया था, तो छाती

---

१. कमेटी का अपभ्रंश, यहाँ षड्यंत्र के अर्थ में ।

में पत्थर रख लिया था, कि बहुतों को ईश्वर एक ही ओलाद भी तो देता है । पर, मेरे राहु-केतु नहीं रहने देते सुख से मुझे ।...और तेजा, जहाँ तक नानि ब्वारी के कसूर का सवाल है, उससे कोई इन्कार नहीं कर सकता । कल तक मैं उसे बेकसूर समझता था और नाथू को कसूरवार समझता था । तुझे यकीन नहीं आएगा, मैं कल रमुट लेकर, नाथू को काटने को गया था, कि खानदान की नाक तो कट ही गई है, एक कपूत यह भी कटे, ताकि लोगों की हाहाकार तो थमे, उनके कलेजे तो ठंडे हों...मगर, मेरा बेटा नाथू सोने की अँगूठी है ।...मुझे अब कोई विशेष कोप नहीं है । एक कसूरवार रह गई थी, उसे—हालांकि मोहनिया की निशानी थी, कलेजे से लगाकर रखने की चीज थी—मैं काला मुँह करके निकाल देता, पर नाथू के आगे नहीं चल सकता ।...तेजा, जिस बेटे को मैं कपूत समझता था, उसका कलेजा सोने की शीख<sup>१</sup> के समान है ।...

तेजसींग ने देखा आनसींग की आँखों में आँसू उमड़ आए थे । टोपी तेजसींग के हाथों में थमी हुई थी और तेजसींग के हाथ आनसींग के हाथों में । आनसींग की बातों में ऐसी विदग्धता थी, कि बात काटने की इच्छा ही नहीं होती थी तेजसींग की । समय देखा हुआ था । आनसींग के मन की निर्मलता, वत्सलता और प्रचंडता से बहुत पुराना परिचय था, इसलिए संवेद्यता के भार से वाणी अटपटा रही थी ।

आनसींग कहते रहे—“एक साल जागेश्वर के मेले में गया था, भगवान् शिव-पारवती के आकाशधारी मंदिर में । तू भी कई बार गया है, तेजा, वहाँ तो ?...तो, शिव जी के बाल-जागेश्वर वाले तमपखिया<sup>२</sup> मन्दिर में जो शीख बजती है, उसकी धूँ-धूँ-धूँ करती गर्मकदार<sup>३</sup> अवाज कानों के अन्दर मोनों<sup>४</sup> की बरात की तरह घूमती रहती है और सुननेवाला सुष-बुध भूल

१. शीख ।

२. तौबे की छत वाला । जागेश्वर, जो अलमोड़ा से १६-१७ मील की दूरी पर है, का शिव-मन्दिर एक ऐतिहासिक मंदिर है कुमायूँ-प्रदेश का ।

३. गुँजवाली ।

४. भौरों ।

जाता है। तेजा, मेरा बेटा नाथू जब-जब बोलता है, उसकी जोरदार अवाज ठीक जागेश्वर के शिव-मन्दिर के उसी शंख की तरह, जाने कब तक मेरे कानों में धूँ-धूँ-धूँ करती रहती है और मैं अपना सारा रोष-तोष विसर जाता हूँ, कि नाथू बेटा जो कहता है, ठीक कहता है, नाथू बेटा जो करता है, ठीक करता है।...

आनसींग ने एक तृप्ति के साथ, अपनी बूढ़ी पलकों को मूँद लिया और जागेश्वर के शिव-मन्दिर के शंख की पवित्र धूँ धूँ-धूँ, कानों की जगह, आँखों में गूँजने लगी—टप्-टप्-टप्...

तेजसींग ने, 'अरे, यार, अनदा ! यह क्या बचपना करता है ?' कहते हुए, अपने आँसुओं को पोछा और फिर, हुक्के के कोयलों को फूँक मारने के बहाने, थोड़ी देर तक—आनसींग से अपना मुँह ऊँचा रखके, चिलम की नली आनसींग की ओर बढ़ा दी—“ले, तमाखू पी। कहाँ से मंगाता है तू तमाखू ? हीरालाल-मोतीलाल के यहाँ से, या बदलू मियाँ के यहाँ से ?”

“हमारा तो हर सौदा नाथू ही ले के आता है, अलमोड़ा की बाजार से। महीने-महीने में एक फेरा लगा आता है। यह तमाखू वह कह रहा था, एक नई दुकान खुली है, रामजे स्कूल के पास, वही से एक पिंडी लाया था।” “कहने के बाद, आनसींग—एक अनोखी भाव-शून्यता के साथ आकाश की ओर, अधखुली आँखों से देखते हुए—तमाखू पीने लग गए।

तेजसींग बोला—“यार, अनदा ! मेरा और छोटा भाई करमसींग का जहाँ तक सवाल है, हम सब तुम्हारी भलाई में ही रहेंगे। और अपना तो, असूल भी यही है, कि अपनी ही छाया को भूत मान के पत्थर नहीं मारना। कच्चार और गंगाजल की पहचान मुझको भी है। मैं तो जरा इसी से हिचका हुआ था, कि नाथू भतीजे का कसूर हुआ, तो जरूर खोफ खाने और कलक लगने की चीज है।...जहाँ तक रमीती बवारी के कसूर का सवाल आता है, उसका अपराध जरूर है। मगर, चारों तरफ देख के कोई भी यही कहेगा, कि खुली, बिना बाढ़ की खेती को गाय से और गाय को बाध से खतरा रहता ही है। कोई ऐसी तीन तिरलोक से निराली बात नहीं हुई है। मगर, उसको दंड भी दिया जा सकता है। असली कसूरवार को उसी से पूछा भी जा सकता है और

यह जरूरी काम दोनों ठुल ब्वारी कर सकती हैं। खैर, इस समय जो सवाल है, वह सवाल यही है, फिलहाल, कि गुमानसींग थोकदार को साबुली के केस का बदला लेने का मौका हासिल है और रुपए में चौद आने लोग उसी की तरफ हैं। गों में, इतना तो तू भी समझ ही सकता है, चार अनदा, कि चार लोगों से मेल-मिलाव रखने से ही काम चलता है। इसलिए, अपनी ओर से शिकीत की गुंजाँ नही रहनी देनी चाहिए। अब ऐसा कर, कि तू और नाथू पंचत में आ जाओ। चार लोग जो कहते हैं उसे सुनो। अपनी साफ-साफ बात सामने रखदो। जहाँ नाथू बेटे के पाक-साफ होने की बात सिद्ध हुई, वहीं गुमानसींग के पलड़े कमजोर पड़ जाएँगे।”

“जैसी तेरी राय होती है।” आनसींग बोले।

“मेरी राय तो यही होती है। क्योंकि, सवाल छोटे-बड़े कसूर का नहीं, गवाहों और इन्साफों की बातों का पैदा होना है। गुमानसींग की साबुली के बखत से जो खार खाये बैठे हैं, इस समय बदला निकालना चाहते हैं, कि कैसे भी नाथू होलदार को ऊडलगों से बार-पत्थर-बाहर कर दो !”—तेजसींग बोले—“और उनके हाथ यह हथियार आ गया है, तो उसको दो-घार बना रहे हैं, कि हुक्का-पानी बन्द कर देने से, बात-ब्यौहार खतम कर देने से, आनसींग और नाथू दोनो परेशान हाल मजबूरी में आक गों छोड़ देंगे।”

“जहाँ तक गो छोड़ देने का सवाल आता है, तेजूका”—पीछे खड़े-खड़े सारी बातें सुन रहे, नाथू होलदार बोले—“वो तो जीते-जी छूट नहीं सकता। मरने पर भी, ‘डिडबौडी’ यानि कि लाश मेरी यहीं नजदीक के मसान लखुड्यार में ही जाएगी, सो वैसे भी गो के अन्दर ही रहूँगा।”

इतना कहकर, नाथू होलदार किट कंधे पर डाले आगे बढ़ गए। बड़ी होलदारन, सिर पर मडुवा के लिए डाला लिए, और हाथ में चहा का लोटा पकड़े पीछे-पीछे आ रही थी।

आनसींग ने जोर से पुकारा—“नाथू !”

“क्या है, बौज्यू ?” नाथू होलदार ‘अटेन्शन’ में खड़े हो गए।

“तेरे तेजूका कह रहे हैं, कि हम दोनों को पंचत में बुलाया है, थोकदार ने। गों के सभी लोग एक-ठौर हो रहे हैं।”

“बूढ़ी भैंसी को मरते देखकर, सैंकड़ों चील-गिद्ध एक जगह पर इकट्ठे हा जाते हैं, बौज्यू ! मगर, उसी को पंचैत नहीं कहते हैं ।” —नाथू हौलदार पलटकर, बोले—“जो पंचैत किसी का घर उजाड़ने की कुमेटी के लिए बिठाई जाती है, ऐसी पंचैत के सिर पर नाथू हौलदार मारता है अपना चोटलिया-बूँट । ... बौज्यू, आप क्यों दिल को हारमान बनाते हैं ? ‘जाको राखे साँइयाँ, मार सके क्या कोय ? याने गौड कीपिंग हू, दैट हू कैन हिट ?’ कह रखा है । बंठने दो चील-कौवों की पंचैत, भैंस नहीं मरेगी, शिकार नहीं मिलेगा चबाने को, तो खुद ही अपना-अपना-जैसा ठून<sup>१</sup> लेके उड़ जायेंगे ।”

“नाथू भतीज,” तेजसींग बोले—“हर टैम में गरम-मिजाजी से काम नहीं लेना चाहिए । ‘साँच को आँच नहीं, सोना बने काँच नहीं ।’ कह रखा है । मगर, अपना फरज पूरा करना हम हर इन्सानों का काम है । पंचैत में शामिल होने से कोई नुकसान नहीं है, बेटे ।”

“तुम इस डुमिया<sup>२</sup>-पंचैत की बात कह रहे हो, तेजूका ? और उधर हमारे खेतों में बानरों की पंचैत बैठ रही होगी । खेत में अन्न का नुकसान और बेकार की मगजपच्चीसी । ... तेजूका, नाथू हौलदार किसी की पंचैत-वंचैत में पैर टिकाने वाला शरूश नहीं है । गों वालों से बोलो, कि पंचैत बिठाने की क्या जरूरत है ? जहाँ तक हुक्के का सवाल है, नाथू हौलदार हमेशा ज्यादातर केंची-मार सिगरेट पीता है, जिसे चिलम में चढ़ाने की जरूरत नहीं और बौज्यू पीते हैं, तो घर में एक पिंडी खमीरे, एक पिंडी कड़ुवे की हमेशा ‘बैलेन्स’ पड़ी रहती है । ... और पानी का जहाँ तक सवाल बन्द करने का है, जिस माई के लाल में नाथू हौलदार को नौल के पानी को लगने-भरने से रोकने की ताकत होगी, मैं उसी का गुलाम हो जाऊँगा । मेरी दुनाली ने भी—अखिर किस दिन काम आना है ?” —कहकर, नाथू हौलदार ने अपनी दाँई कलाई से बँधी ‘बेस्टेन्ड वाँच’ को देखा—“बबा रे, एट बजके फोरटी-थिरी मिनट हो गए हैं ।” और आगे बढ़ गए ।

तेजसींग ने आश्चर्य-पूर्वक आनसींग की ओर देखा । आनसींग दौड़ते हुए

१. चोंच ।

२. डोमों की ।

नाथू हौलदार के पास पहुँचे । और पीछे पाँव पकड़ लिए—“नाथू, मैं तेरे पाँव पकड़ता हूँ, रे ! क्यों बुढ़ापे में मेरी मिट्टी पलीद करवाता है ।...”

नाथू हौलदार ने पलटकर देखा, किट को कंधे पर से फेंका और आनसींग के हाथों से अपने पाँवों का छुड़ाया । फिर आनसींग के पैरों को छूकर, हाथों को सिर पर फिराया—“बौज्यू, ऐसा अन्धेरे क्यों करते हो ? बोलो, अपने नथुवा को क्या करने को आर्डर देते हो ? पाँव पकड़ते हो, बौज्यू ? अरे, अपने पाँव के नीचे की मिट्टी उठाके जहाँ डाल दोगे, नाथू हौलदार वही अपनी जान देने को तैयार रहेगा ।...”

आनसींग को तेज दौड़ने से थकान हो गई थी और उनकी जोर-जोर से साँस चलने लगी थी । हौले-हौले बोले—“बेटे, पंचैत में हमारा जाना जरूरी है । कचहरी से गैरहाजर रहने पर, बिना कसूर की सजा पक्की होती है । हम ठीक से बात-ब्योहार करेंगे, तो गों के चार भले लोग हमारे साथ जरूर हो जाएंगे । फिर दुश्मनों से टक्कर लेना भी ठीक रहेगा ।...”

“जैसा आपका आर्डर होता है, बौज्यू !” कहकर, नाथू हौलदार ने आनसींग को अपना सहारा दिया । बड़ी हौलदारन से बोले—“हँवे, तिरलो-मदर ! तू जा । जूली-मदर को ‘बिरेक-फास्ट’ दे के आ, मड्डुवे का डाला भी लेते आना । मैं बौज्यू के साथ जाने को मजबूर हूँ ।”

“अच्छा,” कहकर, बड़ी हौलदारन जाने लगी, तो आनसींग बोले—“ठुलिब्वारी, तू जरा जल्दी ही लौट के आ जाना और माजिली<sup>१</sup> ब्वारी को भी अपना डाला पूरा करके आने को कह देना । नानि ब्वारी घर में अकेली बबराएगी । हमने पंचैत में जाना है ।...”

रुदरसींग और अपने हलिया देबराम को सारे गों-घरों के लोगों को पंचत में ज्यादा-से-ज्यादा मात्रा में शामिल होने के लिए पटाने को भेजकर, थोकदार गुमानसींग ने अपनी दोनों थोकदारनों को पटांगण और चीतरा साफ करवाने में लगा दिया था। सरुली थोकदारन को भी घर पर ही रोककर रखने का विचार था उनका—क्योंकि चहा बनाने का जो ऐठम (कौशल) सरुली थोकदारन के हाथ में था, दूसरी थोकदारनों में नहीं—मगर, चूँकि दूसरी दोनों थोकदारने बातें करने के मामले में भी सरुली थोकदारन की जैसी कला से अनभिज्ञ थीं, सो सरुली थोकदारन को चौखुटियागैर भेजना पड़ा था—“कुछ मेरे कुलदेवता गोल्ल भगवान् की मिहरबानी इधर हो रही है। देवताओं की भगिति कभी बेकार नहीं जा सकती। तू ही देख, इधर नाथू पलटनिया लपेट में आया है, तो अपनी बेइज्जती का बदला हासिल करने का मौका इस बार मिला है और जहाँ तक नाथू पलटनिया के हुक्का-पानी की बन्दी या गों से बार-पत्थर-बाहर होने से साबुली चेली की जिन्दगानी का सवाल उठता था, इसमें भी गोल्ल भगवान् की मिहरबानी मेरे ऊपर आज बदस्तूर हो गई है, कि रुदरपुर से समदणी और जवाईं लाला लछमीनरायण की चिट्ठी-पत्री आ गई है।” तू ही सोच, नरैण की इजा, आज तक रुदरपुर से कोई ऐसी चिट्ठी-पत्री नहीं आई—है, कि नहीं? और इधर नाथू पलटनिया की मति में फरक पड़ने से, साबुली चेली का मन भी दो-चित्त हो गया होगा। और, ऐसे में, तू उसको चार बातें जरा ढंग से, तरकीब से, ऊँची-नीची समझाना, कि, ‘चेली जो-कुछ होना था, हो गया। आगे तुझे यह एक और

रास्ता भगवान ने सही रास्ते पर चलने के लिए दिया है ।'—फिर तू उसको जैसे-तैसे पटा के घर ले आना, कि तेरे बौजू तुझसे कुछ नहीं कहेंगे और बड़ी खुशी के साथ मय नाती तिरलोक के खरपुर सही-सलामत—जिसकी असली अमानत है तू—वहीं पहुँचा देंगे ।...जा फिर, यह जरूरी काम तेरे ही हाथ में है ।...

थोकदार की यह मंशा भी थी, कि तिरलोक के प्रश्न को भी पंचत में उठाया जाए, कि चूँकि उसकी पैदाइश लाला लछमीनरायण से हुई है, इस लिए उस पर हक भी लाला लछमीनरायण का ही है, न कि नाथू हीलदार का । इसके अलावा आज साबुली के अपहरण की चर्चा चलाने का भी थोकदार ने निश्चय कर रखा था । क्योंकि, पहले तो बेटी के दूसरे घरबार जाने की बात से लाज लगती थी और अपनी ओर से तो क्या, औरों की ओर से भी बात उठाई जाने पर, उसे टाल देना पडा था, मगर नाथू हीलदार और रमाती के अनैतिक-सम्बन्ध की तुलना में साबुली के दूसरे घर-बार जाने की घटना कम क्षोभजनक थी, सो अब साबुली के अपहरण का सवाल उठाने में हिचकिचाहट कम हो रही थी ।...

थोकदार गुमानसीग प्रतिशोध की भावना से अपनी बूढ़ी नसों में कुछ फडकन-मी अनुभव कर रहे थे । अपने जरा-जर्जर अवयवों में उन्हें चपलता और स्फूर्ति की लहर लोटती लग रही थी और उन्हें ऐसा लग रहा था, कि आज अपनी जवानी के दिनों को याद करने में कोई हर्ज नहीं है—और, रह-रह कर, एक लम्बे अरसे के बाद, उन्हें थोकदारनों के अंगों का ढीलापन अखर रहा था ।...

बढ़िया बासमती का बिस्वार<sup>१</sup> उन्होंने रात से ही भिजवा दिया था । थोकदारन से बोले—“चौतरे पर पंच-सरपच लोगों के बैठने की जगह रहेगी । जरा चार फूल और ऐपण चौतरे में खबसूरती से निकाल दे, वे !” और खुद काँसे की बड़ी थाली में अक्षत-पिठाँ और हजारी के फूल लेकर,

१. शुभ-कार्यों और पर्वों पर घर-आँगन में पीसे हुए चावलों से आलेखन करने, फूल-पत्ते बनाने की प्रथा है । चावल भिगोकर सिल में पीस लिए जाते हैं, उसी को 'बिस्वार' कहते हैं ।

गोल्ल-गंगनाथ देवताओं के मंदिर में घूप-बास उठाने चले गए कि किसी भी शुभ-कार्य से पहले अपने कुल के इष्ट-देवताओं की पूजा पहले होनी चाहिए तभी कार्य सिद्ध-सफल होते हैं ।...

गोल्ल देवता ने पहले भी उनके कई कार्य सफल किए थे। सरुली थोकदारन हरसींग के घरबार जाके भी लौट आई थी, तो थोकदार को यह अंतर्ज्ञान-सा मिला था, कि उन्होंने गोल्ल देवता के दरबार में रात-दिन वंश के निर्वाण हो जाने की पुकार लगाई थी और चूँकि थोकदार की तिरी अँगुली (कनिष्ठा) की जड़ में पुत्र-रेखा ही नहीं थी, सो—गोल्ल देवता की ही दी हुई मति से सरुली थोकदारन हरसींग के घर गई थी ।...अरे, नहीं तो गाँव में और कई हरसींग से भी नौजवान खबसूरत लोग पड़े हुए थे । यदि अपने जोबन के हंकार (अहंकार) और जवानी की चिल्यैली (खुजलाहट) से ही सरुली थोकदारन गलत कदम बढ़ाती, तो किसी और को—हरसींग से चलचलान-खलखलान (चंचल, चुस्त और सुदृढ़ जवान) को नहीं पकड़ती ?...

पर, हरसींग में कुछ ऐसे तत्व थे, कि अपने विवाहित-जीवन के ग्यारह वर्षों में उसके आठ बेटे हुए थे, जिनमें से सिर्फ दो सीतलामाई कोप से, ददुर (चेचक) निकलने से मर गए थे ।...तो, वह देवताओं की ही कृपा थी, कि सरुली थोकदारन वंश चलाने के लिए हरसींग के ही पास गई ।...

थोकदार ने सोचा है, अगर यह सब गोल्ल देवता की ही प्रेरणा से न हुआ होता, तो यह चमत्कार कैसे होता, कि जैसे ही सरुली थोकदारन भारी हुई, हरसींग—वह हरसींग, जिसकी बोटचढ़ाई (पेड़ों पर चढ़ने की कुशलता) से बन के लंगूर-बानर भी मात खाते थे—पेड़ से गिरके मर जाता ?... थोकदार ने यह भी उस दिन—जब वो लोगों के साथ हरसींग की लाश का पंचतनामा करने गए थे, थोकदार के नाते—खयाल किया था, कि जिस पेड़ पर से हरसींग गिरा था, वहाँ से गोल्ल देवता का मन्दिर भी साफ (स्पष्ट) दिखाई पड़ता था ।...

तो, आज जब एक और बड़ी समस्या थोकदार के सामने उपस्थित हुई है, तो इससे पार पाने के लिए मनौती मनाते समय, थोकदार को देवताओं की पिछली कृपाएँ भी याद आ रही थीं और वो बार-बार हे गोल्ल देवता, हे

गंगनाथ देवता !' स्मरण करते, सम्पूर्ण-भक्ति के साथ मंदिरों की ओर जा रहे थे ।...

पहले वह दक्षिण दिशा में स्थापित गोल्ल देवता के मंदिर में गए ।

मंदिर के बाहर पहुँचने पर, लोटे से जल अंजुलि में लेकर, पैरों को 'हरियोम-हरियोम' कहते हुए धोया और फिर चारों दिशाओं में थाली से अक्षत फेंके । इसके बाद, 'परमेश्वर हो, लाज रख लेना । बिगड़ी को बना देना । नौ<sup>१</sup> टूटी आज बीच भँवर में पड़ी हो, मेरे गोल्ल देवता परमेश्वर, बाल चोर के इन्साफ करने वाला तुझको कहा गया है, उसे दया-माया से एकदम पार लगा देना ।' कहते हुए, मंदिर के अन्दर प्रवेश कर, भीतर के उप-मंदिर के द्वार पर लगा पत्थर हटाया—गोल्ल देवता की मूर्ति दिखाई दी—जो हो गोल्ल नराण, परम परमेश्वर परमपिता मेरे ।

मूर्ति को हाथ में लेकर, थोकदार ने गंगाजल से उसे स्नान कराया, फिर घर से थाली के किनारे से लगाया हुआ घिसा हुआ धौखंड (चंदा) मूर्ति के वक्ष-ललाट-कंठ और भुजाओं में लगाया । तब मूर्ति को यथा-स्नान रखकर, गले में हजारों के फूलों की माला डाली । माथे और चरणों पर फुटकर फूल चढ़ाए । अक्षत-पिठा से अभिषेक किया । पंचमुखी-दीपक जलाया । मिट्टी की छोटी-सी धूनी थी, उसमें पहले से वहीं बुझे पड़े कोयलों को डालकर, धूनी को चेतन कर, दशांग-गोकुल धूप डाली और उसकी गंध-लपटों को गोल्ल देवता की ओर हाथ से हवा देकर लगाया । समीप पड़ा शंख धोकर, दाहिने हाथ में लिया और घण्टी बाँए हाथ में लेकर, धूँ-धूँ-धूँ-धूँ... पूँ धिनटिन्-घिनटिनन्-घिनटिनिना-घिनटिनिकक्... शंख-घण्टी को गुंजायमान कर दिया । शंख को एक साँस में दम फूल जाने तक बजाया और घण्टी को हाथ थक जाने तक । फिर, 'परमेश्वर हो, भूल-चूक की माफी देना । नर-बानर की फूल-पाती-धूप-बाती की यह रोवा मंजूर कर लेना ।' कहते हुए, गोल्ल देवता की थाली में से बताशे का नैवेद्य चढ़ाया और फिर जूठा नैवेद्य, एक पुष्प के साथ, अपनी दोपलिया-टोपी पर ठहराते हुए, दोनों हाथ जोड़कर, दोनों आँखें मूँद कर, प्रार्थना करने लगे—“गोल्ल

देवता हो, मेरे इष्ट देवता हो ! आज इस मंदिर में आपके दिया की जोत जला जाने, धूप-बास उठा जाने का जो कारण नाथू पलटनिया के द्वारा मेरे ऊपर किए जुलम का बदला लेना है, आप तो अंतरयामी परभू मेरे घट-घट बासी हो, सब मालूम रत्ती-रत्ती की खबर रखते हो । बाँकी मैं क्या कहूँ, आप खुद तीन तिरलोक में राई-राई की खबर रखने वाले हो । मैं तो समझता हूँ, यह जबरदस्त मौका आपने ही अपने भगत की लाज रखने के लिए दिया है, क्योंकि भगत की बिपत्ति भगवान् की ही बिपत्ति कही गई है । है, कि नहीं ? खैर, मुझ नर-बानर की टेक रख लेना । दाहिने हो जाना हो, परमेश्वर ! कार्य सिद्ध होने पर, इसी आते ऐतवार<sup>१</sup> को घर पर अवतार कराके, बोकिया-नारियल-परशाद जो कुछ भी पूजा का सामान लगेगा, आपकी भगती सम्पूरण करूँगा । लेकिन, आपके चरणों का जनमदास हूँ, सो भूल-चूक किससे नहीं होती है ? है, कि नहीं ? जै हो, मेरे परम परमेश्वर गोल्ल देवता, इष्ट देवता ।”

प्रार्थना करने के बाद, थोकदार ने लोटे में से एक-हथिया अंजलि में संकल्प-जल लिया और, नाथू हौलदार की गोली से धुरड़ के घोखे में मर गए, भूरिया बोकिए के जोलिया (जुड़वाँ) बोकिए चनुवा का नाम लेकर— कि इसी बोकिए (बकरे) को, आते इतवार को, इसी मंदिर में चढ़ाऊँगा—थोकदार ने, पाँच बार मूर्ति के सिर के चारों ओर घुमाकर, पानी गोल्ल देवता के चरणों पर छोड़ दिया । फिर चरणामृत लेने के लिए हाथ बढ़ाया, तो मूर्ति हाथ से टकराकर, गिर गई । थोकदार ने तेजी से मूर्ति को उठाया और सीधे रखकर, ‘हरियोम-हरियोम’ कहते हुए, चरणामृत लिया।...

और फिर वहाँ से घर में सबके लिए अशीक<sup>२</sup> लेकर, गंगनाथ के मंदिर की ओर चल पड़े ।

०

०

०

थोकदार के लौटते तक आँगन-चबूतरे की सफाई हो चुकी थी । उन्होंने चौतरे पर एक बड़ा भोटिया गलीचा बिछाया और चबूतरे के नीचे के पटाँगण

१. इतवार ।

२. सिर पर रखने के लिए, देवता के आशीष-पूर्य-फूल ।

में, जहाँ तक पहुँच सकती थी, अपनी लम्बी वाली दरी बिछवा दी। दरी-गलीचा बिछाने के काम में मदद पहुँचाने के लिए, उनका भतीजा खड़कसींग भी आ गया था।

बोला—“घर में और कुछ काम-काज में हाथ सारने की जरूरत हो, तो मैं बलभदर की इजा को भी भिजवा देता हूँ।”

धीरे-धीरे वो सभी लोग आ गए, जिनको थोकदार का पक्ष लेना था। उन सभी के सामने प्रश्न मुख्य यह नहीं था, कि रमौती और नाथू की जो अफवा फैली है, उसके औचित्य-अनौचित्य को शोधना है, या उसके लिए उपयुक्त प्रतिरोधात्मक-प्रक्रिया अपनानी है—बल्कि, सभी के हृदय में एक ही निश्चित धारणा थी, कि नाथू होलदार से थोकदारज्यू की बेटी उड़ाने का बदला लेना है। गाँव के तरुण लोगों को इसमें विशेष प्रकार का आनन्द आ रहा था, जिसमें उनके इस मानसिक-विक्षोभ और अरूपायित-अव्यक्त वासना को तुष्टि मिल रही थी, कि दो विशेष रूपवती और तरुणी औरतों के शरीर-सौन्दर्य-भोगी नाथू होलदार को दण्डित करना है।

नाथू होलदार से झुटका लगाने की बात से, रमौती के प्रति बहुतों की वासना उभड़ आई थी और चूँकि उनकी इस संयोग-वश उपजी वासना और आसक्ति की तृप्ति का कोई सुलभ-साधन नहीं था, इसलिए उनकी अतृप्ति प्रतिशोधात्मक-रुख अपना कर, अपना आक्रोश मुखर करना चाहती थी। ऐसे लोगों में रुदरसींग, बचेसींग दो-भैया और खड़कसींग प्रमुख थे। खड़कसींग को तो यह याद आ रहा था, कि जब पहले वह, नाथू होलदार की जोड़ी में, थोकदार गुमानसींग के यहाँ ‘कोटपीस’ खेला करता था, तो कैसे नाथू होलदार उसकी थूक लगा-लगाकर ताश बाँटने की आदत का मजाक उड़ाया करते थे। उसे याद आ रही थी, नाथू होलदार की चुटकी—“यार, खड़कुवा, तू जब ‘कोटपीस’ का खेल खेलने आता है, घर से किसी बरतन में ही सेर-दो-सेर थूक जमा करके ले आया कर।...”

कुछ ऐसे लोग भी थे, जिन्हें इस घटना के अनौचित्य से बहुत क्षोभ हुआ था और नाथू होलदार के प्रति रोष भी उपजा था, कि थोकदार की बेटी को तो भगा के ले ही गया था...वह, खैर, अपनी इच्छा से गई थी और पराए

घर की थी—मगर, अब अपनी छोटी बहू को भी पतित कर दिया, यह बहुत बड़ा पाप किया। मगर, इसके लिए इतनी अधिक प्रतिशोधात्मक-उग्रता उनमें नहीं थी, कि आनसींग के पूरे परिवार को ही छिन्न-भिन्न करने की योजना बनाई जाए और अपराध से भी बड़ा दण्ड दिया जाए। हाँ, जहाँ तक हुक्का-पानी बन्द करने की बात थी, नाथू होलदार के अपराध की गुरुता की तुलना में यह दण्ड अधिक नहीं था, मगर नाथू होलदार की चंदरैणी (आत्म-शुद्धि-परक अनुष्ठान) करा लेने पर, पाप का प्रायश्चित्त कर लेने पर, इस दण्ड को भी हटाया जा सकता है—ऐसी उन लोगों की मान्यता थी !...ऐसे लोगों में करमसींग, तेजसींग दो-भैंयों के अलावा, दल की दुकान का मालिक दानसींग, हरसींग के तीन भाई जोधसींग-जैतसींग-जसौतसींग राठ और तल्ली बाखली<sup>१</sup> के गोबनसींग, हीरासींग, भादुरसींग आदि थे।

पूरा ऊडलगों दो बाखलियों में बँटा हुआ था। इसके अलावा, जिमदारों (राजपूतों) की बस्ती से दूर, एक सिरे पर, शिल्पकारों के पाँच घर थे, जिनमें रहने वाले जिमदारों को गुँसे (स्वामी) कहते थे और उनका काम-काज करते थे। कोई लुहार था, कोई मिस्त्री और कोई हलिया। इनकी बस्ती डुमोड़<sup>२</sup> कहलाती थी और ये आजीविका के लिए मुख्यतः जिमदारों पर ही निर्भर थे, क्योंकि इनकी अपनी जमीन नहीं के बराबर थी। देबराम अपनी बस्ती का मुखिया था और थोकदार गुमानसींग के अलावा आनसींग और दानसींग के यहाँ भी हल जोतने का काम करता था। उसका बड़ा बेटा दीलिया इन तीनों परिवारों के पशु बन चराने को ले जाता था। मगर, जब से साबुली को लेकर नाथू होलदार घर लौटे हैं, थोकदार ने देबराम से कह दिया है, कि

१. गाँव कई पंक्तिबद्ध घरों में बँटा होता है। गाँव के लोग अपने से ऊपर की पंक्तियों में पड़ने वाले हिस्से को 'मल्ली बाखला' और नीचे के हिस्से के लिए 'तल्ली बाखली' शब्द प्रयोग में लाते हैं।

२. यहाँ अछूतों को 'डूम' कहा जाता है, जो 'डोम' शब्द का अपभ्रंश है। चूँकि इस जाति के लोग ही यहाँ गृह-निर्माण, बड़ईगिरी और लोहारी का कार्य करते हैं मुख्यतः, अतः इन्हें शिल्पकार कहा जाता है। 'डूम' कहने से उन्हें मानसिक वेदना पहुँचना स्वाभाविक है, इसलिए समझदार लोग उन्हें 'शिल्पकार' कहकर ही सम्बोधित करते हैं। और, अब तो इन्हें डूम कहने वाले को वैधानिक-रूप से दण्डनीय घोषित कर दिया गया है।

या तो आनसींग का ही काम कर, या हमारा ही—और चूँकि थोकदार के साथ रहने में अधिक लाभ था, सो देबराम ने आनसींग के यहाँ काम करना बन्द कर दिया था ।”

थोकदार गुमानसींग ने डुमौड़ के भी देबराम, फकिरराम, जितराम और नरराम दो-भैंये—सभी को पंचायत में बुला रखा था । देबराम उनका अगुआ था और उसने कह दिया था सबसे—“गुसों का नमक भरना है ।”

धीरे-धीरे वे लोग एकत्र होने लगे, जिन्हें अपने घर-खेती के काम-काज की अपेक्षा यह पंचायत प्रिय लगती थी । कौतुकिया-स्वभाव के लोगों के लिए तो आज का दिन नन्दादेवी, जागेश्वर, शक्तेश्वर और सैमद्यों के मेलों में जाने के दिन से भी अधिक आकर्षक और कौतूहल-वर्धक था ।

पंचायत का समय थोकदार ने, चार आदमियों की राय से, १० बजे का रखा था । ऐसी संभावना थी, कि बात-घिवाद के लम्बे खिंच जाने पर, पंचायत की कार्यवाही दोपहरी से आगे तक चलेगी । मगर, धूप लगने की असुविधा नहीं थी, क्योंकि थोकदार का पूरा आँगन चारों ओर से कुम्भारू, खुबानी, दाड़िम और आलूबुखारों के वृक्षों की घनी-शीतल छाँव से भरा रहता था ।”

आनसींग और नाथू होलदार पंचायत में ठीक समय पर उपस्थित हो जाँएँ, यह संदेश थोकदार ने तेजसींग के हाथ भिजवा दिया था, सबेरे ही । और, रमौती को बुलाने के लिए, अलग से, खड़कसींग की माँ को भेज दिया था, कि जब रमौती घर में अकेली हो तो चली जाना और उसे पंचेत में हाजिर होने को बोल देना, कि ‘तू एक फरियादी की तरह पंचेत में शामिल हो जाना और यह रोदन-विलाप करना, कि नाथू होलदार ने तेरे साथ जबरदस्ती की थी और अपनी दुनाली बन्दूक छाती पर रख के, जान का खतरा दिखा के, अस्मत लूटी थी ।’ इससे तेरे सिर पर से इलजाम साफ हो जायेगा और जहाँ तक इस बात से तेरी आगे की जिन्दगानी गुजारने के लिए दर-गुजर-बसर की मुश्किल होती है, उसे थोकदार सौरज्यू पर भरोसा करके, एकदम दिल से निकाल दे । बेटी की तरह रहना चाहेगी तो वैसे और आगे भी कोई किसम की बात चाहेगी, तो छोटे भाई डिराइवर बिरसींग से बात चला दूँगा । अपने ठाठ से रहेगी ।’

लोगों के बैठने की व्यवस्था हो जाने पर, थोकदार ने शिल्पकारों के तमाखू पीने के लिए एक हुक्का और तमाखू अलग नरराम को दे दिया। जिमदारों को तमाखू पिलाने के लिए पाँच चिलमें एकत्र कर लीं और फिर पाँच आदमियों को 'चिलमसार'¹ लगाने के लिए कह दिया—“जब पंचैत शुरू हो जाये, तब बचिया और खड़कुवा भतीज के साथ, सुनो रे—आनसींग-पानसींग और ह्यातसींग—तुम पाँचों जने पाँच ठीरों पर चिलमसार लगाओगे। पंचैत में जनता ज्यादा इकट्ठी होने वाली है।”

इसके बाद थोकदार ने शादी बरात के अवसरों पर उपयोग में लाए जाने वाले ताँबे के दो बड़े तौले, मकान के बगल के छोटे-से खेत में पत्थरों के चूल्हों पर चढ़वा दिए। लोगों में चहा बाँटने के लिए कुछ लोगों को कह दिया और कई-एक घरों से गिलास मँगवा कर, जमा कर दिए। चहा बनाने के लिए उन्होंने कल ही कुमौली के बुद्धिबल्लभज्यू को संदेश भिजवा दिया था, कि नौ बजे से पहले-पहले पहुँचकर, अपना काम सँभाल लें और बुद्धिबल्लभज्यू जजमान की सेवा में समय से पहले पहुँचकर, चहा के तौले में पत्ती-चीनी डालने लगे थे। बड़ी हीलदारन ने उन्हें बता दिया था, कि छोटे तौले में डूमों और गों की औरतों और छोकरीयों के लिए कटकवाली² चहा बनानी है और बड़े तौले में चीनी वाली चहा। पंचों के गिलासों में थोड़ी दूध-चीनी ज्यादा रखने को भी कह दिया था।\*\*\*

सब बन्दोबस्त ठीक हो गया, तो थोकदार घड़ी देखने गए। अभी सिर्फ आठ बजने वाले थे। थोकदार ने अपनी टेबुलघड़ी को कानस में से उतारा और उसमें भरपूर चाबी देकर, साढ़े दस बजे का 'अलार्म' लगाकर, बाहर ले आए। पंच-चबूतरे पर एक नया कनस्तर रखके, घड़ी वहाँ ऐसे रखदी, जिससे सबको समय देखने में आसानी हो सके। इसके बाद, रामायण के कपड़े की

१. इसमें तमाखू पीनेवाले एक गोलदायरे में हो जाते हैं और बीच में एक आदमी चिलम लेकर सबको एक-एक फूँक तमाखू पिलाता जाता है। चिलमसार लगाने वाला स्वयं सबसे अंत की फूँक खींचता है।

१. बिना चीनी की चाय, जिसे गुड़ या मिसरी के टुकड़े को थोड़ा-थोड़ा दौंतों से काट कर पिया जाता है।

जिल्द वाली पुस्तक निकालकर, पंच-चबूतरे पर बिछे गलीचे पर पुस्तकाधार पर रख दिया और उसको दो भागों में खोलकर, वह अध्याय लगा दिया, जिसमें राम धोबी के लांछन से प्रभावित होकर, मर्यादा और न्याय की रक्षा के लिए, सीता को त्यागने का संकल्प करते हैं। रामायण के बीचोंबीच उन्होंने तुलसी के पत्ते रख दिए। तीर्थ-यात्रा के दिनों लाए हुए हरिद्वार-प्रयाग के पवित्र गंगा-जल, जो एक काँच की शीशी में बरसों से बन्द कर रखा था, की कुछ बूँदें एक पानी से भरे कलश में डालकर, उसमें एक तुलसी का पूरा पौधा डुबोकर, उस पंच-कलश को पंच चबूतरे पर रख दिया।

इसके बाद, उन्होंने उड़ते-होंठों से एक फूँक तमाखू की मारी और बेचनी से खड़कसींग की माँ के लौटने की प्रतीक्षा करने लगे।...

खड़कसींग पहले काफी लम्बे अरसे तक नाथू होलदार की संगति में 'कोटपीस' खेल चुका था और, नाथू होलदार के बोलने, चालने और रहने के ढंग से, उसे भी फौज में भर्ती हो जाने की उत्सुकता होती थी। बीच में, नाथू होलदार घर लौटे और साबुली को सबने तीन वर्ष-बाद उनकी 'जूली-मदर' के रूप में देखा, तो और कई लोगों के साथ-साथ, खड़कसींग भी भड़क उठा। साबुली उसकी ककिया-बहन लगती थी। इसके अलावा गुमानसींग थोकदार और खड़कसींग बिष्ट-खानदान के थे। अपने को ऊँची जाति का मानते थे औरों से। खड़कसींग सोचता था, कि साबुली ने बिष्ट जाति की नाक कटवा दी है।... इसके अतिरिक्त नाथू होलदार के व्यंगों से तिलमिलाई हुई उसकी अन्तरात्मा ने उसे बहुत शीघ्र ही नाथू होलदार के अनिष्ट-साधन से सुख पाने की स्थिति में पहुँचा दिया था, सो थोकदार गुमानसींग के साथ वह भी पंचायत के काम में बहुत गहराई से सहयोग दे रहा था।...

खड़कसींग की माँ का, बड़ी होलदारन चन्द्रावती का—दोनों का मैत (मायका) एक ही गाँव में था, इसलिए दोनों अकसर ही आपस में सुख-दुःख लगाया करती थीं अपने और एक-दूसरे के घर आना-जाना भी बराबर बना रहता था।

थोकदार के यहाँ से खड़कसींग की माँ सीधे आनसींग के घर के पिछवाड़े पहुँची। खड़की से अन्दर झाँका, तो देखा, रमौती सिर झुकाए हुए चावलों के कोरे बीन रही थी। चूल्हे पर उसने दाल का पानी चढ़ा दिया था। रेंस की दाल सुधारकर (कोरे-कंकर बीन कर) एक ओर रखी थी।

खड़कसींग की माँ ने 'ब्बारी' कहके, पुकारा, तो रमौती ने सिर उठाकर देखा। खड़कसींग की माँ बोली—“ब्बारी वे, उस तरफ पटाँगण में आनसींग ज्याठज्यू बैठे हुए हैं। मेरे सिर पर कपड़े का चाल नहीं है। यह दुश्मन घाघरा भी ठोर-ठोर से फटा हुआ है। अन्दर उधर से कैसे आऊँ। जरा इस तरफ का द्वार खोल दे, वे ब्बारी ! चदरावती और साबुली कहाँ गई हैं ?”

“खेतों में मडुवा टिपने,” कहते हुए रमौती ने, उठकर, पिछवाड़े का द्वार खोला और खड़कसींग की माँ के अन्दर पैर रखते ही, ‘पैलाग ज्यू’<sup>१</sup> कहा।

“जी री, ब्बारी !” कहते हुए खड़कसींग की माँ ने रमौती को छाती से लगा लिया और बड़े वेग से सिसकारियाँ भरने लगीं। रोई इस आर्कांक्षा से नहीं, कि कही पटाँगण में आनसींग ज्याठज्यू ने सुन लिया, तो ‘क्या हुआ, ब्बारी ?’ कहते हुए अन्दर आ जाएँगे।...

रमौती को छाती से लगाए-लगाए ही, उसका मुँह अपने हाथ से दुलारते-पुचकारते हुए, खड़कसींग की माँ उसे चावलों के सुप तक ले आई—“बैठ, ब्बारी, बैठ ! अब रोने से कटी पतँग हाथ थोड़ी आती है ? चौमास की पनार में पाँव फिसल गया, तो ‘बचाओ-सँभालो’ कहने तक कहाँ-की-कहाँ लाश पहुँच जाती है। जवानी की चाल तो कुछ ऐसी होती है, ब्बारी, कि बन्दूक से फेंर छूट गई कारतूस की, किसी-न-किसी को लगती ही है। खैर, तेरा कोई कसूर नहीं, ब्बारी ! तू तो गौ-बाछी हो गई थी, मोहनिया बेटे के फौत हो जाने के बाद—शिवो कँसा राजकुँवर-जैसा था ?—जिसे हर वहीड़ सूँघने और बिनबत्वाली<sup>२</sup> आए ही ‘अँ-अँ’ करन लगता है।... चू-चू-चू...रोती है, छोरी ?... अरे, होने को तो, जो घोर अन्यौ-अत्याचार इस पापी घर में तेरे साथ हुआ है, उससे पत्थर की आँखें भी रोते-रोते फूट जाती !”

अन्तिम वाक्य कहकर, खड़कसींग की माँ ने, रमौती के पाप की गुरुता और नाथू होलदार के पाप की नृशंसता को अभिव्यक्ति देने की कोशिश की

१. ज्यू सास को भी कहते हैं और बहुधा इसका प्रयोग ‘जी’ के लिए भी होता है। यहाँ ‘सास जी’ के अर्थ में प्रयुक्त है।

१. मोसम।

और प्रतिक्रिया देखने के लिए, आँसू पोंछने के बहाने, गौर से रमौता का चेहरा देखने लगी ।

रमौती फिर चावल सुधारने में लग गई थी ।

खड़कसींग की माँ ने भी हाथ बँटाना शुरू किया और फिर एक कंकर मिलते ही, बोली—“कितनी ही ऊँची जात का चावल हो, दश-पाँच कंकड़-पाथर उसमें भी निकल ही आते हैं । अब किसी औरत में कहीं कोई नुक्स आ भी जाए, तो वैसे बहुत बड़ी बात भी नहीं है और ऐसे भी, कि इसके बाद औरत जात पराए वश की पंछी—पाँख काटके रख दिए तेरी फूटी तकदीर ने—किसी को अपना मुख दिखाने-लैक नहीं रहती ।...”

इतना कहकर, खड़कसींग की माँ ने फिर रमौती को एकटक देखा, पर वह अपनी विषम-स्थिति के इस विश्लेषण के प्रति भी पूर्ववतः मौन, उदासीन-सी दिखी । खड़कसींग की माँ को और कुछ नहीं सूझा, तो थोकदार गुमानसींग की बातें दोहराने लगी—“लेकिन फिकर मत कर, ब्वारी ! ईश्वर की माया कुछ ऐसी है, कि पाँव फिसलने के लिए नीचे पत्थर रखता है, तो सँभलने-बचने के लिए ऊपर पेड़ की डाली भी बना देता है, कि जो कोई उसको जोर से थाम ले, गिरते-गिरते-बच जाए जान की जोखम से । मगर, बहुत-से लोग ऐसे होते हैं, कि चिफल-पाथर<sup>२</sup> पर पाँव रखते समय तो, खैर, कुछ सोचते ही नहीं, ब्वारी—फिसलने पर भी ऊपर की डाली को नहीं थामते हैं और खड़ख में गिरते हैं ।...” मगर तू कोई नादान थोड़े ही है, ब्वारी ? थोकदार ज्याठजू जो भलाई और इन्साफ का काम अपनी ओर से—अपने ही गाँव की बहू-बेटी समझ के—आज कर रहे हैं, उससे कोई तू अनजान थोड़ी ही है ? है न, ब्वारी ? और, देख, मैं चिफल पाथर की बात कह रही थी, उस पर एक का क्या, जितनों के पाँवों ने पड़ना है, उसने खड्ड तक ही जाना है । इसीलिए, थोकदार ज्याठजू ने नाथू को ऊडलगों से बाहर निकालने की भी कुमेटी कर रखी है । मगर, थोकदार ज्याठजू कह रहे थे, कि फरियादी सुस्त रहे, तो चुस्त गवाही भी कुछ काम नहीं आती ।...”

“मैं तो भीतर-ही-भीतर हूँ, ज्यू ! लोग जाने क्या-क्या कह रहे हैं, कर

२. चिकने पत्थर ।

रहे हैं, मेरे लिए पहाड़-ओट का घाम हो रहा है। थोकदार सौरज्यू क्या कर रहे हैं, क्या नहीं कर रहे हैं, मुझे क्या खबर ?”—रमौती शान्त-स्वर में बोली—“ज्यू, मुझे तो सबसे ज्यादा संताप इस बात का है, कि कैसे पवित्र और पुण्यात्मा परिवार में रहकर, मैंने कितना घोर पाप कर डाला। मैंने तो सोच लिया था, इस पापी शरीर को चील-कौवे लग जाएँ, तो अच्छा है। मगर, ज्याठज्यू ने....”

“अरे, ब्वारी, उस पापी का नाम लेने से अब क्या ‘नाक में बास’ आई, मुँह से थूकने से कहाँ जाती है।’ करना है ? ..वह सब तो रुदरिया भतीजे ने आँखों से खुद देख लिया, कि नाथू क्या जुलम कर रहा था तेरे साथ।”—खड़कसींग की माँ फुसफुसाकर बोली—“तुझे पहले भी हमल गिराने के लिए कहा था क्या उसने ?”

“क्या बकती हो, ज्यू ?” रमौती एक हाथ सूप में धरे-धरे ही बोली—“ऐसे पाप के वचन क्यों बोलती हो, ज्यू ? मेरे साँप की आँखों में कंठि डालने आई हो क्या ?...ओत्रा, ज्याठज्यू ऐसी अपवित्र बात कहते मुझसे ? उन बेचारों को तो मेरे डूब मरने क्या, घर लाने तक भी कुछ पता ही नहीं था। पीछे मुझे ठुल दिदी<sup>२</sup> ने बताया था, कि गंगोत्तरि ज्यू ने सारी बात फैलाई थी।...अच्छा, ज्यू, अब तुम जाओ। मुझे रस्यो पकाके तैयार करनी है।....”

इतना कहकर, रमौती ने सूप उठाकर एक ओर रख दिया और सुघारे हुए चावलों को तोली में डालकर, धोने को ले जाने लगी।...मगर खड़कसींग की माँ ने कसकर कलाई पकड़ ली—“सुन, वे रमौती ब्वारी ! इस समय थोकदार सौरज्यू पंचैत में सारा मामला रख रहे हैं, तो नाथू हजार बातें सिखा-पढ़ा के तैयार करेगा, कि ऐसा नहीं, ऐसा कहना। और चूँकि इस समय उसकी गरज है, इसके वास्ते वह तुझसे पानी से पतला, नौनी से चुपड़ा होकर, तेरी सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर लेने की बात करेगा। मगर, अपनी तरफ से होशियार कर देती हूँ, ब्वारी, कि एक बार पंचैत से नाथू बच गया, तो फिर आगे, ‘ज्यू ने क्या कहा था’, कह देना। वही बात सामने आयेगी,

१. दुर्गन्ध ।

२. बड़ी जेठानी ।

कि 'बाध बंदूक से बच के निकल गया, तो फिर बकरी का क्या अहसान मानना ?'... इसीलिए, ठीक बख्त पर तेरे थोकदारसौरज्यू ने मुझे तेरे पास भेजा है, कि तू कोई किसम की परवा मत कर । ताबेजिन्दगी दर-गुजर के बास्ते सम्पूरण बंदोबस्त कर दिया जायेगा । बिन-अधार-आड़ के रहने में असिमसी<sup>१</sup>-जैसी मानेगी, तो बिस्वा डिराइवर से बात बिठा दी जाएगी । मगर, खबरदार, यह मौका चूकेगी, तो 'हिरण की बातों में हाथी गँवाया', वाली होगी । पंचेंट में आके—मेरी यह नेक सलाह मान ले, रमौती ब्वारी—नाथू पर खुला इलजाम लगा दे, कि इसी पापी ने मुझ नादान औरत की आवेरू खराब की और जबर्दस्ती पेट दबाकर हमल गिरवाने लगा..."

हाथ छुड़ाकर, रमौती ने जोर से चावलों की तोली, खड़कसींग की माँ के सिर पर मार दा और करुण वेदना मे विह्वल-सी होकर, आहत-मन लिए, घुटनों पर सिर धरे सिसकने लगी, रोने लगी ।...

खड़कसींग की माँ ने रमौती के हाथों से छूटी तोली को अपने सिर पर ही थाम लिया था, उसे जमीन पर रखकर, थोड़ी देर सिर सहलाने के बाद, रमौती के समीप आ गई । रमौती का मुँह ऊपर उठाकर, सरल, स्नेहपूर्ण स्वर में, पूछने लगी—"रमौती ब्वारी, नाथू होलदार से नहीं लगाया ना तूने भुटका ?"

"ज्यू !" रमौती सिसकती-सुबुकती बोली—"मैं पापिनी हूँ, अपने पाप से इन्कार नहीं करती । पर, ज्याठज्यू मेरे लिए बौज्यू की जगह हैं । मैं तुम्हारे पाँव पड़ती हूँ, ज्यू, ऐसे अधरम की बात मत करो । तुम्हारी पवित्र आत्मा को भी इससे कलंक लग जाएगा । ज्याठज्यू के लिए तो मैं जूली चेली की जगह पर हूँ, ज्यू !..."

"मुझे माफ करदे, ब्वारी ! दरअसल रुदरिया और उसकी इजाने जैसी अधरवाली बात फैलाई है, उसी से चित्त मेरा भी दुखित-कुपित हो गया था । मैं भी सोच रही थी, कि एकाएकी इतना गू कैसे खाएगा नाथू भतीज !..." रमौती के सिर पर हाथ फेरती, खड़कसींग की माँ उठ खड़ी हुई—"ब्वारी, कहा-सुना माफ करना मेरा । मैं थोकदार ज्याठज्यू को जाके बोलती हूँ, कि

हकीकती क्या है ।...मगर, एक बात बता दे, ब्वारी, ताकि सारा खुलासा समझाने के बास्ते ठीक रहे । यह पेट किससे रहा तुभको ?...इतना बता दे, फिर मैं चलती हूँ !”

रमोती इस प्रश्न से अटपटा ही रही था, कि बाहर से नाथू होलदार की आवाज आई—“ब्वारी, जूली उठ के रो रही है छोरी, बीच बिस्तर में ही बंठ के । जरा तिरलोक को भी उठा दे, कि आखिर यह कोई सोने का टैम है ? दोनों को ‘बिरेक-फास्ट’ भी करा दे ?...”

“अभी तुम जाओ, ज्यू ! फिर कभी बता दूंगी ।” कहकर, रमोती ने चावल की तौली एक ओर रखी उठाकर, ओर जूली-तिरलोक को लाने चली गई ।...

दोनों बच्चे उठ गए थे । रमोती ने अपने सिर के चाल के कोने से उनकी आँखों के गिदड़े पोंछे और बोली—“उठ, तिरलोक ! चल, दूध-चहा पीएगा । आ, चेली, तू गोदी में आ ।”

जूली को गोद में उठाकर, रमोती चूल्हे की ओर लौट रही थी, कि आँगन में खड़कसींग की लटपटाती आवाज गूँज उठी—“अनूका हो, थोकदार ज्याठ बोज्यू कह रहे हैं, कि पंचैत का टैम—जो उन्होंने ठीक दश-साढ़े-दश बजे का रक्खा था—हो गया है । और तुम दोनों को बुलाया है, कि पंचैत की कारवाई अब शुरू होने ही वाली है ।...”

रमोती ठिठक कर, जूली को गोद में लिए, खड़ी हो गई ।

नाथू होलदार कह रहे थे—“पहले अपने मुँह का थूक सँभाल, खड़कुवा ! फिर पंचैत की खबर देने को आएगा । पंचैत का टैम जब साढ़े दस बजे का ‘फिक्स’ कर रखा है, तो करैक्ट टैम से पहले साढ़े नौ बजेके—(आगे बढ़ी हुई बड़ी वाली सुई सात पर, छोटी उसी से आगे नौ पर)—पाँच मिनट पर कैसे आ गया है, चँपड़ासी बनकर ? थोकदारज्यू को बोल, कि पंचैत करने से पहले, किसी घड़ी-मेकर के यहाँ भेजकर अपनी घड़ी को ठीक करवा लें !... ओके, गेटौट !...”

‘गेटौट !’ नाथू होलदार गुस्से से थरथराती, इतनी जोर की आवाज में चिल्लाए, कि रमोती की गोद से जूली नीचे गिरते-गिरते बची !...

**धीरे-धीरे** गाँव के छोटे-बड़ों से थोकदार गुमानसींग का लम्बा-चोड़ा-आँगन भरता ही गया ।

बिना किसी प्रकार का होहल्ला किए ही, थोकदार ने, अपने विशिष्ट प्रचार-सूत्रों द्वारा ऊँडलगों के बाहर भी दूर-दूर तक इस असाधारण और आकर्षक समाचार को फैला दिया था, कि ऊँडलगों में ऐसा-ऐसा हो गया है और ऐसे-ऐसे वहाँ के थोकदार अपने गाँव की जनता की भलाई के लिए, बहुत बड़ी पंचैत बैठा रहे हैं, जिसमें बड़े-बड़े रईस लोगों की भी आने की संभावना है ।...

रईस लोगों से तात्पर्य उन लोगों से था, जो गाँव के साधारण लोगों की तरह मिट्टी-पानी का गंदा काम तो नहीं करते, मगर ऐसे विशेष कारणों के बारे में बहस-वार्ता करने के लिए पारंगत होते हैं, विशेष रुचि रखते हैं । कान-सुनाई तो बहुतों के नामों की हो रही थी, पर दिगोली के सरपंच दिगोली वाले लछमदत्तज्यू, पल्यू के भैरबदत्त ज्यू, तिलाड़ी के ठाकुर कल्याणसींग ज्यू, छानी के पधान भोपालसींग ज्यू, घुमौली वाले लछमदत्तज्यू—इतने रईसों के आने की खबर तो पक्की थी । इनमें से ठाकुर रईस ही ऐसे थे, जो लोगों में रुपए कर्ज लगाने के साथ-साथ खेती का काम भी खुद ही किया करते थे ।

अलमोड़ा से अपने समधी मोटर-मालिक ठाकुर हरबंससींग और रघुवंश सींग दो भाईयों को भी थोकदार ने बुलवा भेजा था और वो अपने साथ अलमोड़े के दो-चार तमाश-बीनों को भी ले आये थे । रमौती के मायकेवालों

को भी अप्रत्यक्ष-रूप से, थोकदार ने खबर पहुँचा दी थी। मगर, उनमें से कोई अभी आया नहीं था।...

थोकदार गुमानसींग ने सोच लिया था, कि यह दाँव पूरा जोर लगाकर खेलना है, नहीं तो सिर उठाकर चलना तो मुश्किल हो ही जाएगा—बदले की इच्छा की राख अपनी ही आँखों को अंधा कर देगी।

घुमौली वाले लछमदत्तजू चूँकि कानून और राजनीति के मामले में धुरधुर माने जाते थे, सो थोकदार ने उन्हें अन्दर बुलाकर, विशेष रूप से, दो-चार शब्दों में अपनी नम्र विनती सुना दी थी, कि इस पंचैत को बिठाने का एकमात्र उद्देश्य अपने गाँवों की इज्जत-आबरू पर कलंक का टीका लगने से बचाना हो गया है। यह तो कोई भी मानता है, कि जंगल में हजारों लोग हगते हैं, कोई साफ करने नहीं जाता। मगर, घर-पटाँगण की टट्टी साफ करनी ही पड़ती है।...

“यह समझिए, कि इस हरामी पलटनियाँ ने हमारे सारे ऊँडलों को गन्दा कर दिया है। सो, चूँकि इससे गंदगी और आगे भविष्य में भी फैलने की पूरी-पूरी खतरनाकी है। सो, एक यह मजबूरी और फरज की पुकार हो रही है, कि गंदगी और बदनामी की जड़ को अलग किया जाए। यानी, कि नाक को आप गों समझ लें और नाथू पलटनियाँ को एक गंदी मक्खी—इस पौष्टिक को आप विशेष ध्यान में रख लें, लछमदत्तजू—अब जहाँ तक गंदगी को दूर करने के लिए कोई कार्रवाई करने का सवाल सामने आता है, नाक को तो चक्कू दिखाया नहीं जा सकता न? ...मक्खी को ही हटाना पड़ेगा?...”

इतना कहने के बाद थोकदार ने लछमदत्तजू के पाँव पकड़ लिये थे—  
“वैसे थोड़ी-बहुत मेरी आबरू का सवाल है। वैसे आपको मालूम पड़ गई होगी यह बात, कि कैसे यह नाथू पलटनिया मेरी बेटी साबुलि को बहका कर पलटन में भगा ले गया। मेरी बेटी साबुलि आज के दिन तक मेरे यहाँ आने को, जवाईं लाला लछमीनारायन के यहाँ जाने को धरती घाप मारती है, बेर-जैसे आँसू गिरा देती है, पर—साबुलि चेली ही कहती थी, कि—नाथू पलटनिया ने उसे धमकी दे रखी है, कि जरा पाँव कहीं रखते ही, बन्दूक की गोली से उड़ा दूँगा—तो, ये सब कैसे हैं। वैसे हमारे असली जवाईं के हक्क को भी—यानी

तिरलोककिया को भी—इस पलटनिया ने जोर-जबरदस्ती से अपने ताबे में कर रखा है। उसका भी फँसला होना चाहिए... मैं यह मानता हूँ, कि पंचत के जरिए से हम कोई कानूनी मजबूरी किसी को नहीं दे सकते। मगर, आपको एक खास प्वाइंट पंचत लड़ने के लिए यह भी समझा दूँ, कि नाथू पलटनिया जरा नाकदार और घमंडी किसम का है। यानि, अगर उसकी कारस्तानियों का पंचत में जोरदार भंडाफोड़ कर दिया जायेगा, तो वह खुद ही शर्म के मारे या तो कहीं डूब मरेगा, या तो पलटन में भाग जायेगा।... बाँकी रमौती वाले केस को—जो इस पंचत की खास जड़ है—मैं पहले ही समझा चुका हूँ। सिर्फ आपको ही नहीं, बल्कि सब लोगों को।”

“केस और इस सिलसिले के सारे मामलातों को मैं बहुत अच्छी तरह समझ चुका हूँ, थोकदार... बाँकी जो कुछ मसौदा पंचत में मुद्दई और मुद्दाले के आपसी बयानों—और खासकर उनके चश्मदीद गवाहों के आपसी बयानों—के जरिये ऊपर उठेगा, हम पंच-सरपंचों के सामने आयेगा, उससे सब नतीजे हासिल किये जाएंगे।” घुमौली वाले लछमदत्तजू बोले।

“पर, एक बात को खास प्वाइंट के तौर पर इसे लीजिए, लछमदत्तजू, कि इस केस में फरियादी या कि मुद्दई मैं नहीं हूँ, बल्कि पूरा ऊडलगाँ है।” थोकदार बोले—“मेरे मुद्दईपने की बात आप पूछते हैं, तो इसी हद तक है, कि अपनी साबुली बेटी वाला जिकर आपसे पहले ही कर चुका हूँ। नहीं तो, मेरा क्या है ? इस गाँव का पुस्तैनी थोकदार चला आया हूँ, मेरे लिए ‘जैसे नाथू, वैसे सिधू,’ वाली बात है।”

“वही हिसाब हम पंच-सरपंचों का होता है।” थोकदार के जैसे ही निर्लिप्त-स्वर में, लछमदत्तजू बोले—“हमारी तरफ से न-जाने किसके आपसी मामले क्या हैं, हमें तो पंचत में सामने आने वाले ‘केस’ को इन्साफ की नजर से देखना पड़ता है, थोकदार !”

घुमौलीवाले लछमदत्तजू की इस सीधी-सादी बात ने, थोकदार की सारी बुनियाद को ही धुमा दिया। भट से फतुई (बास्कट) की जेब से एक रूमाल निकाला, जिसमें बिक्टोरिया-छाप पच्चीस कलदार बंधे हुए थे और लछमदत्तजू के हाथों में थमा दिया—“पंच परमेश्वर कह रहा है। उसकी

बातों की, उसके इन्साफ की कीमत को कौन चुका सकता है ? फिर खास करके आपस के मामले में तो बाहर के ही पंचों की बात और उन्हीं का इन्साफ सबसे जोरदार रहेगा। थोकदार को तो लोग यों भी कह देंगे, कि अपनी दुरमनी फेर रहा है।...तो, लछमदत्तज्यू, ये सब बातें आपके और हमारे घर की हैं। दो-चार बरस में बेटे नरैणसींग का बरपन<sup>१</sup> काफी धूम-धाम में करूँगा, आपको मय-परिवार के बुलाऊँगा ही और सुना है, आपकी घुमौली में आप लोग एक शानदार शिव जी का मंदिर खड़ा करने वाले हैं। जो-कुछ चंदा मेरे हिस्से में आएगा, देने में खुशी ही होगी। आपका काम, मेरा काम है। इसे भी अपना ही मामला समझ लीजिए, और विशेष-बाँकी मैं क्या कहूँ, आप खुद समझदार हैं, गुरु<sup>२</sup> !”

लछमदत्तज्यू ने फुर्ती से रुमाल अपनी चूड़ीदार गरम सुरयाल (पायजमा) की भीतरवाली जेब में डाला और बोले हँसते हुए—“थोकदार की भी बात है एक। अरे, अपने ही घर की जैसी बात नहीं होती, तो घुमौली से इतनी दूर आता में ?”

‘मैं’ पर विशेष जोर देकर उसकी महत्ता को स्पष्ट करने के लिए थोड़ी देर रुककर, लछमदत्तज्यू फिर बोले—“कुंज-बरंगल में भी एक ऐसे ही किसम का कुछ ‘केस’ हो गया है। पिंड नहीं छोड़ रहे थे, कि ‘गुरु, आपको तो चलना ही पड़ेगा, आपको तो चलना ही पड़ेगा।’...मगर, मैंने साफ-साफ इन्कार कर दिया, कि मुझे पहले अपने थोकदार साहब का न्यौता मानना है। ...अच्छा तो, अब मैं जाके पंच-चबूतरे पर बैठता हूँ। दिगोलीवाला लछमदत्त भी आया है ? सरपंच तो उसी को बनाने का विचार होगा, तुम लोगों का ?”

वास्तव में, दिगोली वाले लछमदत्तज्यू की इतनी प्रतिष्ठा और प्रसिद्धि थी, सरपंच बनाने के मामले में, कि उनके रहते हुए, किसी और को सरपंच बनाने की बात खटकती सबको। वैसे सरपंच तो कोई ऊँडलगों का ही होना चाहिए था और पहले थोकदार ही खुद सरपंची करते रहे थे। मगर, इसबार थोकदार का इरादा नाथू होलदार से बदला लेना था। यह संभावना थी नहीं, कि पंच-फैसला यदि नाथू होलदार के विरुद्ध हुआ, तो वो उसे मान ही लेंगे। इसीलिए,

१—यज्ञोपवीत-संस्कार।

२—पहाड़ में ब्राह्मणों को ‘गुरु’ कहकर, सम्बोधित करने का चलन है।

थोकदार ने इतने बड़े पैमाने पर पंचायत बिठाने की व्यवस्था की थी, ताकि पहले तो नाथू होलदार आए ही नहीं, आए भी, तो इतना लांछित-अपमानित किया जाए, कि तिलमिला कर, भाग जाए।...सो, थोकदार इस प्रयास में थे, कि ऐसे लोगों की उपस्थिति अधिक हो, जो संकेत पाते ही नाथू होलदार के लिए थू-थू करने लगे। कई लोगों—श्रीरत-मर्द दोनों—को उन्होंने कई वाक्य सिखा दिए थे, कि ऐसा-ऐसा कहना। इसके अलावा थोकदार की यह इच्छा थी, कि सरपंच भी वही हो, जो नरमी न बरते, इन्साफ की बारीकियों में न जाए, बल्कि थोकदार की बातों को ध्यान में रखते हुए, नाथू होलदार की हालत खराब कर दे।

घुमौली वाले लछमदत्त ज्यू की प्रश्नवती-ग्रांखों में इस समय थोकदार को एक लम्बी भविष्य-रेखा-सी दिखाई दी, कि यदि इस व्यक्ति को सरपंच बना दिया जाए, तो नाथू होलदार की खैर नहीं।...

थोकदार ने कुछ क्षण गहराई से सोचा और फिर लछमदत्तज्यू का कंधा थपथपा के बोले—“सब ठीक हो जाएगा, गुरु !”



नौ बजने तक बहुत लोग एकत्र हो गए थे। थोकदार ने खास-खास लोगों के लिए पंच-चबूतरे के पास मोटी दरी बिछा दी थी। उस दरी पर जिसको भी बिठाया जाता, वह थोकदार से मिले इस आदर से अभिभूत-सा पहले से ही नाथू होलदार के विरुद्ध रोषपूर्ण-मनस्थिति में आ जाता था।

तेजसींग ने आकर, जब यह सूचना दी, कि उनके कहने-सुनने के बाद आनसींग और नाथू होलदार—दोनों—आने को राजी हो गए हैं, तो थोकदार ने जल्दी से अपने समधी हरबंशसींग की ओर आँख मारी।

हरबंशसींग इस समय इस ध्यान में खोए थे, कि उनका ४४८ नम्बर का ठेला अब ज्योतीकोट से काठगोदाम की ओर उतरने लगा होगा। समधी का इशारा पाते ही, उन्होंने अपनी जेबघड़ी की जंजीर को ऊपर खींचा। श्रीरों को घड़ी की डिजाइन और रफ्तार के बारे में कल्पनाशील बनाने के लिए, जेब के ऊपरी हिस्से तक ही उठाकर, जेब के अंदर ही ‘टैम’ देख लिया। जेब के मध्य में उन्होंने एक छोटा-सा, तिरंगा झंडा का ‘बैज’ भी लगा रखा था।

उसको ठीक करने के बाद, सप्रयास खँखार-खँखार कर, बन्द गले के कोट का कालर ठीक करते हुए, बोले—“जैसा कि आप लोगों के इस गाँव के थोकदार और मेरे महामान्यवर समधी ठाकुर सिरी गुमानसींग बिष्ट मौजा आपके इसी गाँव वालों ने मुझको बताया है—आज हम सब लोग और आप लोग यहाँ पर एक बहुत बड़े काम के लिए इकट्ठे हुए हैं। पंचायत का काम इन्साफ करना रहा है और गुनहगार को दण्ड देना भी उसी के जरिए होता है। खैर, इस मामले पर खुलासे से मैं पंचैत शुरू होने पर बोलूँगा। इस समय, जैसा कि मेरे मान्यवर समधी जी ने इशारा किया है—यानी, मैं जो परस्ताव आप सब लोगों के सामने रखना चाहता हूँ, वह यह है, कि पहले श्रीमान् सरपंच और पंचों का फैसला हो जाना चाहिए। पंच-सरपंचों के अलावा ग्राम पब्लिक को भी अपनी-अपनी राय, अपनी-अपनी फरमाईश जाहिर कराने का पूरा-पूरा हक रहेगा, अब मैं बैठता हूँ। जै राम जी की। एक बार आप सब लोग भी मिलकर बोलिए—क्योंकि, पंचायत की कारवाई शुरू करने से पहले, ईश्वर का भी नाम लेना चाहिए—तो, बोलिए सब लोग एक आवाज में...बोल, सियाबर रामचन्द्र की.....”

“जै ! जै ! जै ! जै ! जै !...” लगभग दो मिनट तक लोगों के कंठ से जै-जैकार निकलती रही।

इसके बाद थोकदार ने कहना शुरू किया—“आज हम ऊडलगों वालों की यह बहुत बड़ी खुशनशीबी है, कि हम गरीबों के घर में यह रौनक आई हुई है, क्योंकि बड़े-बड़े लोग आए हुए हैं।...आप लोगों की इतनी बड़ी मात्रा देखकर ही, अंदाज लगा सकते हैं, कि गौ की इज्जत-आबेरू का जो सवाल होता है, उसकी क्या कीमत होती है।...तो, जैसे कि यहाँ पर हमारे दिगोली के रहीस बापसैप<sup>१</sup> दिगोली वाले लछमदत्तज्यू आए हुए हैं—यह हमारी बहुत बड़ी खुशनशीबी है और हम ऊडलगों वाले उनको, यहाँ तक तकलीफ उठाने के लिए, बारोबार धन्यवाद देते हैं—हम सभी एक दिल से यही चाहते हैं, कि इनको ही हमेशा सरपंच बनाया जाए, जहाँ पर कि किसी बड़े आदमी को इज्जत देने का सवाल होता है और इसमें हम सब लोगों को बड़ी खुशी

होती। मगर, इसे हम सब ऊँडलगों वाले अपने लिए बहुत ही बड़ी बदनशीबी और एक किसम की बड़े शरम की बात समझते हैं अपने लिए, कि आज हमारे ऊँडलगों में एक ऐसे शरश के जरिए, एक ऐसी बात—बहुत बुरी बात—हुई है, कि हमको शरम के मारे सिर ऊपर उठाकर चलने, आँखें पूरी उधाड़कर चलने की कहीं हिम्मत नहीं हो रही है। और मैं नहीं चाहता, कि ऐसे शरश ने जो ऐसा पलीत<sup>१</sup> काम किया है, उसमें हमारे रईस बापसैप दिगौली वाले लछमदत्तज्यू—जैसे मान्यवर आदमी को सरपंची के लिए परेशान किया जाए। इसलिए मैं—हम सब लोगों की सम्मति से—महामान्य घुमौली वाले लछमदत्तज्यू—जो कि हमलोगों की खुशकिस्मती से, ये सामने हमारे मान्यवर समधी ठाकुर हरबंशसींग जी जड़ौत-अलमोड़ा शहरवाले की बगल में बैठे हुए हैं...

थोकदार इतना ही कह सके थे, कि घुमौली वाले लछमदत्तज्यू ने चारों तरफ मुँह घुमाते हुए, अपने दोनों हाथों को जोड़कर, लोगों का अभिवादन करना शुरू कर दिया और, सरपंच-आसन पर जाने की तैयारी के लिए, उकड़ू बैठ गए।

थोकदार को बोलते-बोलते रुक जाना पड़ा था, क्योंकि लोगों का ध्यान घुमौलीवाले लछमदत्तज्यू की ओर खिंच गया था। जब लछमदत्तज्यू अभिवादन-क्रिया से मुक्त हुए, तो थोकदार ने फिर कहना शुरू किया—“तो मेरे प्यारे भाइयो, और विशेषकर बहनों और माताओ, मैं महामान्यवर पंडित घुमौली वाले लछमदत्तज्यू को आप सब लोगों की ओर अपनी तरफ से आज के इस पंचैत की—जो क्यों बिठाई जा रही है, यह सब आप लोगों को मालूम ही ही है—सरपंची सौंपता हूँ।”

बस, थोकदार का वाक्य पूरा हो ही सका कि, थोकदार गुमानसींग की व्यवस्था के अनुसार, रघुवंश सींग खड़ा हो गया—“बोलो, सियाबर रामचन्द्र की जै। जै बोलो परमपिता-माता शंकर-पारबती की जै ! जै बोलो सरपंच बहादुर घुमौली वाले लछमदत्तज्यू की...ई...ई...ई...ई...”

“जै-जै...सरपंच सैप की जै !...जै...जै...जै...जै...”

टनन्—टनन्-टनन्-टन्...

लोगों की जै-जै के साथ घड़ी का अलारम भी पुकार उठा ।

तब थोकदार ने खड़कसींग से कहा—“जा भतीज, आनसींग और नाथू पलटनिया को पंचैत में आने को बोल, कि पंचैत का समय—जो यहाँ पर सब लोगों की राय से दश-साढ़े दश रखा था और मैंने उसी टैम साढ़े-दश का अलारम भी लगा दिया था, कि १० बजे पंचैत बैठनी शुरू होगी, तो बैठते-बैठते आधा-पीना घंटा लग ही जाएगा—तो उनको बोल, कि पंचैत का करैवट टैम हो गया है । जल्दी-से-जल्दी हाजिर होने को बोल दोनों को और, देख रुदरिया भतीज अभी तक नहीं आया लौट कर । उसके घर में भी जोर से धाध मार के एक आवाज ‘रुदरसींग’ की छोड़ आना !...”

थोकदार ने रमौती को भी पंचैत में बुलाने का विचार कर रखा था और उन्होंने निश्चित कर रखा था, कि नाथू होलदार के पंचायत में आ जाने के बाद ही, यह प्रस्ताव रखा जाए । उन्हें विश्वास था, कि मात्र इस प्रस्ताव से ही नाथू और आनसींग दोनों बौखला उठेंगे और पंचायत से बाहर निकलने की कोशिश करने लगेंगे, कि हम बहू की सब लोगों के सामने तौहीन नहीं सहन कर सकते !

इसके लिए थोकदार ने यह व्यवस्था कर रखी थी, कि जैसे ही नाथू होलदार या आनसींग—दोनों में से कोई एक, या दोनों—पंचायत से उठने लगे क्रुद्ध-अपमानित होकर, तो कुछ लोग जाँठी (लाठी) लेकर खड़े हो जाएँ, कि ‘खबरदार, नाथू ! यह हमारे सारे गाँव की बहू-बेटियों की इज्जत-आबरू का सवाल है । या तो तू रमौती को पंचायत में हाजिर करके इन्साफ करवा, या यह वचन दे कि इकरारनामा लिखके इस गाँव से अपना मुँह काला कर, अपने गुनाहों की पंच-सरपंचों से माफी चाहता हूँ और प्रायश्चित के लिए वचन देता हूँ, कि ताबे-जिन्दगी अब अपना काला मुँह इस गाँव में किसी को नहीं दिखाऊँगा ।’...

आनसींग और नाथू को पंचायत के सामने अधिक-से-अधिक लांछित-अपमानित करके ही अपना बदला लिया जा सकता है,—नाथू होलदार को गाँव से बाहर निकलने को मजबूर किया जा सकता है,—पंच-निर्णय से नहीं,

थोकदार ने यह सोच लिया था। इसीलिए, उन्होंने इस सबके अलावा चार-पाँच औरतों को यह भी सिखा रखा था, कि नाथू होलदार के पंचायत में उपस्थित होते ही 'थू पापी, थू पापी' कहते हुए, अपने घरों को लौट जाएँ और अगर रमौती आ ही जाती है, पंचायत में, तो—थोकदार के पक्ष में न बोलने पर—उस पर भी तेजाब के जैसे छींटे फेंके जाएँ। इस सिलसिले में, उन्होंने विशेष रूप से अपने हलिया देबराम शिल्पकार की घर वाली खिमुली को समझा रखा था—“मान लिया जाय, खिमुली, किरमौती चाहे किसी भी वजह से—याने घर के लोगों की डर से, या उनकी इज्जत के ख्याल से—पंचैत के अन्दर आकर नाथू होलदार के भुटके<sup>१</sup> से साफ इन्कार कर देती है। तू तत्काल ऐसा करना, कि, थू-थू करते हुए और यह कहते हुए घर को चली जाना अपने, कि—‘हत् तेरी पापिणी की ! अरे, ऐसा घोर कलंक हम डुमणियों में भी कोई अपने सिर पर नहीं लगाता, कि बौज्यू के जो बरोबर माना गया है, उसी जिठाणे से भुटका...?...थू-थू-थू...’ तो खिमुली यह काम तेरे हाथ में रहा। डरना मत, किसी भी बात से। देबराम बिचारा भी कल से खूब मदद कर रहा है मेरी और उधर सैमाधुर के नजदीक पड़ने वाले मलगजा की जो थोड़ी जमीन है, तेरी गुसँणियाँ<sup>२</sup> कह रही थीं, कि हमारे लिए तो बहुत दूर पड़ जाती है, बिचारी खिमुली का बड़ा परिवार है। खैर, अब के ह्यून<sup>३</sup> की फसल तो हमने बो ही दी है, मगर चौमास से तू कमा लेगी।...”

---

१. अनैतिक गर्भ।

२. स्वामिनियाँ।

३. शरद-ऋतु।

खड़कसींग नाथू होलदार के व्यंग्य से तिलमिलाकर, वापस लौटा, तो उसे बार-बार नाथू होलदार का वाक्य 'पहले अपना थूक सँभाल, खड़कुवा !' अपने होंठों के आस-पास झूसिया कीड़े<sup>१</sup> की तरह और कानों के भीतर कनसांगली की तरह रँगता-सा अनुभव हुआ और उसके होंठों से क्रोध के मारे लार टपकने लगी, जिसे कुरते की आस्तीन से पोंछता हुआ, वह थोकदार के पटाँगण की ओर बढ़ गया ।

आनसींग बोले—“नाथू, बखत पड़ने पर डूमों को भी 'राम-राम' कहना पड़ता है । इस समय हमारी अँगुली दबी हुई है, दो पाटों के बीच में । भलाई किसमें है अँगुली की, पाटों से लड़ने-भिड़ने में, कि चुपचाप उनके बीच से बाहर निकल आने में ?....”

“लेकिन, एक तरीका यह भी तो हो सकता है, बौज्यू, कि जिन पाटों के बीच में अपनी अँगुली के पिचक जाने का खतरा हो, उन दो पाटों के बीच में—ठीक अपनी अँगुली की साईज का—एक पाथर का टुकड़ा डाल देना चाहिए ... और जैसे ही पाटों के जोर से घूमने का टैम नजीक आए, अपनी अँगुली को फुर्ती और होशियारी के साथ में बाहर खींच लेना चाहिए—और तब क्या होगा, बौज्यू ?”—इतना कहकर, नाथू होलदार प्रश्न-चिह्न की-सी मुद्रा बनाए, आनसींग के एकदम समीप आ गए ।

---

१. एक बारीक बालों वाला कीड़ा, जिसके शरीर पर लगने से बहुत खुजलाहट अनुभव होती है ।

आनसींग की समझ में कुछ नहीं आया, वो एकटक नाथू होलदार को देखते रह गए।

“तब उस टैम इस बात—जिसे आप ‘पौलिटिक्स’ भी कह सकते हैं, कि दुश्मन की फायरी के लिए रेत के बोरे सामने रखकर, खुद मोर्चे के अन्दर छिप जाना—तो इस बात की ‘पोजीशन’ उस टैम यह रहेगी, कि दोनों पाटे पत्थर की अँगुली-नुमा पत्थरी के ऊपर घूमते रह जाएँगे और नतीजा यह हासिल होगा, कि उस पत्थरी अँगुली की दुश्मन की अँगुली की जैसी बनावट देखकर, जब दुश्मन दोनों पाटों को दबाएगा या घुमाएगा, तो पत्थरी अँगुली जो है, वह टूट-टूट कर करक-छरक करके दुश्मन के जिसम पर छरों की तरह लगेगी।...अच्छा, बौज्यू, अब मैं चलता हूँ। मुझे जरा जिबुली की इजा—वो मलबाखली के फतेसींग, जो कि अठार बरस से परदेश जाके लापता है, की घरवाली जिबुली की इजा—से मिलना है।...आप एकदम ‘डौन्ट केयर’ रहें, मैं इकजैक्ट-करैक्ट टैम पर पंचैत में पहुँचता हूँ।...”

नाथू होलदार चले गए, तो जमनसींग की घरवाली—जो घर से आकर, अब तक आँगन के एक कोने में खड़ी थी—ने आनसींग को ‘पैलाग सौरज्यू’ कहा और आनसींग के ‘जी रो ब्वारी’ कहते ही, अन्दर चली गई।...

रमौती जूली को गोद में लिए, उसे दूध-रोटी खिला रही थी। पाँवों के भाँभरों की खुणमुण-खुणमुण सुनकर, दरवाजे की तरफ देखा, तो बड़ी जेठानी को देखकर, अटपटा-सी गई। जैसे बिजली कौंधती है, ठीक ऐसे ही, कोई भी रमौती के पास आता है, तो रमौती को भयास्सू-जैसी<sup>१</sup> होती है, कि मेरे इस पातक के बारे में चर्चा करने ही आया है।...

बचुली ने ब्वारी कहा, तो उठकर, पाँव छुए—“पैलाग दिदी !”

“जी रो<sup>२</sup>, ” कहते हुए, बचुली ने जूली की भुक्की<sup>३</sup> ली—“दूध-रोटी खा रही है यह पूसी।”

१. भसकन-जैसी।

२. जीती रहो।

३. चुम्बन।

बचुली ने घर पर ही सोच लिया था, कि रमौती शरम के मारे दुःख-संतप अनुभव करेगी, कुछ भी पूछने पर। इसलिए, वह ऐसे प्यार-भरे ढंग से पूछना चाहती थी, कि रमौती को विशेष वेदना न हो।

रमौती अपनी विकलता छिपाने के लिए, धीमे स्वर में, बोली—“दिदी, तुम बैठो जरा। सौरज्यू पटाँगण में खड़े हैं। मैं उन्हें तमाखू भर के दे आती हूँ।”

इतना कहकर, बाहर को चली ही थी, कि ध्यान आया—सौरज्यू से किस मुँह से बात करेगी, या नजर मिलाएगी ?... थोड़ा ही आगे बढ़कर, पलट गई—“अरे, मैं भी हाथ में ही हर चीज भूल जाती हूँ। सौरज्यू को तो अभी-अभी माफ़िल दिदी\* चिलम भरके दे आई थीं।”

बचुली ने जूली को गोद में ले लिया था।

उसे लग रहा था, कि उसके मन में पूरे परिवार की अप्रतिष्ठा के प्रश्न से एक अननुभूत-आत्मीयता का अंकुर आज अनायास ही उग आया है।

रमौती चहा बनाने लगी बचुली के लिए। इस बीच जूली को खेल लगाते-लगाते बचुली सोचती रही, कि उसे बात कैसे छेड़नी चाहिए।...

रमौती ने चूल्हे से ही तिरलोक को आवाज दी—“और खाएगा, बेटे, रोटी ?” तिरलोक ‘नो आन्टी’ कहकर, दूध-भरा मुँह छलछलाता उठ गया—“मैं बूबू के पास जाऊँगा, आन्टी !”

चहा का गिलास लेकर, रमौती बचुली के समीप आई—“दिदी, चहा पी लो।”

“द, ब्वारी, चहा तो रात-दिन का लगा ही रहता है।”—कहकर बचुली ने चहा का गिलास हाथ में पकड़ा और बोली—“बिपत्ति पड़ने का कोई टैम नहीं होता मनुष्य पर। विपरीत बुद्धि कह रखा है। किसी पराए से कहनी होती यह बात, तो काफी घुमा-फिरा के कहनी पड़ती। तू-मैं तो इस एक घर की दो नाक हैं, जो भी कटी, उसी की थू-थू है। तू तो जानती ही है, ब्वारी, मेरा स्वभाव जरा खरा-खरा है।”

---

४. मँफ़ली जेठानी।

रमौती को सहमते-सकुचाते देखकर, बचुली ने चहा का गिलास जमीन पर रख दिया और उसके सिर पर हाथ फेरती बोली—“जहाँ तक मेरा सवाल है, मेरा दिल कहता है, कि ‘शहद से टकरा गई, जीभ काबू में नहीं रही—चिफल पाथर पर पड़ गया, पाँव बश में नहीं रहा ।’ वाली हो गई है । ऐसा भी नहीं कह सकती हूँ, कि तूने कोई पाप नहीं किया । बिगैर बुरी नियत के गू में मूख कोई नहीं डालता ।...मगर, जैसी अफवा लोग-बाग फैला रहे हैं, उसकी टक्कर में यह पाप कुछ भी नहीं है । अगर कि भगवान की मिहरबानी से नाथूसींग के गुनेगार होने की बात झूठ निकले !...”

रमौती चुप हो रही, तो बचुली फिर बोली—“सफेद-काले को तो या तू ही जान सकती है, या वह ऊपर वाला ही । मगर, गौं वाले जिस बात को ‘स्यूड़ से सावल-पिहल से परबत<sup>१</sup>’ बनाकर बारहाट<sup>२</sup> की पंचेत में पेश कर रहे हैं, खुदानखास्ता वह सही साबित हो गई, तो महर-खानदान की नाक के लिए, ‘इज्जत की कट गई, चमड़े की रह गई’, हो जाएगी ।”

“दि-दी-दी...” रमौती के थरथराते होंठों से निकला और वह बचुली की छाती से लग गई ।

“तू मेरी बेटी है, तू मेरी पोथी है, रे !” कहते हुए, बचुली ने रमौती को छाती से कसकर चिपका लिया—“ब्वारी, सिर्फ तू इतना बता दे, कि नाथूसींग का कसूर तो नहीं है—और है, तो किसका है—बस ! जैसा कि मेरा बर्म<sup>३</sup> भी कह ही रहा है, अगर नाथूसींग की बात झूठ है, तो तू बता, और किसी की परवा मत कर । आनसींग सौरज्यू या नाथूसींग भी तुझे घर में ठौर नहीं दें, तो तेरे अंगूठे से । मेरे यहाँ आ जाना । चार बीज अनाज-पानी के मेरे भखारों<sup>४</sup> में भी रहते ही हैं ।...”

बचुली के पैरों को छूती हुई, रमौती सिसकते-सिसकते बोली—“दिदी, तुम्हारे पाँवों की मिट्टी की शपथ है, रुदरसींग और उसकी इजाने, गंगोतरीज्यू

१. ‘सुई से सब्बल और तिनके से पहाड़’—एक मुहावरा ।

२. बारह पंचितर्यो ।

३. ब्रह्म ।

४. अन्न रखने की बड़ी-बड़ी काष्ठ-मंजूषाएँ ।

ने—सबने झूठी बात फैलाई है। वैसे गुनहगार तो हैं, दिदी !...मगर, जहाँ-तक ज्याठज्यू का नाम लिया जाता है, वो मेरे लिए बौज्यू के स्थान पर हैं, दिदी !”

“बस बस, ब्वारी ! मेरे सिर का बोझ हलका कर दिया तूने। एकाएकी नाथूसींग ऐसा गलत काम नहीं कर सकते, मुझको भी इसका यकीन था। बकने दो गाँवों के चोट्टों को। यह सब थोकदार गुमानसींग की कारस्तनी है।”—बचुली हथेलियाँ पीटती बोली—“अरे मेरा देवर नाथूसींग उसकी चेली को जोर-जबरदस्ती से उठा के तो कहीं ले नहीं गया। ‘दिल हो गया दीवाना, तो देखता रह गया जमाना’—जैसी करके वही मेरे देवर नाथूसींग पर मोहित हो गई और आज के दिन मौज कर रही है।...अच्छा, ब्वारी, तुझे मेरी कसम है, अब जरा-सा यह भी बता दे, कि किसके साथ फिसल पड़ी थी ?”

रतीती लज्जा और व्यथा से कुलमुला उठी। फिर यह सोच कर, कि जीवित रहना है, तो किसी-न-किसी दिन बताना ही पड़ेगा—बचुली के कंधे पर सिर रख कर, रोती-रोती, बोली—“दिदी, पलटन से उनके एक-दो पास-पत्र आए थे। वो दिगोली वाले चिट्ठिरसैन पीताम्बर पानेज्यू उन्हें लाते थे... उन्होंने ही...दिदी...दि...दी...”

“अरे, पगली, चुप। ऐसे कलेजा फाड़-फाड़ के क्या रोती है। अरे, पीताम्बर तो पाने ठहरा, दिवान खानदान ठहरा। कही से ‘डुमटाव’<sup>१</sup> तो नहीं लगाया।” बचुली कंधे पर ही रमौती के कपोलों को थपथपाती बोली—“अच्छा, ब्वारी, अब मैं चलूँगी। फिकर मत कर। जवानी में जरा कदम गलत पड़ गया, पड़ गया। किसी का खून तो नहीं किया ? रहते खसमों के हजार छोटे करम करने वालों की कमी नहीं है आजकल।...न रो, ब्वारी ! मैं तेरे अदिन अपने आँचल ले जाऊँगी। उठ, घर का काम कर। सौरज्यू ने ठीक किया, जो तेरे हाथों का पकाया खाने में उजरदारी नहीं की किसी किसम की। अरे, तू तो नर-नारी है। जिस गोरू<sup>२</sup> के शरीर में तैंतीस करोड़ देवताओं का निवास

१. किसी डोम से अनैतिक गर्भ रहना।

२. गाय।

बताया गया है, वह भी कभी—कभी गू में मुँह डाल देती है।...अच्छा, तू बंठ, मैं चलूँगी। भूपाल के बौज्यू को भी, शायद, पंचैत में आना पड़े।... और, देख, पंचैत में तुझे बुलाएँ, तो घबराना मत। इस समय खानदान की इज्जत-आबरू का सवाल है।...चंदरा और साबुलि खेतों में गई हैं ?”

रमौती ने ‘हाँ’ की और बचुली दरवाजे की ओर बढ़ गई।...

रुदरसींग देवराम को साथ लेकर घर-घर हो आया था।

ऊडलगों की दोनों तल्ली-मल्ली बाखलियों के चलते-फिरते लोगों के हाथ पड़ोस के डुँगरी, बज्योली, पेटशाल, शील, डालाकोट, चनोली, सिमखल्या, जोग्युड़, कुमौली और बाड़ेछीना तक दुबारा खबर पहुँचने की व्यवस्था हो गई थी, कि जरा डुँगरी जा ही रहे हो, खिमसींग हो, तो वहाँ इस पंचैत की खबर पहुँचा ही देना। वहाँ से पदमसींग डालकोट जाने वाला है, चनोली वह पहुँचा देगा।

पहाड़ में यों हाथों-हाथ संदेश-समाचार कहाँ-के-कहाँ पहुँच जाते हैं।...

रुदरसींग की माँ औरतों में प्रचार कर रही थी, कि ‘अरे, पंचैत के टैम पर जरा हाजिर हो जाना। ये दातुली-कुटली के धंधे तो जिदगानी-भर लगे ही रहते हैं। जरा दो-चार घंटे टैम चार अच्छी-बुरी बातें कहने-सुनने और चार भले लोगों के बीच में बैठने में गुजर जाएँ, तो इसमें खुशकिसमती समझनी चाहिए। वैसे भी यह हम सब औरतों की आबरू का सवाल उठा हुआ है। आज रमौती छोरी पर बाध पड़ा है, तो कल मुझ पर और परसों तुम पर...’

चूँकि रुदरसींग की माँ की उम्र ५०-५५ के करीब पहुँच गई थी, इसलिए ‘मुझपर’ कहते हुए, उसे एक झिझक-सी हुई, पर दूसरे ही क्षण उसने अपनी बात सँभाल ली—“बाध के मुख को खून लग गया, तो वह फिर बकरियों की उमर नहीं देखता है।”.....

रुदरसींग, अपना काम पूरा कर के, घर लौटा, तो सीधे अपनी घरवाली उडुली के पास गया—“हँवे, फिर मैं जा रहा हूँ। पंचैत शुरू हो गई होगी। तू इजा के साथ नथुली ब्वारी को भी ले आना पंचैत में। तुम लोगों के बैठने का बंदोबस्त मैंने अलग से कर रखा है। थोकदार ज्यू की जो मोटी दरी लाल-पीले डोरोंवाली उनके नरैण के नामकन के दिन बिछी थी, आज भी

बिछाई गई है। उनके बगल में दो पुरानी दरियों को छोड़के, घरके दरवाजे की तरफ को, एक तीसरी नई दरी बिछाई गई है। उसी पर तुम लोग बैठना।...जरा, एक गिलास पानी ले आ तो पीने को।...”

उदुली पानी लेकर, लौटी। पानी को एक ही साँस में पीकर, पानी-चूते होंठों से फुसफुसा कर, रुदरसींग बोला—“हँवे, समझ तो तू गई ही होगी?... कि क्या-क्या कहना है?... फिर भी एक खास पौइंट रह गया है। थोकदार ज्यू ने उसके लिए विशेष बिनती कर रखी है, कि जब पंचत में रमोती वाला केस चल रहा होवे, ठीक उसी समय के बीच में, उदुली ब्वारी खड़ी हो जावे— और यह कहे, कि ‘परसों मैं पानी भरने को नौले जा रही थी, तो नाथू होलदार ने पहले मुझको पत्थर मारा, जो मेरे फौले<sup>१</sup> पर लगा।... (देख, फौला बीच में से पिचकाके मैंने ठीक कर दिया है, पंचों को उसे दिखाने के लिए जरूर ले जाना है।)... मैंने यह सोचकर, कि पापी के मुख कौन लगे, जल्दी-जल्दी नौल जाने को कदम बढ़ाये। फिर नाथू होलदार दौड़कर सामने आया और, एक गोले-मिसरी की पुंतरी देकर, बोला, कि अगर तू मेरी इच्छा सम्पूरण कर दे, तो फिर रोज खिलाया करूँगा।... (एक फूलदार रेशमी रुमाल में गोला-मिसरी बाँध के फौले के अंदर रखा हुआ है। पंचत लौटने पर वह गोला-मिसरी तुम दोनों देवरानी-जिठानियाँ खा लेना।)... मैंने कहा, ‘थू पापी, ठैर !’ और कमर से दातुली निकाल कर चीरने को दौड़ी, तो...”

“हँ हो, एक बात बीच में मैं भी कहना चाहती हूँ।”—उदुली बोली— ‘इतने पाप-परपंच रचके, तुमको क्या हाँसिल होने वाला है ? आदमी को पहले अपने घर का पलस्तर ठीक करना चाहिए, फिर औरों के घर की दरारों पर नजर डालनी चाहिए। दूसरे के गन पादने पर भी, नाक एकदम से बंद करके—ऊँ-हँ-हँ करते हुए—‘आदन-पादन गन की सादन, खैर-खमार-पदुवा-चमार।’ और अपनी सुरयाल के गू से भी बेखबर रहना—यह कहाँ की इन्साफी है?... देखो, हो ! फौले के अंदर की गोला-मिसरी को तो नथुली ब्वारी और मैंने पहले ही खा लिया है। फौला पानी से भरके रख दिया है।...’

और जहाँ तक पंचैत में चार बात बोलने का सवाल है, हमें अपनी ऊपर-होती उमर भी देख लेनी चाहिए। जहाँ तक हो सके, दूसरों की भलाई करना। चोट खाए हुए को मारना, भोर-पाप है। मैं तो पंचैत में कच्चा गू नहीं खा सकती।....”

“बस, बस, रहने दे अपना गुमान और इन्साफ।”—रुदरसींग ने एक भापड़ कस दिया—“साली, पैर की जूती सिर की टोपी की तरह उछलती-कूदती है ? दूंगा भेलों में चार लात, तो ‘ओ बबो,’ करती हुकम अदा करेगी। बदजात औरत कहीं की।...अरे, मैं तो यों ही तेरा अंत लेने की कोशिश कर रहा था...मगर, लगता है, उस पलटनिया से तेरी सरबट जरूर है !...”

“जो खुद सटबटिया-सतजुठिया होता है, उसे सब अपने ही जैसे नजर आते हैं।” उदुली गुस्से से बोली।

“हट, तेरी कमजात के खानदान को हैजा ले जाए, धो-पोंछ के साली, अपने खसम को सटबटुवा-जुठुवा कहती है ?”—कहते हुए रुदरसींग ने उदुली को कसकर एक लात मारी—“खामोश ससुरी, जरा भी जबान आगे हिलाना नहीं।...और बता, ससुरी, फोंले का गोला-मिसरी क्यों खा गई ?...तेरे बाप धरमसींग ने पारसल भेज रखा था क्या ? ऐसी चटुवा जिवड़ी है, तो जा उस नथुवा पलटनिया के ही घरबार, वहीं पचकाना खूब गू-जैसे बिलेंती—बिस्कुट !...अरे, पचकाना क्या ससुरी तू पचकाती ही होगी ? बिना किसी यारी के कोई औरत—अपने धरम के स्वामी का मुँह मारके—पराए मरद की पैरवी कर सकती है ?”

इसके बाद, दो-बार और चुनी हुई गालियाँ देने के बाद, कि ‘ठैर जा, रंडी-पातर ! लौटने दे मुझको पंचैत से घर। तेरा जो काला मूख दही-भौसा चुपोड़ के मैंने नहीं किया, तो मैं भी अपने बाप का बेटा नहीं। ठैर, ससुरी, बिगैर टिकट, बिगैर बस्तुर एकदम चिलमनंगी बनाके तुझे यहाँ से रवाना करने वाला हूँ।”—और, उदुली को दो-चार लात और मारकर, रुदरसींग बाहर आ गया और माँ से—जो आँगन में पहुँचकर, बेटे-बहू का भगड़ना सुनकर, अंदर आने की जल्दी में थी—बोला, “इजा, पंचैत में तू सिर्फ नथुली ब्वारी को लेकर चली आना।”

“ज्या ठबोज्यू हो”, खड़कसिंह थोकदार के पास लौटते ही बोला—  
 “नाथू पलटनिया को बुलाने गया, तो वह भोटिया कुकुर की तरह  
 भू-भू कर रहा है। मैंने कहा, कि पंचैत का करैकट टैम हो गया है, तो अपनी  
 टिपुलिया बैस्टैण्ड घड़ी पर हाथ फिराकर बोला—‘छोटी सुई नौ और बड़ी  
 सुई सात पर है। हट्ट, तू और तेरी घड़ी दोनों की चिता लग जाए लखुड़यार  
 के शमशान में।’...बोलता क्या है, ज्याठबोज्यू, कि थोकदार को बोल  
 जरा, अपनी घड़ी कचहरी बजार के घड़ीसाज हबीबुल्ला-अमानुल्ला ब्रदर्सों से  
 ठीक करा लेवें।”.....

“पहले तो मुझे उसकी मरम्मत करनी है।” थोकदार फुसफुसाकर,  
 बोले—“देख, रे खड़कुवा, करने को तो मैं उसको मार लट्ठ-ही-लट्ठों के हड्डी-  
 पसली-साबुत करने का बंदोबस्त भी कर सकता था। मगर, मैं जानता हूँ,  
 लट्ठों से वह मर भले ही जाए, पर गौं नहीं छोड़ सकता। दूसरे गौं के लोगों  
 में ऐसी हिम्मत भी कम ही है। फिर वह पलटनिया ठहरा, उसको मारने में  
 गवरमेंट भी यकसन ले सकती है। तो, खैर, तू खरसींग को आवाज  
 मार आया ? .....”

प्रश्न पूछने के साथ ही, थोकदार ने आगे बढ़कर, पंच-चबूतरे पर रखी  
 अपनी घड़ी पर नजर डाली—नौ बजकर, चालीस मिनट हुए थे। दरअसल  
 थोकदार ने, साढ़े दस के बदले, साढ़े नौ का अलार्म लगा दिया था। खड़कसींग  
 भी घड़ी देखने लगा, तो जल्दी से बोले—“अलार्म लगाने में जरा जल्दी हो  
 गई। मगर, करैकट टैम इस समय साढ़े नौ बज के दस मिनटों का है।

पलटनिया की घड़ी पाँच मिनट फास्ट मालूम पड़ती है।...रुदरसींग आ रहा है जल्दी ?”

“मैं तो, ज्याठबीज्यू, उस पलटनिया के बचनों से चोट खाकर, सीधे आपके पास चला आया हूँ।” खड़कसींग अपने होंठों को अकारण ही आस्तीन से पोंछते हुए बोला।

“खैर, तू जा अब। घर जाके कुरता बदल आ। तूने भी पंच-सरपंचों के सामने गवाही पर उतरना है।” थोकदार बोले।

खड़कसींग के जाने के बाद, थोकदार ने बुद्धिबल्लभज्यू को आवाज दी—  
“गुरु, चहा पिलाओ सबको। दो बाल्टी दूध खड़कुवा और रुदरिया भतीजों के यहाँ से भी आया हुआ है। उसको भी चहा में इस्तेमाल के वास्ते ले लो।... और, सुनो, रे हयातसींग, तुम लोग चिलम चालू कर दो।.....”

इसके बाद पंचों की ओर मुख कर, थोकदार बोले—“अभी आप लोग सब गवाही रहें। भतीजे खड़कुवा को मैं तीन बार नाथू हीलदार और आनसींग के पास भेज चुका हूँ, कि पंचैत में हाजिर हो जाओ। मगर, वह पलटनिया क्या जाने, कि पंच-सरपंचों की ताकत क्या होती है? खड़कुवा भतीजे के हाथ जवाब क्या भेजा है, कि हमों की पंचैत को मैं मारता हूँ अपना पलटनिया वूँट।...जब कि यहाँ पर हमारे बड़े-बड़े महामान्यवर रहीस लोग बैठे हुए हैं, जैसे कि हमारे दिगोली वाले दीवान रहीस दिगोली वाले लछमदत्तज्यू, और जिनको सब लोगों की जँजैकार से सरपंच चुना गया है, वो सरपंच घुमीली वाले लछमदत्तज्यू...खैर मुझे कुछ विशेष कहना नहीं है। पर, पंच लोगों को उस आदमी की खतरनाकी और बदजबानी से होशियार कर देना मेरा फर्ज है। अब मैं अपने समधी मान्यवर हरबंशसींग जी मोटर मालिक अलमोड़ा वालों से यह प्रार्थना करता हूँ, कि वो इस केस के ऊपर सबके सामने एक बार फिर से रोशनी डालें, जिससे इन्साफ हो सके। तब तक नाथू पलटनिया हाजिर हो गया, तो ठीक ही है, नहीं तो पंच-सरपंच हमारे सारे गौ-घरों की बहू-बेटियों की इज्जत आबरू का खयाल रखते हुए—जैसा भी ठीक समझें, हमारे हक में इन्साफ दे दें। उसके बाद पंचैत बरखास्त कर दी जाएगी।...उठो हो, समधी.....”

काली सर्ज के बंद गले के कोट को चटकदार लाल रेशमी रुमाल से सीने के आस-पास भाड़ते हुए, ठाकुर हरवंशसींग उठे और, जेबघड़ी की चाँदी की जंजीर की कड़ियों को पूजा की माला के रुद्राक्षों की तरह घुमाते-सरकाते हुए, बोले—“मेरे महामान्यवर सरपंचजी और यहाँ उनके साथ बैठे हुए सभी पंच लोगों, तथा नीचे वाली मोटी दरी पर बैठे हुए गाँव के खास-खास लोगों और सामने बैठे हुए भाइयों, माताओं और बहनों—मुझे कुछ खास लेक्चर देने का अभ्यास नहीं है, वैसे काँग्रेस-पार्टी, जो कि इस समय हमारे देश की हिंदू-कौम की आजादी के लिए सारे हिंदुस्तान-भर में खादी और तिरंगा आन्दोलन कर रही है—यहाँ मैं तिरंगे-आन्दोलन के बारे में आप लोगों को कुछ बातें समझा दूँ। इसके तीन लक्ष हैं, यानी हमारे देश की पार्टी, काँग्रेस पार्टी की तीन माँगें हैं। नंबर एक, हम लोगों को हमेशा खदर के कपड़े पहनने चाहिए—मेरा चूड़ीदार पैजामा खदर का ही है, चूँकि वात-पित्त का मरीज हूँ, इसलिए मजबूरी से कोट गरम कपड़े का पहनना पड़ता है, पर मंहगा कितना है ? सोल रुपये गज ! नंबर दो, ‘अंग्रेजो भारत छोड़ो’ और नंबर तीन माँग है—‘राजगद्दी हमारी हो।’...तो काँग्रेस-पार्टी के सिलसिले में मैं अपने अलमोड़ा के मशहूर देशभक्त लीडर नरगोविन्द संत जी के साथ कई इलाकों का चक्कर काट के आया हूँ और आजादी के आन्दोलन को आगे बढ़ाया है। इस सिलसिले में एक बार जेल जाने की भी नौबत आ गई थी। इसके अलावा, यह भी मेरे और मेरे देश की काँग्रेस-पार्टी के लिए सौभाग्य की बात है, कि मैं, इसी साल से काँग्रेस-पार्टी का स्थायी मेम्बर बन गया हूँ।...तो मेरे कहने का मतलब यह है, कि जब काँग्रेस-पार्टी की मीटिंगों के सिलसिले में आजादी—हमारे देश, हमारे कौम की आजादी—के बारे में बोलने का सवाल उठा है, थोड़ा-बहुत बोलना ही पड़ा है, कि मेरे देशवासियों, आज हमारी छाती पर घुटने टेककर अंगरेज लोग हमको गुलाम बनाकर राज कर रहे हैं।...हमको गुलामी की जंजीरों को तोड़ फेंकना है। बोलो सब एक आवाज से, कि काँग्रेस पार्टी.....”

हरवंशसींग ने दोनों हाथ यों जोश के साथ ऊपर उठा लिये थे, कि बहुत से लोगों के मुँह से अपने-आप ही निकल पड़ा—“जिन्दावाद !”

ठाकुर हरबंशसिंग और जोश में आ गए और उन्होंने जेब में लगे तिरंगे झण्डे के 'बैज' को निकालकर, हाथ में ले लिया—

“महात्मा गान्धी...”

“जिन्दाबाद !” लोगों में भी जोश आ गया ।

“बोलो, राष्ट्रपिताजी महात्मा गान्धी की...”

“जै !”

“पंडित जवाहरलाल नेहरू की ...”

“जै !”

“नेता सुभाषचन्द्र बोस की ...”

“जै !”

“हमारे अलमोड़े के महान् कांग्रेस लीडर, यहीं करीब के ही गाँव गोल्लखेत के महामान्यवर पंडित नरगोबिन्द ज्यू की...”

“जै !”

लोगों की 'जै-जै' के बीच से थोकदार गुमानसिंग की 'समधी' सुनाई पड़ी, हरबंशसिंग को, तो उठे हुए हाथों को नीचे गिराकर, बोले—“उपस्थित सज्जनों और जनता-जनार्दनों, आज हम लोग यहाँ पर कांग्रेस-पार्टी की चर्चा करने नहीं, बल्कि आपके गाँव के मान्यवर थोकदार—जो कि मेरे समधी भी हैं—ठाकुर गुमानसिंग के केसों पर विचार करने के लिए एक जगह पर यहाँ इकट्ठा हुए हैं। जैसा कि मेरे समधी जी ने मुझे शुरू से आखीर तक समझाया है, मैं आप सब लोगों—महामान्यवर क्या नाम श्री लछमदत्त ज्यू घुमौली बाले सरपंच और मान्यवर और सभी पंचों—के सामने रखता हूँ। इस समय मेरे पास पंचैत में रखने के लिए तीन केस हैं, जिन्हें आप सब लोग ध्यान-पूर्वक सुनें। केस नंबर एक—यह सबसे बड़ा केस है, जिसके बारे में मैं अब इतनी माताओं-बहनों के सामने विशेष रूप से कुछ नहीं कह सकता। यह आप लोगों को बताया ही जा चुका है, कि कैसे इसी गाँव के एक गद्धार—जिसका नाम नाथू हौलदार बताया जाता है और हमारे समधी के कहने के मुताबिक जिसके पास एक दुनाली बन्दूक भी है और जो हमारे देश को गुलाम बनाने वाली कौम की ताबे-उम्र गुलामी करके पिन्सिन लेकर



पार्टी में भरती भी नहीं हुआ था—वह शस्त्र नाथू हौलदार छुट्टियों में घर आता है। और किसम-किसम के तरीकों से हमारे समधी जी की विवाहिता लड़की जिसकी बहन नन्दुली मेरे बेटे नरबंशींग को ब्याही गई है—तो उसको फँसाने की कोशिशें करता है और एक दिन साबुली—घर से ससुराल अपने असली पति के यहाँ जाने के समय लापता हो के—उस शस्त्र के साथ भाग जाती है और...”

“यहाँ पर समधी कुछ गलती कर गए हैं कहने में, मैं इस ओर माननीय पंच-सरपंचों का ध्यान खीचना चाहता हूँ।” कहते हुए, थोकदार गुमानसींग उठकर खड़े हो गए—“केस दरअसल यों है, कि नाथू मेरी बेटी साबुलि को रास्ते में से यह कहकर उड़ा ले गया, कि अगर जरा भी इन्कार करेगी, तो गोली से उड़ा दूँगा। और—समधी आप जरा आराम करिए। अरे, बुद्धिबल्लभ ज्यू, समधी को एक गिलास गरम चहा लाके दो—मैं अब तीसरे केस को पंचों की खिदमत में खुद ही रखता हूँ। केस नंबर तीन हमारे असली जवाईँ, जिनके चरणों को हमने कन्यादान के दिन गंगाजल का अर्घ्य देकर धोया है, लाला लछमीनारायण हैं, जो कि रुदरपुर के एक बहुत बड़े कपड़े के थोक और फुटकर व्यापारी हैं और काठगोदाम-हलद्वानी में भी उनकी एक-दो थोक की दुकानें आढ़ती चलती हैं। तो चार पंगितों में कहना इतना खुलासा करना है, कि उनको हमारी सबसे छोटी बेटी साबुली ब्याही गई थी। आज से चार साल पहले, जब घर में बरसों की नामुरादी के बाद बेटे नरैण का जन्म हुआ, उसको नामकन के न्यौते में बुलाया गया था। पंच-सरपंच मेरी फरियाद ध्यानपूर्वक सुनें। उस समय हमारी बेटी साबुली जवाईँ लछमीनारायण अपने घरम-पति से पेटाली थी। उन्हीं दिनों में पापी यही शस्त्र—जिमके बारे में समधी जी ने भी कई बातों का खुलासा कर दिया है—तो यह बदमाश पलटनिया यहाँ आया था और ज्यादा लम्बा इस केस को खीचना बेकार है। चार आँखों में, मैंने अपने घर का आदमी समझ के इस शस्त्र साँप के जहरीले बच्चे को भी अपने सात-सौ-चार नम्बर के आउन ठेले में बेटी साबुली के साथ सौरास रुदरपुर को भेज दिया। जिस समय यह शस्त्र यहाँ से चला गया था, दुनाली बंदूक बकायदा कारतूस भरी हुई इसके साथ थी। और इसी से अंदाज

लगाया जा सकता है, कि यह गुंडा कैसी जोर-जबरदस्ती से हमारी बेटी साबुली को अपने साथ अपनी पलटन में भगा ले गया। बेटी साबुली के पेटाली होने की बात मैं कह चुका हूँ। वहाँ से चार महीने बाद इस बदमाश शूरा की चिट्ठी आई, कि साबुली बेटी को बेठा हुआ है। इसके बाद—वह दिन था, आज का दिन है—इस जबरदस्त शूरा ने हमारे नाती तिरलोकिया को जबरनी से अपने कब्जे-ताबे में कर रखा है। नाती तिरलोकिया पर पूरा-पूरा हक हमारे असली और धरम के जवाईँ लाला लछमीनारायण का है। अब इस मामले को पंच-सरपंच लोग इस तरह से शुरू से लें—केस नम्बर एक, नाथू पलटनिया पर अपनी विधवा ब्वारी के साथ बदफेजी करना और उसका हमल गिरवाने की कोशिश करना, जिसका कि रुदरसींग चश्मदीद गवाह है। केस नम्बर दो—बेटी साबुलीको बंदूक से उड़ाने की धमकीदेकर भगा ले जाना, जिसका चश्मदीद गवाह भाई बीरसींग है, जो हमारे सात-सौ-चार नम्बर ठेले का डिराइवर है और साथ में किलीनर दिवनिया भी इस गुनहगारी की चश्मदीद गवाही देगा अभी। आखिरी और नम्बर तीन केस है—नाती तिरलोकिया को और बेटी साबुली को जबरनी से अपने ताबे में करके रखना। तो इन तीनों केसों में हमारे सारे गों—इलाके के लिए इन्साफ माँगते हुए, मैं नीचे बैठता हूँ। पंचत की असली कारवाई शुरू करने के लिए नाथू हौलदार का और आनसींग का इन्तजार किया जाए। मैं चौथी दफा आदमी भेजता हूँ। अरे, ओ तरुवा। जा नाती; जरा देखके आ तो दोनों बाप-बेटे घर में हैं, कि नहीं ?”

तरुवा इस महत्व-दान से प्रफुल्ल होकर, दीड़ा-दीड़ा गया और दीड़ा-दीड़ा लौट आया—“थोकदार बूबू, अनू बूबू तो पटाँगण में हेरा-फेरी कह रहे हैं, मगर नाथू का पता नहीं है।”

तो कहीं बदनामी और लांछनों के भय से भाग तो नहीं गया ?...थोकदार के मस्तिष्क में यह अनुमान उनके सात-सौ-चार नम्बर के ठेले से भी चौगुनी-अठगुनी रफतार से आया और उनकी आँखों में एक चमक-सी आ गई, जैसी पीछा करते हुए शिकारी के लौट जाने पर खरगोश की आँखों में आती है। उन्होंने सोचा, एक बार अगर नाथू हौलदार बदनामी से डरके भाग गया, तो दुबारा गाँव में आएगा नहीं। उन्हें लगा, उनकी प्रतिशोधाग्नि की लपटों के बीच-बीच से

उठ रहा काला धुआँ छूट रहा है। पंच-चबूतरे की ओर पलटकर, सोत्साह बोले—“गुनहेगार शस्त्र नाथू होलदार के पंचैत के सामने आने के लक्षण कम हैं। ऐसे में—जैसे में कि मान लिया जाए गुनहेगार शस्त्र नहीं हाजिर होता है—मान्यवर पंचों और सरपंच घुमौली वाले श्री लछमदत्तज्यू को फैसला करके सुना देने का पूरा-पूरा हक रहेगा। मैं खड़कुवा की इजा के आने की इंतजारी में हूँ, उसके आने पर—गुनहेगार के बदले—गुनहेगारी के असली सबूत याने कि रमौती जिसकेसाथ घोर पाप-परपंच हुआ है, उस अभागिनी औरत को पंचैत में उपस्थित करने की कोशिश करूँगा। उस पर पंच-सरपंच लोग दया कर सकते हैं। मगर, नाती तिरलोक्रिया के समेत बेटी साबुली को हमारे ताबे में कर देना, यह सरपंच साहब का फरज है। अब मैं सरपंच मान्यवर लछमदत्तज्यू से कहूँगा, कि वो पंचैत की कारवाई शुरू करें और.....”

थोकदार धारा-प्रवाह बोले ही जा रहे थे, कि कहीं एक कोने से नाथू होलदार की आवाज सुनाई पड़ी—‘जिबुली की इजा, तुम यहाँ पर बैठो। बिल्कुल बेफिकर होकर रहना। मैं जरा बौज्यू को साथ लेके आता हूँ पंचैत में। और सरपंच-पंचों से यह मेरी अप्लीकेशन है, कि पंचैत के करैक्ट टैम ‘टिनेन्ड-हार्फनोर’ यानी साढ़े दस में अभी सात मिनट बाकी हैं। तब तक के लिए केस कैंसिल रहे।...”

**ज**मनसींग की मनस्थिति कुछ विचित्र हो रही थी ।

अपने छोटे भाई मोहनसींग और बहू रमौती से—पूरे परिवार से न्यारा रहने के कारण—आत्मीयता तो थी ही । रमौती के प्रति उसे एक प्रकार की सहानुभूति-सी हो रही थी, कि देखो, छोरी कितनी अभागी है ?

मगर, नाथू होलदार के लिए हृदय में अदम्य-क्रोध भी उपज रहा था । मन हो रहा था, कि तेजी से जाए और अपने लीसा निकालने वाले तेज बसूले से नाथू होलदार का सिर फोड़ आए, मगर इस समय समस्या यह थी, कि बेचारे आनसींग पर यों ही पर्वत टूट के गिरा हुआ है, ऊपर से जमनसींग क्या बच डाले ? एक विधवा बहू पहले से ही घर में थी, तो यह दिन देखना पड़ा—नाथू होलदार के कहीं ठौर—कुठौर चोट बैठ गई गुस्से के अधियारे में, तो दो का श्राप और ढोना पड़ेगा ।

जमनसींग अब तक के जीवन में बिलकुल उतार-चढ़ाव-शून्य आत्मा लिए जीता आया था । भगड़ने से उसे एक वितृष्णा थी । वह एकदम शान्त रहकर जीना पसंद करता था । बचुली के आदेशों पर चलने से उसकी आत्मलीनता और संघर्ष-विरक्ति में कोई व्याघात या व्यवधान नहीं आया था, इसीलिए वह प्रतिरोध-विरोध की प्रवृत्ति से मन को मुक्त रखता था ।

अपने आप में वह पूर्णकाम था । निश्चिन्तता और निर्द्वन्द्वता—उसके सुख-संतोष के ये दो मूल-मंत्र थे । साधारण बातों से तो उसको कोई लगाव ही नहीं रहता था, न उसके ऊपर किसी बात के प्रतिक्रियात्मक-प्रभाव का प्रभुत्व ही स्थापित हो पाता था । मगर, आज सहसा ही उसकी तटस्थ-आत्मा

अपनी धुरी से सरक कर, डोलने लगी थी। उसे ऐसा लग रहा था, जैसे दुनिया-भर का क्रोध सिमटकर, सिर्फ उसके पास जमा हो गया है और वह बचुली के लौटने की व्यग्रता से प्रतीक्षा कर रहा था, ताकि अपने काम पर जंगल चला जाए और लीसा निकालने के लिए चीड़ के पेड़ों में खोप<sup>१</sup> बनाने में बसूले की तेज धार का उपयोग करके, मस्तिष्क के एक बहुत बड़े बवंडर से मुक्ति पा सके।

सामने से बचुली को जल्दी-जल्दी आते देखा, तो जमनसींग बसूले की धार को पथरौटे पर घिसते-घिसते रुक गया। एक दृष्टि बसूले को उलटा कर, उसकी धार पर डाली—सबरे के सूरज की तिरछी किरणों से बसूले की तेज धार बहुत ज्यादा गरम किए गए दूध की मलाई पर उतर आए घी की पत की तरह चमचमा रही थी।... जमनसींग ने बसूले की धार को, पत्थर पर सीधे मारकर, कुंद कर दिया।...

○

○

○

बचुली घर पहुँची, तो जमनसींग भात खाने के लिए धोनी पहनने लगा—“हँवे, तू भात परोस दे। मैं तो नहीं पड़ता किसी जाल-जंजाल में। एक गास भात खाकर, अपना रास्ता पकड़ता हूँ। पेड़ों में खोप लगाए बहुत दिन हो गए हैं।...”

“बस, जिन्दगानी-भर सल्ल<sup>२</sup> के पेड़ों में ही खोप लगाते रहोगे, और किसी चीज को खोप तुमसे लगने वाला भी नहीं है।” बचुली बोली।

“हँवे, और दिनों की हीत<sup>३</sup> मुझसे मत कर। आज मेरी तवियत जरा खराब है। बेकार में जैसी कभी नहीं हुई, आज हो पड़ेगी। बहुत भूख लग गई है। तू हरेक बात में अपनी ही टाँग ऊपर चढ़ाती है। किसी दिन इसी तरह दिमाग ठीक नहीं रहा, तो दूँगा चार लात भेलों में तो फिर जरा ओकात में आ जायेगी। चल, अपना काम कर, भात की थाली ठीक कर और जरा

---

१. चीड़ के पेड़ों से लीसा निकालने के लिए, पेड़ की जड़ से थोड़ा ऊपर, उसके तने में बसूले से झेली-झेलकर एक कोटर-जैसा बनाया जाता है। झिली हुई जगह से लीसा—गोली गोंद की तरह, टीन की पत्ती पर से होते हुए—खोप की जड़ में लगाए गए गमले में गिरता है।

२. चीड़।

३. और दिनों की जैसी अपेक्षा।

पाँव धोने को पानी दे-दे ।” जमनसींग एक साँस में ऐसे कह गया, जैसे जरा-भी क्रम टूटने पर, फिर दुबारा कह पाने का साहस जुटाना मुश्किल हो ।

बचुली को जमनसींग की बातों से एक मुखकर विस्मय-सा हुंसा । उसके होठों पर एक मीठी-सी मुस्कान उभर आई—“अच्छा ! आज बहोड़ को नए सींग फूट रहे हैं ?”

जमनसींग भेंप गया ।

बचुली को अपने व्यंग्य की इस शिथिल-हीन प्रतिक्रिया से क्रोध आ गया । नथुनों को फुला-फुला कर, बोली—“तुम्हारे लम्बे-लम्बे सुँगर के जैसे बालों की मूँछों को देख के, तो घोड़ा भी घास खाना छोड़ देगा, मगर ईश्वर ने तिरजाट मर्दों को मूँछ नहीं, पूँछ देनी चाहिए, जिससे वो अपने नामर्द भेलों पर से मक्खियाँ उड़ाया करे । जोरू को लात और बात—दोनों से अपने काबू में रखने वाले मर्द दूसरों ही होते हैं, तुम जैसे तिरजा ...”

आगे के शब्द, जमनसींग की लात-घूँसों की मार से, बचुली के मुँह में ही रह गए । जमनसींग एक साँस में जितना मार सकता था, लात-घूँसों से मारता ही चला गया । बचुली ‘ओ बबो, ओ इजो,’ चीखती-चिल्लाती, चक्कर खाकर, जमीन पर गिर पड़ी ।...

कुछ क्षण तो जमनसींग चंचल आँखों से बचुली को देखता रहा, फिर अंदर पानी लेने के लिए दौड़ा—“ओ बबा रे, आज हो ही गया है, शायद कल्याण ! मेरा मन तो सबेरे ही भस्-भस्-भस् भस् कर रहा था । ओ बबा रे, अब क्या होगा ? भूपाल की इजा को क्या हो गया ?.....”

पानी का लोटा लेकर जमनसींग हड़बड़ाता-बड़बड़ाता लौटा, तो देखा, बचुली उठकर बैठ गई थी । उसकी आँखों में कुछ चाँदी की नई चवन्नी की तरह चमक रहा था, मगर मुँह बनाकर बोली—“रहने दो, हो, अब रहने दो, अपनी यह सब भलमनसाहती । कुल्हाड़ी से काट के कपड़े की पट्टी बाँधना तो कोई तुमसे सीखे । बड़े निठुर हो, बबा रे, तुम तो ?...हाई-हाई-ओ इजा वे, मेरे हाँट-भाँटों<sup>१</sup> की दाढ़िम की जैसी खटाई बना दी...ओ बबा रे...”

“मैं...मैं...मैं... मैं क्या करूँ, वे ? तू-तू-तूही तो खाली बन्दूक में

१. हड्डियाँ-पसलियाँ ।

बारूद-पर-बारूद भरती चली गई, और अब उलटे मुझी को खुदा के घर की सुना रही है ?” जमनसींग बचुली के सिर को अपने कंधे से लगाकर, उसका मुँह पानी से पोंछने लगा—“आज मैंने पहले ही कहा था, वे, कि मेरी तबियत खराब हो रही है । गलती हो गई । तू कहती है, तो आगे से कभी हाथ की अँगुली से ठपुक भी नहीं लगाऊँगा ।.....” जमनसींग की आँखों में आँसू आ गए ।

“बस हो, तुम तो जरा-सी बात में हाथ-पाँव छोड़ देते हो ।” बचुला, सुख से गदराकर, हँस पड़ी—“बच्चे हो क्या, आज्ञाओ, मेरे फचीने<sup>१</sup> में ? ..... हाई... हाई, पदमसींग की पत्थर लगा, दानसींग की डाढ़<sup>२</sup> इसी को कहते हैं । मार खाई है मैंने और आँखें नौल-जैसी इनकी डबडबाने लगी हैं ।—शिव-शिव...” बचुली ने प्यार से चुलबलाकर, जमनसींग के कपोलों को चूम लिया—“अरे, कौन मरद नहीं मारता, हो, अपनी घरवाली को ? अपने मरद के हाथ की मार से तो औरत का शरीर चुस्त और ठीक रहता है । मगर, हो, आगे से जरा कम-कम मारना ।.....”

थोड़ा विश्राम कर, जमनसींग के कंधे पर से अपना सिर हटाते हुए, बचुली बोली—“हँ, हो, आज तुम लीसा निकालने मत जाओ । अभी कितने बजे का टैम हो गया होगा ? ज्यादा-से-ज्यादा नौ-साढ़े नौ बजे होंगे ? भात भी तुम आके ही खाना, क्योंकि खाने के बाद चलना मुश्किल होता है । मैं एक काम करने को कहती हूँ तुमसे । रमौती ब्वारी से भेंट करके आई हूँ । जैसा कि मैंने पहले ही तुमसे कह दिया था, नाथूसींग एकाएकी ऐसा नहीं कर सकते । बड़ी होशियारी और हमदरदी से मैं रमौती ब्वारी से पूछ के आई हूँ, कि नाथूसींग बेकसूर और पाक-साफ हैं । रमौती ब्वारी के साथ धोखादेही और बदफेली—हरेक किसम के लालच और परपंच सामने रखकर—दिगोली के चिट्ठीरसैन पीताम्बर पाने ने की है । छोरी जवान ठहरी, बहकावे में आ गई होगी । मगर, थोकदार नाथूसींग की गुनहगारी बताकर, हमारे सारे खानदान को बदनाम करना और अपनी बेटी साबुली वाले पुराने मामले का बदला

१. ओवल ।

२. रुदन ।

लेना चाहता है। पंचैत बिठा रहा है चोर ? सरली-साबुली की दफा कहाँ घुस गई थी यह पंचैत ? अरे, इसकी पंचैत का फंचैत तो बरोबर अभी हो सकता है। तुम कपड़े पहनकर, जल्दी से दल की दुकान को जाओ, वहाँ ऊपर जो लीसे का डिब्बा<sup>१</sup> है, वहाँ से आजकल पीताम्बर पाने अपने खच्चरों में लीसे के कन्टर<sup>२</sup> बजार ले जा रहा है। तुम दौड़ते हुए जाओ—या तो वह वहाँ आकर खच्चरों को लाद रहा होगा, या आने ही वाला होगा खच्चरों को लेकर—और उस गुंड बामुण के कान पकड़कर, यहाँ पंचैत में लाओ। नहीं कबूल करे, तो रखो कठुए की बोकिया-जैसी गरदन में बसूला—और फिर, साली जवाँमरदी भी किसी दिन के लिए चाहिए, यदि खानदान की इज्जत के बख्त पर किसी काम नहीं आई तो ?”

जमनसींग ने फुर्ती से उतारे हुए कपड़े पहने और, बसूले को गर्दन के पीछे कुरते के भीतर अड़ाकर, जाने लगा, तो बचुली बोली—“यह काम जरा फुर्ती, जरा जवाँमरदी और जरा होशियारी से करना, हो ! समझ गए क्या ?”

“सब समझ गया हूँ”—जमनसींग उत्साह-पूर्वक बोला—“सब-कुछ, जैसे तूने बताया-समझाया है, ठीक इसी तरह से होगा।”

०

०

०

नाथू होलदार की उपस्थिति और बेफिकरी से थोकदार गुमानसींग स्तम्भित से रह गए। नाथू होलदार के पलायन से हर्ष और संदर्प के जो बादल मन-गगन में चतुर्दिक मँडराने-घड़घड़ाने लगे थे—नाथू होलदार की तेज बातों के तीव्र-बवंडर से धुएँ की गोलाइयों की तरह विच्छिन्न-विलीन हो गए और थोकदार को ऐसा लगा, कि धुआँ उनकी आँखों में एकत्र हो रहा है। बोले—“बुद्धिबल्लभज्यू हो, चहा की तौलियों के नीचे जरा सूखी-सूखी लकड़ियाँ लगाओ। एक तो तमाम चारों ओर घुँयोल ले रही है, दूसरे चहा तुम्हारी ऐसी आ रही है, कि पानी-पिवाई हो रही है। चहा तो वह होती है, कि पीने वाला एक-एक घुटुक भर के पीता जाये, और हर घुटुक के समय गिलास में थोलों<sup>३</sup>

१. गोदाम।

२. कनस्तर।

३. होठों।

से सीटी बजाके फुर्र-फुर्र फूँक मारता जाए।...जरा पच-सरपंच लोगों को एक-एक घुटुक और दो चहा, एक दम स्टोन बनाकर।”

इसके बाद थोकदार ने एक बार चारों ओर नजर डाली, कि सब-कुछ ठीक है, कि नहीं। उन्होंने अपनी तरफ के लोगों को समझा रखा था, कि पंचायत में आकर बैठने के बाद, बैठते ही, नाथू हौलदार और रमाती के पातक की चर्चा कर देना। आपस में सब लोग एक-एक दो-दो करके कुछ ऐसी फुसफुसाट-गुणगुणाट करना, कि ‘बबारे, यारो, हमारे गौ के माथे पर कलंक का टीका लग गया है। हमारी बहू-बेटियों के लिए खतरा पैदा हो गया है। ऐसे पापियों का छुआ-लगा खाने-पीने से गोहत्या के बरोबर पाप लगता है ! ऐसे करमचंडाली पापियों का मुख नहीं देखना चाहिए।...’ आदि-आदि।

मगर, थोड़ी देर ऐसी कुछ चर्चाएँ करने के बाद लोगों ने इससे मिलती-जुलती कई कथा-अंतर्कथाओं को छेड़ दिया था, कि अरे घोर कलियुग इसी को कहते हैं। आज तो सिर्फ जिठाणे की ब्वारी से बदफैली की बात है—अलमोड़ा चन्दादेवी के मन्दिर के पास कांतिबल्लभ होटल वाले से उसकी बेटी गांगुली को झुटका लगा। फिर नाथू हौलदार की गुनहगारी का जहाँ तक सवाल है, ‘अभी अंधेरे में है, वही है, कि कोई दूसरा है—क्या खबर?’ वाली बात है। मगर, कांतिबल्लभ और गांगुली वाला केस तो हर तरह से साबित हो गया था। गांगुली ने जो बयान दिया है, वह इस प्रकार है, कि ‘बौज्यू के साथ—इजा के बाद में मर जाने की वजह से—मैं बचपन से ही सोती रही। शुरू-शुरू में तो मुझको खास जानकारी भी नहीं थी। डाढ़ जरूर मारती थी जोर-जोर से, पर बौज्यू, दूध-जलेबी दे-देकर चुपका देते थे, कि चेली, ऐसे रोयेगी तो सौरास<sup>१</sup> में कैसे काम चलाएगी?...मेरा कोई भाई नहीं है। सब बहनें हैं। एक भाई के लिए मेरा मन हमेशा मोहिल रहा है। बचपन में मैं बौज्यू से पूछती थी, कि बौज्यू, और सबके भाई हैं, मेरा भाई क्यों नहीं है?...तो बौज्यू कहते थे, कि चेली, तेरी इजा के पास बेटा पैदा

करने लायक मशीनरी ही नहीं थी।... शायद, मेरे बौज्यू ने उसी मशीनरी को मुझमें ढूँढने की कोशिश की ! और आज मैं भरा कचहरी में अपना भाई लेकर हाजिर हुई हूँ। जज महाराज इन्साफ करें। मेरे इस भाई को मेरी बड़ी दिदी—जो स्यूनारकोट में कीर्तिबल्लभ के बेटे की घरवाली है—के पास पहुँचवा दें। मैं किसी गहरे ताल में अपने लिए जगह ढूँढूँगी।... कहते हैं कि बाद में—उसी दिन से—गांगुली पागल हो गई और अब बाजार में घूमती-फिरती है, कि 'ईश्वर ने जो शानदार बाप मुझको दिया, किसी को नहीं दिया और न किसी को देवे।'।

कोई रंगोड़ के गीत-प्रसिद्ध ससुर-बहू के प्रणय की चर्चा करते हुए, 'सौर-ब्वारी को गीत'—ससुर-बहू का गीत—की इन दो पंक्तियों को धीमे-स्वर में गा देता—

‘सौर—ब्वारी को जोड़, किस अजब काथा—

कूतू तो के कूतू, अँधेरे की बाता ।’<sup>१</sup>...

कुछ ऐसे निस्पृह लोग भी थे, जो इस अति-रोमांस की चर्चाओं के प्रति उदासीन गाय-भेसों और बेल-बकरियों की खरीद-फरोस्त करने में लगे हुए थे।

चिलम घुमाने से ढीली पड़ गई चिलम की नली को कसते हुए, चिलम-सार की तमाखू की एक फूँक<sup>२</sup> खींचने के बाद, एक कहता—“दूध का यकीन नहीं होवे, तो शाम को अपने हाथ से निकाल के ले जाना। भैंस क्या ठहरा, मेरा हाथी ठहरा। पर, घर की कमजोरी के कारण गोठ सूना करने की मजबूरी आई हुई है।”

दूसरा कहता—“बिलकुल ठीक कह रहे हो, दाज्यू ! मगर, हाथी पालने की हमारी आकात कहाँ ?”

१. ससुर-बहू की जोड़ी मिली, वैसी अजब कहानी है यह ? कहें, तो क्या कहें ? बड़े अँधेरे की बात है।

२. चिलमसार लगाई जाने पर, बारी-बारी से, प्रत्येक आदमी सिर्फ एक ही फूँक तमाखू पीता है।

कोई अपने बैल की लड़ाई-रिभड़ खेलने की प्रशंसा करता —“हमारे गाँ में सबसे जबरजस्त बैल इन थोकदार का—जिनकी पंचैत के सिलसिले में हम लोग यहाँ आए हुए हैं—पौड़िया है, मगर हमारे खैरा ने परसों सिमासार के मिहल के पेड़वाले खेत में उसे खेत के इस कोने से उस कोने तक सवारी के घोड़े की तरह चारों तरफ जो धुतकाया-खदेड़ा है, तो चारों तरफ देखने वालों का मेला लग गया। कुछ लोगों ने थोकदारजू के पौड़िया को ‘भिड़-भिड़-भिड़, पौड़िया रौ !’ कहकर, आसमान में चढ़ाया, तो एक बार तो उसने सचमुच ही हमारे खैरा को मिहलवाले खेत से भेकुवा वाले खेत में लुढ़का दिया। .. मगर, जब मैंने भी ‘खैरा ! खैरा !! खैरा !!! रौ-औ-औ-रौ, मेरे प्यारे बल्दा, रौ...भिड़-भिड़-भिड़’ करके हमारे खैरा को अवाज मारी, तो खैरा है, कि शेर-बाघ है—देखने वालों की समझ में नहीं आया। बाद में हमारी कमनशीबी से खैरा का पाँव खेत के मुखडु<sup>१</sup> में अटक गया, नहीं तो, उस दिन थोकदार जू के पौड़िया की खैर नहीं थी।....”

कोई अपने बकरी का हिसाब बता रहा था, कि पतली-काँठी की बकरी है, काट के देखना—पर्दे-पर्दे में चर्बी मिलेगी। कुछ भी नहीं तो, भरे हुए दर्जे में भी, बार-तेर सेर से ऊपर निखालिस शिकार निकलेगा और आग में भूनोगे नहीं, बल्कि खाल निकालोगे, तो मसीदा बूचड़ आजकल चार-चार आने में ले रहा है। बजार रामजे हैस्कूल के नीचे की सीढ़ियों के पास ही उसकी दुकान है। बकरियों के सिर दरवाजे और खिड़कियों पर लटकाए हुए बड़ी दूर से ही दिखाई देते हैं।...कलेजा, फेफड़ा, दिल, चर्बीवाली आँत, मुट्ठे मिलाकर के, भितराँस (भीतर का सामान) डेढ़-दो सेर कहीं गया नहीं और मुनली-गणुवे (सिर-पाए) फोकट में बचते हैं।...

किसी गिरोह में दूसरे गाँव का कोई आदमी किसी ऊडलगाँ वाले से बेटे-बेटी का सम्बन्ध मजबूत करके, दो घरों का एक घर बनाने की कोशिश में लगा था, तो किसी में एक-दूसरे के गाँवों की फसल पर बातचीत हो रही थी।

---

१. चूहे का बनाया हुआ गुब्बारा।

पर, संख्या ऐसे ही लोगों की ज्यादा थी, जिनका पूरा-पूरा ध्यान पंच-चबूतरे की और था और वो, बोल 'सियाबर रामचन्द्र की...' —या— 'बोल महात्मा गान्धी की...' कहने पर जोर-जोर से 'जै-जै-जै' पुकारते थे, जैसे सियाबर रामचन्द्र और महात्मा गान्धी का नाथू होलदार वाले मामले से बड़ा गहरा संबंध हो ।...

इधर जब थोकदार ने नाथू होलदार के न आने की बात कहनी शुरू की, लोगों में यह कानाफूसी होने लगी थी, कि शायद, थोकदार सच्चाई को ही साबित करवा रहे हैं । मगर, जब नाथू होलदार अपनी निश्चित-मुखाकृति दिखा और निष्कम्प आवाज सुना गए, तो कानाफूसी के प्रवाह में कई और तरह के मोड़ आ गए—रमौती वाली बातें कहीं सिर्फ सुनी-सुनाई तो नहीं हैं ? ...साबुली का जहाँ तक सवाल है, वह अपनी राजी-खुशी से होलदार के साथ गई थी और सुख से है । दुख होता, तो यही हाथ-भर पर मँत है, कभी अपने माँ-बाप के यहाँ न जाती ? रह जाता है, तिरलो किया । उसके बारे में कुछ ठीक-ठीक किया नहीं जा सकता अभी । मवाल लछमी-नरायण लाला, होलदार नाथू और साबुली होलदारन के बीच का है, अपने-अपने हक की सब जानते होंगे और पंचायत जो फैसला करेगी, इन्साफ देगी...

०

०

०

थोड़ी ही देर में' नाथू होलदार—आनसीग और तेजसीग के साथ—पंचायत में शामिल होने आ गए । इस समय वह अपनी सैनिक-वर्दी से लैस थे । चमचमाते बूट घुटनों तक पट्टी—पहाड़ी खेतों की तरह एक-पर-एक पट्टी लिपटी हुई और लोहे का जुबरिया<sup>१</sup> गरम करके उससे इस्त्री की हुई खाकी पेंट-कमीज । .....

उनके आने से कौतूहल-पूर्ण सन्नाटा भर गया, थोकदार के पटाँगण में ।

थोकदार ने एक आदमी को इशारा किया, कि आगे बढ़कर, नाथू होलदार को पंच-चबूतरे के नीचे की दरी पर बैठने को बोले, पर नाथू होलदार—उसके संकेत करने तक—सीधे पंच-चबूतरे पर पहुँचकर, थोकदार के समक्षी

---

१. लोहे का कढ़ाईनुमा बरतन ।

हरबंशसींग-रघुबंशसींग दो भैयाँ के साथ बैठ गए—“राम-राम ! राम-राम !...सरपंच महोदय लछमदत्तज्यू’ पैलाग गुरु !...”

नाथू होलदार के स्वर-संबोधन में कुछ ऐसी अकम्प-आकर्षक ध्वनि थी, कि बदले में उन लोगों को भी ‘राम-राम, आशीरवाद, कल्याण-मस्तु ।’ कहना ही पड़ा । नाथू होलदार और जमकर बैठ गए और उन्होंने पंच-चवूतरे के इर्द-गिर्द घूमते थोकदार गुमानसींग से एकाएक अपनी आँखें मिलाकर, गोलाइयों में घूमती-सी आवाज में, कहा—“थोकदारज्यू, अब आप अपने इलजाम—जो आपने मुझपर सरेआम इस पंचत में लगाये हैं—वो सब इलजाम अब पंचों के सामने पेश करें ।...”

नाथू होलदार की मर्मवेधी-दृष्टि और सशक्त-संबोधन से थोकदार गुमानसींग हड़बड़ा-से उठे । अपनी हड़बड़ाहट को छिपाने के लिए, उन्होंने सामने पटाँगण की ओर मुँह फेरा । एक नजर सब पर डाली । रुदरसींग सामने से आ रहा था, अपनी माँ के साथ, । देबराम ने भी अपने विरादरों के साथ एक कोने में अड्डा जमा लिया था । अब सिर्फ खड़कसींग की माँ और सरुली थोकदारन के लौटने की प्रतीक्षा थी थोकदार को, कि काश, दोनों ऐन मौके पर, रमौती और साबुली को मुद्दई के रूप में पंचायत में उपस्थित हो जाएँ, अपनी-अपनी—थोकदार की चाही-बताई हुई—फरियादें लेकर ।.....

तेजसींग और आनसींग पंच-चवूतरे के नीचे बाँई ओर बैठ गए थे । आनसींग अपनी चिलम साथ ले आए थे । उनके बैठते ही, उनसे मेल-मिलाप रखने वाले, दो-चार और जुड़ आए और एक ने चिलमसार, लगानी शुरू कर दी, यों उनका एक गिरोह अलग ही दिखाई पड़ने लगा था ।

नाथू होलदार की तीखी दृष्टि की प्रतिक्रियात्मक-तिलमिलाहट को मोल लेने के बाद, थोकदार ने दुबारा चारों ओर देखा, और मन को मजबूत बनाकर, सबको सुनाते हुए बोले—“मुझे जो-कुछ भी इलजाम अर्ज करने हैं और उनसे ताल्लुक रखने वाले जो बयान देने हैं—इन सबको मैं सरपंच माननीय हमारे गुरु घुमौलीवाले लछमदत्तज्यू और माननीय पंचों के सामने ही अर्ज करूँगा । मैं आज जो पंचायत यहाँ बैठी है—आप लोगों के सामने

और आप लोगों की हाजिरी में बैठी है—किस लिए बैठी है, बैठाई गई है, इस सबके बारे में चार आँखों में अपनी बिनती पहले ही सुना चुका हूँ। आप लोगों को और हमारे समधी, जो इस समय कांग्रेस कमेटी के माननीय मेम्बर भी हैं—उन्होंने भी आप लोगों के सामने केशों को साफ कर दिया है और हिंदुओं के याने हम राजपूतों और बामुणों के उस सबसे बड़े धरमग्रन्थ तुलसीकृत जी की रमायण से दो-चार चौपाइयाँ भी आप लोगों को राधेश्याम जी की सुन्दर तरज में सुना दी हैं। मेरा विचार है, कि हम ऊडलगों के जोग आपस में मिलकर—और पड़ोस के हुँगरी-बज्जौली-सिराड़ आदि गों के लोगों से मिलकर—अबके बरस के कातिक के नौती<sup>१</sup> में भगवान् की रामलीला यहीं ऊडलगों में करें। हमारे ऊडलगों वालों को—खास करके औरतों-बच्चों को, देखने के लिए, या तो बाड़ेछीना और या तो चिचतई जाना पड़ता है। जिसमें सर्दी के दिन रहते हैं। बड़ी तकलीफी-परेशानी-हैरानी रहती है। यहाँ अपने घर की रामलीला रहेगी और हमारे समधी—जिन्होंने राधेश्याम की तरज में आपको अपनी सुन्दर संगीत की चौपाइयाँ अभी सुनाई हैं—अलमोड़ा शहर की लछमेश्वर की रामलीला में परशुराम का पार्ट भी बड़ा अच्छा करते हैं, कि 'जनक राजा, बता जल्दी, ये शिवधनु<sup>२</sup> किसने तोड़ा है?'...तो, मैं रामलीला कुमेटी के लिए इकाउन रुपया चंदा देने को तैयार हूँ। और...."

"पहले इस समय जो महाभारत की लीला आपने शुरू की है, थोकदारज्यू, इसका दर्शन कर लेने दीजिए जनता को।...बाद में, रामलीला की कारवाई देखी जाएगी। आपके समधी ही क्यों, आप भी महाभारत के धिर्तराष्ट<sup>३</sup> का पार्ट अच्छी तरह खेल सकते हैं। फरक इतना ही है, कि धिर्तराष्ट इतनी लैकचरबाजी नहीं करता था और ब्लाइण्ड यानी अंधा था।"—होल्दार मुस्कराकर, अपनी जगह बैठे-बैठे ही बोले। थोकदार गुमानसींग के

१. नवरात्रों।

२. शिव-धनुष।

३. धृतराष्ट्र।

लिए 'ओले पड़ रहे हैं, गंजे सिर पर टोपी नहीं है, हे भगवान् क्या करूँ ?' वाली हो गई ।

आहत किंतु दर्पपूर्ण स्वर में, बोले—“तू चूप रह, रे नाथू ! तुझसे बहसवाजी कौन कर रहा है ? सरपंच लछमदत्तज्यू, गुरू ! आगे से आप किसी को बीच में नहीं बोलने देंगे...”

...बीच में ही बात काटकर, होलदार नाथू हँस कर बोले—“यानी यह आपकी परसनल-पंचत है ?”

थोकदार और भी क्रुद्ध हो गए, मगर वो कुछ बोलें, इससे पहले ही, दिगोली वाले लछमदत्तज्यू बोले—“मैं बीच में ही बोलने के लिए माफी चाहता हूँ, आप लोगों से । मैं समझता हूँ, हम लोग यहाँ पर एक आपसी-मसले को घरेलू तौर पर हल करने के लिए आए हुए हैं । थोकदार गुमानसींग जी का ऐसा ही संदेश भी आया था मेरे पास और कुछ कौतूहल, कुछ पास-पड़ोस के दुख-सुख में दिलचस्पी रखने की वजह से मैं चला आया । वैसे मैं पसन्द तो यही करता हूँ, कि हम लोगों को एक-दूसरे की बातें ध्यान और धैर्य से सुननी चाहिए और बीच-बीच में काटमकूट नहीं करनी चाहिए, मगर इस समय बोलने को मजबूर हो गया हूँ । मैं थोकदार जी से भी यही प्रार्थना करता हूँ, कि वो बुजुर्ग आदमी हैं और उन्हें शान्त-चित्त रहकर बातें करनी चाहिए । उनकी यह गलती है, कि शुरू से ही कुछ गरमी-तेजी पैदा करने वाली बातें हो रही हैं ।...और यहाँ बैठे हुए श्री नाथूसींग होलदार से भी मेरी यह प्रार्थना है, कि वो देश-परदेश देखे हुए और चार सभ्यता की बातें, उसके तौर-तरीके सीखे हुए हैं—वो भी जरा शान्ति रखें । ताकि सरपंच महोदय और पंच लोग भी शान्ति से सारी बातें सुन सकें, उन पर फैसला दे सकें । वस, इतना कह कर, मैं अपनी जगह पर बैठ जाता हूँ ।”

दिगोली वाले लछमदत्तज्यू के अपनी जगह पर बैठते ही, धुमौली वाले लछमदत्तज्यू उठ खड़े हुए—“जैसा कि हमारे दिगोली वाले रहीस बहादुर लछमदत्तज्यू ने अपनी ओर से प्रार्थना की है, उसका मैं समर्थन करता हूँ । मगर, चूँकि आज आप लोगों की प्रार्थना पर मैं यहाँ सरपंच की कुर्सी पर

बैठा है, इसलिए यह मानी हुई बात है, कि जो राय मैं खुद अपनी जवान या कलम से आप लोगों को दूँगा, उसी का ही आप लोग पूरा-पूरा पालन जरूर करेंगे। ...तो, अब मैं थोकदार गुमानसींगज्यू से—जो कि एक किस्म से मेरे जजमान-जैसे हैं और आज के सभी केसों मामले में खास मुद्दे भी हैं—उनसे अपना सही-सही बयान देने को कहता हूँ। ...”

थोकदार गुमानसींग पंच-चबूतरे पर चले गए और, एक ओर बैठकर, पंचों की ओर मुख करके बोले—“मुझ में ज्यादा खड़े-खड़े बोलने की ताकत नहीं है। ...माननीय सरपंच धूमिली वाले लछमदत्तज्यू और पाँच पंच माननीय हमारे समधी ठाकुर हरबंशसींग मोटर-मालिक और दूसरे समधी ठाकुर रघुबंशसींग जी मोटर मालिक, तीसरे डुंगरी गों से हमारे लिए अपने खास कामों का हरजा करके आए हुए पधान धनसींगजी और छानी गों के माननीय पधान भोपालसींगज्यू—ये तीसरे-चौथे और पाँचवे पल्यू से कष्ट और मिहरबानी करके आए हुए पण्डित भैरबदज्यू। इनके अलावा और भी तिलाड़ी के ठाकुर सेठ कल्याणसींगज्यू आदि गों-पंच महोदय हैं, तथा हमारे विद्वान और रहीस दिगोली वाले लछमदत्तज्यू !...महाराज, मेरी इस ऊडलगों में रहते-रहते चतुरावस्था होने को आ गई है। कभी किसी किसम का भगड़ा-फसाद या फौजदारी का काम आज तक नहीं किया है। ये सब गों वाले इस बात के गवाह हैं। क्यों रे, यहाँ पर हाँजर सब गों वाले.....?.....”

कई लोगों ने मुँह से और कई ने सिर्फ सिर हिला-हिलाकर स्वीकृति दी।

थोकदार ने गर्दन ऊँची की—चारों ओर देखा। फिर अपना बयान शुरू किया—“अपनी सफाई देने के बाद और अपना बयान जारी करने से पहले—मैं यह साफ कर देना चाहता हूँ, कि इस चतुरावस्था में पहुँचने के बाद अब भला किसी के साथ भगड़ा-फसाद या बुराई-फौजदारी करने से क्या भला होने वाला है? मेरे कोई जवान बेटे भी नहीं हैं। मुझे तो अपने इन गों वालों का ही सहारा है और इनकी ही भलाई और खासकरके इनकी इज्जत-आबरू

का काम मैं करना चाहता हूँ। अरे, अगर यह सारे गों, सारे इलाके की इज्जत-आबरू और तोहीनी का सवाल नहीं होता, तो मुझे अपनी बुढ़ापे की चोट से कुकड़ी कमर<sup>१</sup> तान करके पंचैतबाजी करके क्या फायदा हाँसिल होने वाला था ? आप सब लोगों की दया-माया से पुरखों की छोड़ी हुई जँजात<sup>२</sup> बहुत है, अभी सात पुश्तों तक खाने को और आज तक किसी के आगे जीते जी हाथ नहीं फैलाया है। अपना ही हाथ ऊपर करके, औरों की हथेली में अपनी मुट्ठी को खोला है। इस सबके भी बहुत से लोग गवाही हैं। जैसे, कि माननीय सरपंच घुमौली वाले लछमदत्तज्यू....”

स्वीकृति के लिए थोकदार ने सरपंच लछमदत्तज्यू की ओर ताका, तो उन्हें ऐसा लगा, जैसे उनकी गरम-चूड़ीदार सुरयाल की भीतर वाली जेब में कोई साँप करवटें बदल रहा हो।...सकपका कर, बोले—“बयान जारी रहे।”

थोकदार गुमानसींग ने सिर हिलाकर, कहना शुरू किया—“इस सब सफाई से यह साबित हो जाता है, कि मुझे गों की इज्जत का ज्यादा ख्याल है। नहीं तो, आप लोग इस बात को सोच सकते हैं, कि मैंने खास अपनी चेली साबुली के जोर-जबरनी और गुंडागिरी से भगाए जाने पर भी इस नाथू पलटनिया के खिलाफ कोई कार्रवाही नहीं की और सबसे भली चुप करके बैठा रहा। मगर, आज मैं चेली साबुली के मामले को भी आप लोगों के सामने पेश करना चाहता हूँ। मगर, अभी अपने बयान को जारी रखते हुए, मैं बड़ी मजबूरी के साथ असली और बड़ा इलजाम इस नाथू पलटनिया पर पेश करता हूँ। क्या कल, माननीय सरपंच-पंच लोगों और उपस्थित मेरे तथा दूसरे गों वालों !—यह कुछ ऐसी बात हो गई है, जैसे कि हमारे पहाड़ में कहा करते हैं, ‘हगणी कें शरम नें, देखणी कें।...’ यानी हगने वाला बिशरम हगने को नंगा बैठा है और देखने वाला बिचारा शरम के मारे मूख एक ओर करके चला जाता है।...जैसी महाकलंकी बात इस हमारे गों में एक किसी शरस

१. कुकड़ी या झुकी हुई कमर।

२. जायदाद।

के अपनी ब्वारी—यानी कि जो बेटी और बैणी के बरोबर मानी गई है ऐसी पवित्र ब्वारी—के साथ जोर-जबरदस्ती और जुलुम से बदफैज़ी करने की हुई है, उससे, 'नाक अपनी जगह पर नहीं, ऊँचो किसको करें ?' वाली हो गई है। मेरा मुख्य इलजाम नाथू सिपाही पर यही है। इसके बाद...

“थोकदारजू, पहले एक इसी बड़े इलजाम का फैसला हो जाने दीजिए, फिर आगे के इलजामों की बात होती रहेगी। सरपंच साहब धुमौली वाले लछमदत्तजू, मैं अपना बयान जारी करता हूँ।” इतना कहकर, बिना सरपंच की ‘हाँ-हाँ’ के ही, नाथू होलदार उठ खड़े हुए।

कुसम्भारू के पेड़ से तिरछी पड़ती सूर्य की किरणों नाथू होलदार के बटनों पर पड़ीं और बटन चमचमा उठे। नाथू होलदार की आँखों में एक चमक-सी आई और वो गम्भीर-स्वर में बोले—“माननीय रिसपक्टेबुल, थोकदार गुमानसींग ज्यू के द्वारा यहाँ पर मजलिस लगाकर बैठे हुए, सरपंच साहब और दूसरे सज्जनों ! अपना बयान शुरू करने से पहले, मैं एक बात साफ कर देना चाहता हूँ, कि पलटन की नौकरी में था, तो अपने होफीसर और ऊपर वाले ईश्वर से डरता था। पलटन से एक साल हो गया, पिन्शन लेकर ताबेजिन्दगी के लिए बाइज्जत घर आ गया हूँ। ईश्वर से अब भी डरता हूँ और दूसरे यहाँ पर—पलटन के होफीसरों की जगह पर—परमपूज बौजू हैं मेरे और उन्हीं की जिद से और उन्हीं की डर से, मैं इस ‘दूसरे का घर जलाओ रे, अपनी छत पर बैठकर धुँवा देखो।’ वाली पंचेत में उअस्थित याने हाजिर हुआ हूँ।...नहीं तो, नाथू होलदार अपने उसूलों और अपनी जर्बामर्दी के मामले में तो सिर्फ ऊपर वाले ईश्वर और अपने रिस-पक्टेड फादर यानी कि परमपूज पिता जी से डरता है और इन दोनों के अलावा किसी से खौफ खाना—वह भी बेगुनाही में—ऐसी नामर्दी को मारता हूँ मैं यह अपना पलटन वाला कीलदार बूँट !...”

आनसींग ने चिलमसार की अपनी फूँक छोड़ते हुए, नाथू होलदार की ओर देखा, क्योंकि नाथू होलदार की बातों से वातावरण में उग्रता आने लग गई थी।

क्षण-भर रुककर, अपेक्षया शांत होकर, नाथू होलदार बोले—“खैर,

सरपंच साहब और पंच महोदयो, आप लोग इस समय इन्साफ की गद्दी पर बैठे हुए हैं, इसलिए आप लोगों की मर्यादा रखी जानी चाहिए और यही मेरी अपनी ओर से हरचंद कोशिश रहेगी। नरमाई से ही बात करूँगा, क्योंकि 'पोलिटनेसी मेक्स सक्ससफुली इन दी पौलीटिक्स' <sup>१</sup>।' कह रहा है। 'नोट श्रीनली इन पौलीटिक्स, 'बल्कि हरएक मामले में। तो मैं अब अपना बयान शुरू करता हूँ। आप लोगों की इस पंचैत में, मैं इस समय एक मुद्दाली <sup>२</sup> की हैसियत से खड़ा हूँ और मुद्दई-मुद्दाली का यह काम रहता है, कि एक-दूसरे की बातों का ठीक-ठीक से जबाब देना।...पहली बात, गों की इज्जत का इतना बड़ा 'रामढोल' <sup>३</sup> जो थोकदारज्यू हमारे ऊडलगों में बजा रहे हैं, इसकी पोल कोई इतने से ही जान सकता है, कि अगर थोकदार साहब को हमारे गों की इज्जत का ख्याल होता, तो 'आओ रे, राह चलतो, हमारी फटी-चिरी देखो, हमारा धुँवा देखो।' नहीं कहते। अलमोड़ा शहर के जो लोग आए होंगे, उनको यह बात मालूम होगी, कि वहाँ पर जब कोई खबर फैलानी होती है, तो ढोलकी वाले मेहतर-भंगी को भेजते हैं और वह ढोलकी बजा-बजाकर, सारे शहर में 'आज शाम के साढ़े-छैं बजे, नन्दा देवी के मैदान में, 'या खासो ग्राम को यह इत्तिला दी जाती है,' कहता फिरता है। हमारे ऊडलगों में यह काम थोकदारज्यू ने अपने हाथ में लिया है।...हँ-हँ-हँ... थोकदारज्यू आँख मत दिखाइए। बुढ़ापे में आँखों को ज्यादा तानने से मोती-बिन्दु पड़ने का खतरा ज्यादा रहता है। और, मैं यहाँ पर—नरमाई से बात चीतों को करने के सिलसिले में—जब आपकी 'मुँह से नहीं, भेल से निकली'-जैसी बातों-इलजामों को सहन कर गया हूँ तो आपको-भी—इन्सैनियत के नाते—मेरे जारी बयान में दखलअन्दाजी नहीं करनी चाहिए।... और, ठाकुर हरवंशीग जी साहब मोटरों वाले, आप भी मेरे पाँवों को अपने घुटने से ठसकाइए मत। मुझको भी अपना बयान देने का पूरा-पूरा हक हाँसिल रहना चाहिए।...नाँउ, इटिज श्रीलरैट, ओके.....।"

१. विनम्रता राजनीति में सफल बनाती है।

२. मुद्दालेह; प्रतिवादी।

३. पक वाद्य।

हरबंशसींग खिसियाकर, पीछे सरक गए थे। नाथू हौलदार ने फिर कहना शुरू किया—“थैंकू, धन्यवाद, ठाकुर साहब !...तो, मैं कह रहा था, कि थोकदार ज्यू हमारे गों के थोकदार भी हैं। बुजुर्गवार भी हैं। हम सब लोगों के घर में बुजुर्गवार हैं, और थोकदारज्यू—जो रिस्ते में मेरी और से सौरज्यू याने कि फादरनलौ भी लगते हैं—ये थोकदारज्यू सारे गों को अपना ही घर समझने की बातों को यहाँ पर करते हैं।...मेरे बौज्यू सामने बैठे तमाखू पी रहे हैं। हमारा भी दोमंजिला मकान है। तो उसमें कहीं भी जरा छेद पड़ता है, या उसकी दीवारों की कहीं से पलस्तर-पट्टी उखड़ती है, तो बौज्यू पहले उसे ठीक करके दुरुस्त रखते हैं, बाद में और कामों को हाथ लगाते हैं। घर की दीवारों की बात छोड़िए, हमारे पटाँगण का एक पथरोटा उखड़ गया था, जब तक उसे ठीक नहीं करके बिठा लिया, हमारे बौज्यू के लिए तमाखू की एक फूँक हराम है।...हमारे ही क्यों, आप लोगों में से भी किसी के बौज्यू या बुजुर्गवार हमारे इन थोकदारज्यू की जँसी कुड़पेंची यानी कि घरनाशी-सत्यानाशी हरकत नहीं कर सकते, कि घर के अन्दर कहीं चूहे ने छोटा-सा छेद मानो कर लिया, तो हमारे थोकदारज्यू हैं, कि साबल-फोड़ा<sup>१</sup> लेके उसको खोद-खोद कर औरों को दिखाने में लगे हैं, कि देखो, रे तमाशबीनो, हमारे घर में चूहे ने कितना बड़ा छेद कर दिया है ? ...”

इस बीच थोकदार ने अपने संकेतों को फँलाया और रुदरसींग की माँ थू-थू-थू करती, जाने के लिए उठ खड़ी हुई—“थू-थू...हट, तेरे पापी मूख में सौ बार थू। रामो-रामो, शिबो-शिबो।...हाई रे पापी-कलंकी, ब्वारी को छेद करने की बात करता है, उससे कहाँ डूब मरूँ नहीं होती है ? अरे ऐसे पापी के सामने मुँह खोलके बोलने में भी पाप, कान खोलके सुनने में पाप... हाई, रामो-रामो, हाई शिबो-शिबो।...”

रुदरसींग की माँ के साथ-साथ, देबराम की घरवाली भी खड़ी हो गई—“जैसा कि हमारे गुसँ<sup>२</sup> थोकदारज्यू ने बताया है—ऐसा अधरम तोह-

१. सब्बल-फावड़ा।

२. स्वामी।

मारी नीच जात डूम जात के लोगों में भी कोई नहीं करता है, कि जिठाणा जबरदस्ती ब्वारी को.....”

देबराम की घरवाली के आगे के शब्द ब-ब-ब-ब-में बदलकर, होंठों के अन्दर और आस-पास ही मँडराते रह गए—जमनसिंग की घरवाली ने उसके कंधे में दातुली<sup>१</sup> अड़ाकर, उसका मुँह अपनी ओर घुमा लिया—“ब-बो-ब-बो-ब-बो करती है, डुमणी ! ला इधर तेरी लपलपिया, काटके सानकर खाने-लैक टुकड़े बना देती हैं ।...के वे डुमणी, थोकदार ने तेरी जिबड़ी में भी बकबकुवे की जड़ी का डाम<sup>२</sup> धर दिया है क्या ? तेरी आँकात के-भेलों में मारू<sup>३</sup> भेकुवे के सोंटे ?...”

देबराम की घरवाली ‘माफ कर दो, गुसैणी !’ कहकर, अपना कंधा छुड़ाकर, सीधे अपने घर को भागी । दातुली की नोक चुभने से उसके कंधे की हड्डी दुखने लगी थी बहुत, पर वह रुकी नहीं ।

थोकदार दोनों हाथ उठाकर, दुहाई-जैसी देने लगे—“एहो, पंच-सरपंच लोगो ! इन्साफ करो ! इन्साफ करो !...इस पलटनिए के सारे चाहनेवाले यहाँ हथियारबन्द होकर आए हुए हैं, हम लोगों को मारने के लिए ।...ओ रे, हयातसिंग ! ओरे खड़कुवा !...ओरे, रुदरिया !...ओरे तुम लोग भी निकालो अपने-अपने जाँठे<sup>१</sup> अब ऐसे ही हो जाए फिर फँसला ।...”

कई एक लोग थोकदार के भड़काने से अपनी जगह से उठने लगे थे, मगर—दिगोली वाले लछमनदत्तजू और दूसरे दस-पाँच लोगों की ‘शांति करो, शांति करो’ से—फिर शांत हो गए ।

होहल्ले के बीच किसी चंट छोकरे की बारीक आवाज आई—“शांति को कहाँ से करो, वह तो अपने सौरास महरगों चली गई है ।...” और उत्तेजना-पूर्ण हो-हल्ले के बीच एक बरबस फूटी हँसी की लहर भी दौड़ गई ।

नाथू हौलदार ने थोकदारजू के दोनों कंधों पर धीमे से हाथ रख कर,

---

१. दराती ।

२. जीभ को बहुत बड़बड़ाने वाली बना दे, ऐसी जड़ी-बूटी से जीभ को दागना ।

३. लट्ठ ।

बिठा दिया—“थोकदारज्यू, एकदम पाँच मंजिल से ऊँची टुक्याल<sup>१</sup> क्यों छोड़ते हो ? हमारे बुजरुग आदमी हो, जरा हलके-हलके बोलो और पंचैत की मर्यादा के सिर पर उलटा तवा मत रखो।...और, महाराज, सब सरपंच-पंच लोगो !...देखो, बयान मेरा जारी रहना चाहिए, क्योंकि मैं जो भी बात कहूँगा, नरमाई से कहूँगा। मेरी नरमाई का अन्दाज आप लोग सिर्फ किस बात से लगा सकते हैं ? थोकदारज्यू और उनकी किरमड़ के छेँमुखिया काँटों से भी तीखी बातों से !...मगर, लकड़ी को भी वहीं तक लचकाना चाहिए, जहाँ तक वह टूटने के लिए टण-टण-टणावक् नही करने लगे। इसलिए, मेरी नरमाई की भी एक ‘लिमिट’ रहेगी। थोकदारज्यू अपने चेले-चमचों के जाँठों की बात करते हैं। मैं समझता हूँ, अभी ऊडलगों के जंगलों में ऐसी लकड़ी का पेड़ ही पैदा नहीं हुआ, जिसका बनाया हुआ जाँठा नाथू होलदार की खोपड़ी तक पहुँच सके !... क्योंकि, आखिर मारने वाले को भी तो अपने प्राण प्यारे ही होंगे ? ‘कहाँ मरूँ, कहाँ दम तोड़ूँ ?’ तो किसी को नहीं हो रही होगी ?...’ मैं सन् इकाईस-बाईस के आस-पास पलटन में भरती हुआ था। नैनटीन-ट्वैन्टी वन-टू के आस-पास। पिन्शन लेकर, सन् नैनटीन फोरटी में घर लौटा। याने उन्नीस से चालीस तक एक फस्ट वरल्डोर<sup>२</sup> देखा। दूसरे की तैयारी में हिस्सा लेकर लौटा और दो-चार साल और रुकता तो थरड यानी आखिरी वरल्डोर में भी जरूर लड़ता।... तो उपस्थित भाइयों, ये दाँए-बाँए भुजदण्डों पर जो तीन-तीन सफेद बिजली की जैसी लैट<sup>३</sup> मारते सरकारी फीते—जो बहादुरी के बदले में ही हाँसिल हो सकते हैं—तो इन फीतों को मैंने अपने हाथ से तो खाकी कमीज की डबल आस्तीनों पर चढ़ाया नहीं है ? तीनों एक-एक करके सरकार ने प्रिजेंट किए हैं। ये सब बातें कहने का मतलब यह है, कि वरल्डोरों की तोप-मशीनगनों से जब मेरा सिर नहीं फूटा, तो थोकदारज्यू के चेले-चमचों के सड़ियल जाँठों से क्या होगा ? समझदार लोग समझलें, इस मेरी बात को !... अब अपना बयान खतम करते हुए—और वह लकड़ी को

१. चीख-भरी पुकार।

२. विश्वयुद्ध।

३. ‘लाइट’ का अपभ्रंश।

ज्यादा नहीं लचकाने की, जिससे वह टूट जाए, सलाह देते हुए—मैं बड़ी ही नरमाई और इज्जत के साथ पंचों से अपनी कारवाई शुरू करने को कहता हूँ। मैंने इस पंचत में चार अच्छे इज्जतदार लोगों के आने से और बौज्यू की आज्ञा के अनुसार अपने वसूल<sup>१</sup> को तोड़ा है और यहाँ सबके बीच में शामिल हुआ हूँ, कि साँच को आँच क्या...? और एक कोई बेइमानी कर सकता है, पाँच-सात सभी गू नहीं खा सकते—ऐसा भी मेरा यकीन रहा है और अभी तक है !...तो, थोकदारज्यू ने जो इलजाम मुझ पर लगाया है कुछ ऐसा है, कि बिचारों का आखिरी समय नजदीक आ रहा है—बुजरुग आदमी ठहरे, बच्चों पर बिगड़ ही जाते हैं गलतफैमी<sup>२</sup> से। कोई बात नहीं, अगरचें वो समझ जाएँ अपनी गलतफैमी को।... क्योंकि, नाथू हौलदार जबरजंठ हो सकता है, मगर नीच नहीं हो सकता। गोली मार सकता है, गू नहीं खा सकता है। बस, इतने से ही उपस्थित लोग रमौती ब्वारी के मामले में लगाए गए झूठे पापी इलजामों की हकीकत समझ लें।... अब मैं बैठता हूँ।...”

“अब पंच-सरपंच लोग मेरा बयान सुनें, हो !...” थोकदार बोले—“नाथू सिपाही...”

“हौलदार कहिए,” नाथू हौलदार ने टोका।

“जा रे, हौलदार होगा तू अपनी फौज का।...” थोकदार होंठों से चिड़िया की चोंच बनाते हुए, बोले—“तो पंच-सरपंच महाराजो, इसकी बातों में मत आना। ये बातें तो ऐसी हैं, कि ‘बातों-बातों में बबरशेर से बच गए।’... इस नाथू सिपहिया ने अपने छोटे भाई मोहनिया को पलटन में भरती ही क्यों करवाया? पंच लोगों, क्योंकि इसकी रमौती की जवानी-खूबसूरती पर पहले से ही नजर थी और पलटन में मोहनिया को, क्या मालूम किसने मारा?... मैं रमौती वाले केस के चश्मदीद गवाहों को और बाद में खुद रमौती को पेश करवाता हूँ।... रुदरिया भतीज !...”

“आया, थोकदारका !” कहकर, रुदरसींग पंच-चबूतरे पर आ गया।

१. उसूल।

२. गलत फहमी।

“अब सरपंच सैप बहादुर महाराज घुमौली वाले लछमदत्तज्यू गवाह का बयान लें ।...” थोकदार बोले ।

“तो, तुमने उस दिन क्या देखा, रुदरसींग ?” घुमौलीवाले लछमदत्तज्यू ने, अपनी सुरयाल की चूड़ियाँ ठीक से बिठाते हुए, पूछा ।

“जिस दिन का बयान है, सरपंच महाराजी ! मैं लकड़ी काटने के लिए, रमुट<sup>१</sup> कंधे पर लिए, काफलीधार की चट्टान पर खड़ा था । ठीक इसी समय क्या देखता हूँ, कि यह नथदा—याने नाथूसींग हौलदार—भीजी रमौती को एक सोंटे से मारते हुए...”

“सोंटा किस चीज का था ?” सरपंच लछमदत्तज्यू ने जिरह की ।

“भेकूवे की मजबूत और जबरदस्त चोट मारने वाली लकड़ी का, सरपंच सैप !”

“और तू मुझसे कितनी दूरी पर था, रुदरसींग ?” नाथू हौलदार ने प्रश्न किया ।

“यही कोई लगभग, एक मैल-डेढ़मैल<sup>२</sup> का फैमला<sup>३</sup> रहा होगा ।” रुदरसींग बोला ।

“एक सवाल और पूछने की इजाजत ले रहा हूँ, सरपंच महोदय से !”—कहते हुए, नाथू हौलदार ने, सरपंच की ओर देखे बिना ही, रुदरसींग से प्रश्न किया—“बचपन में तेरी इजा तेरी आँखों में कौन-सा अंजन लगाती थी, रुदर भाई ?...जो तुझे डेड़<sup>४</sup> मैल की दूरी में मेरे हाथ के सोंटे की लकड़ी की किसम और जात भी देखने में आ गई ? शायद, गिद्ध के हाड़ घिसकर लगाती होगी ?”

रुदरसींग व्यंग से तिलमिलाकर, होंठ हिलाते-हिलाते, कुछ कहते-कहते रह गया ।

---

१. कुल्हाड़ी ।

२. मील ।

३. फासला ।

४. डेढ़ ।

“सरपंच सैप बहादुर महाराजी,<sup>१</sup> मुहाली को सख्ती से हुकम दीजिये, कि सबूत-पक्षी गवाह का बयान नहीं काटे ।...” थोकदार ने कहा ।

“बयान जारी रहे, बिना किसी काटमकूट के रुदरसींग की गवाही का ।” सरपंच लछमदत्तज्यू बोले ।

“तो सरपंच महाराजी ! उस भेकुवे के—या किसी भी दूसरी लकड़ी के—सोंटे को हाथ में लेकर, बिचारी रमौती भोजी को सोंटे-पर-सोंटा पीछे से मारते हुए, नाथू हौलदार भेंसीखाल के बगड़<sup>२</sup> तक ले गया । वहाँ उसको पानी में डाल के फिर बाहर निकाला और उस बिचारी के कौले<sup>३</sup> और बच्चे वाले पेट को दोनों हाथों से दबा-दबाकर...”

“ठैर, रे बकतरुवा !” जिबुली की इजा, हौलदार का संकेत पाते ही, अपनी जगह से चिल्लाई । फिर तेजी के साथ झपटती, कूदती-फाँदती रुदरसींग के पास आ पहुँची और उसके सिर के बाल पकड़कर नोंचने लगी—“कच्चा गू फिर खाना । दूसरों को बिगैर मिट्टी का मटैला, बिगैर कंकर का पथरेंला बताने के लिए—झूठी गवाही फिर देना, रेंडुवे ! पहले अपने अन्दर मूख डाल के देख । विधवा थी, कि सुहागन थी—जैसी थी, मेरी जिबुली के बीज्यू परदेश गए हुए थे, तो पराई अमानत और वह भी गैरहाँजिरा में थी । चटुवा कुकुर की तरह थोल—मूख<sup>४</sup> चाट-चाट कर पूँछ हिला-हिलाकर हाई, रे, यह पापी मेरी साबुत और पाक-साफ पराई अमानत पर चोर डडुवे का जैसा मूख मार गया । मारते रहा, जब तक, कि ‘दूध-दही तो खा लिया, अब कहीं बरतन के दाम न देने पड़ें !’ बाली नहीं हो गई ।...अरे, पापी ! थू तेरे चुरड़े मूख में...हे, पंच परमेशरो, जैसे ही मुझको तीन-चार महीने हुए, मेरे घाघरे के फचीने<sup>५</sup> में मूख डाल-डाल कर गोली खाये हिरण-जैसा सुस्ताने वाला यह पापी—करो मेरा भी निसाफ अब ! पंच-चौकी तो इधर लगी ही

१. महाराज जी ।

२. तट ।

३. कोमल ।

४. होठ-मुँह ।

५. आँचल ।

हुई है। यह पापी नाथू ज्याठजू पर तो, थोकदार के सिखाने से, झूठा इलजाम सिर पर कच्चे गुबर का गुपट्यौल-सा थोपता<sup>१</sup> है, मगर मुझ पराई श्रमानत को जो इसने चौथे महीने जम्बूड़ के जनारदन पंड की दवाई खाने को मजबूर बना दिया....”

पीछे से रुदरसींग की घरवाली की भी आवाज आई—“जिबुली की इजा ठीक कहती है, ठीक कहती है। पापियों को अपने श्रत्याचार नहीं दिखते हैं। मेरी जो आज लात मार-मार के गत बनाई है, कि यह थोकदारजू की दी हुई गोला-मिसरी है, और तू ऐसा बोलना....”

रुदरसींग ने सिर को, तेजी से झटका देकर, जिबुली की माँ की मुट्टियों से छुड़ाया और वहाँ से भागता-भागता जंगल की ओर चला गया।...

थोकदार के मुँह की रँगत ऐसी हो गई, जैसे खीलते हुए दूध में किसी ने नाँव का रस निचोड़ दिया हो।

सरपंच लछमदत्तजू भी गड़बड़ा गए। फिर बोले—“थोकदारजू, दूसरे चश्मदीद गवाहों को हाँजिर करो....”

थोकदार ने एक छोकरे को आवाज दी—“अरे, अमरुवा! गंगोतरि भोजी नहीं आई? नहीं लाया, रे, बुलाके? सरपंच बहादुर, गंगोतरि भोजी ने—दानसींग दुकानदार की इजा ने—खुद अपने हाथों से रमौती का पेट देखा है, कि उसमें गरभ था।....”

“थोकदार बुबू, गंगोतरि आम<sup>२</sup> कहती है, कि वो नहीं आएगी। कारण यह बताया है, कि दानसींगका ने मना किया है, किसी के बुरे-भले में हाथ डालने को इस चौथी उमर में!....”

“और कोई चश्चदीद गवाह? जितने हैं सब पेश करो, थोकदारजू! सबूतपक्षी गवाहों की बयानबाजी सुनने के बाद, मैं पंचों की राय से अपना फंसला—जो कि हर हालत में सबसे ऊपर ही रहेगा—दे दूँगा!” सरपंच लछमदत्तजू अपने स्थान का उपयोग करते हुए बोले।

१. गोबर का उपला-सा।

२. दादी।

थोकदार ने कुछ सोचा और फिर भट से रामायण की पुस्तक के अन्दर रखे तुलसी-पातों को नाथू हौलदार को देते हुए, सबकी ओर मुँह घुमाकर, बोले—“चश्मदीन गवाहों को मारो गोली, सरपंच बहादुर ! पाप-पुण्य का पहरेदार ईश्वर-भगवान् है, जो कि उसकी झूठी कसम खाने वालों का जड़ से सत्यानाश कर डालता है ।...तो मैं उसी भगवान् मरियादा पुरुषोत्तम ईश्वर-भगवान् श्रीरामचन्द्र-लक्ष्मण की कसम-मय इन तुलसी के पातों के—लेकर, नाथू से रामायण भगवान् के बीचों बीच छोड़ने को कहता हूँ, कि ‘मैं इनकी—मय तुलसी-पातों के रामायण और रामचन्द्र-लक्ष्मण की—एकदम सच्ची कसम ईमान-धरम से खाके बोल रहा हूँ,’ और यह, कि ‘मेरे लिए मेरी ब्वारी रमौती मेरी बैणी, मेरी बेटी के बरोबर है ।...ले, नाथू ये तुलसी के पात.....।”

एकाएक पंचायत का ढर्रा बदल गया, इस बात से । सभी लोगों में उत्सुकता चौमास-पनार-सी दौड़ गई—देखें, नाथू हौलदार क्या करता है ?...

नाथू हौलदार ने तुलसी के पत्ते एक तरफ फेंक दिए और उठकर बोले—“इसी रामायण में कहीं पर यह भी जरूर-जरूर लिखा होगा, कि ‘साँच बरोबर तप नहीं और जाके मन में साँच है, वाको कैसी आँच ?’... और यह भी जरूर, कि ‘जाको राखो साँइयाँ मार सके ना कोय, जो जम बैरी होय ।’...उपस्थित सज्जनो और पंचो, तुलसी-पात हाथ में लेकर, रामायण हाथ में लेकर कसम खाने से पानी को दूध, सफेद को काला कह देने से क्या यही हो जाएगा ? थोकदारजू का बोकिया भूरिया—जो कि सैमाधुर के जंगल में शिकार खेलते समय मेरी दोनाली बन्दूक से...अँ...आँ...बाघ को घायल करवा गया, क्योंकि बाघ उसको पहले ही...नहीं, नहीं, तुलसी के पात नहीं हैं, रामायण नहीं है, तो भी सच बोलना चाहिए ।...तो यह कसूर स्वीकार है, कि इनका भूरिया बोकिया उस दिन मेरी दोनाली बन्दूक की फौर से घुरड़ के धोखे में मारा गया था...और मैं उसका हरजाना देने को तैयार हूँ ।.....”

एक क्षल रुककर, मगर दूसरों को बोलने का अवकाश न देते हुए, नाथू हौलदार बोले—“तो इनका वह भूरिया बोकिया इनके ही नहीं और लोगों

के यहाँ की तुलसी के पात भी रोज चबा देता था। तो क्या, वह बोकिया अपनी जिन्दगानी-भर सत्य बोलता होगा ? तुलसी के पातों में अगर कोई असर होता, तो वह बोकिया सारे गों की बकरियों को हैरान करके, उनका फजीता नहीं करता—बल्कि थोकदारजू की तरह शान्ति से घर-गोठ में पड़ा रहता। ...तो, कहने की पोलिसी यह है, कि आदमी कसम खाने से गंगास्नानी-पूजाध्यानी नहीं बनता है। अपना मन मन्दिर है। उसमें झूठ-पाप नहीं होने चाहिए। बाहर से किसी को कुछ भी दिखाई पड़े, यह उसकी आँखों का अंधेरा है। ...जो रोशनी है, वह पाक-साफ है। ...और अब जहाँ तक रमौती ब्वारी को बैंगी याने कि सिस्टर, बेटी याने कि डौटर कहकर कसम खाने का सवाल है, क्या थोकदारजू इतना भी नहीं जानते कि वह मेरी बैंगी नहीं, बेटी नहीं—ब्वारी है। ...चूँकि, वह मेरी ब्वारी है, इसलिए मैं ब्वारी ही कबूल कर सकता हूँ उसको। ...और जहाँ तक, इसमें भी, तुलसी के पात और रामायण हाथ में लेकर कसम खाने की जरूरत का सवाल उठता है, बेकार है। वह मेरी ब्वारी है और मैं दिन में चौबीसों बखत उसे 'इधर आ, ब्वारी ! उधर जा, ब्वारी !' कहकर, कामों में लगाया करता हूँ। ...”

इतना कहकर, नाथू होलदार बैठ गए।

थोकदार चिल्लाये—“पंच-सरपंच लोग सब, मेरे महाराजी ! यह दजं करलो गुनाह-कबूली। मैंने पहले ही कहा था, कि तुलसी मैया के पात और रामायण भगवान् की पुस्तक हाथ में लेकर कसम खाने वाले का सत्यानाश हो जाता है। पापी कामन पीपल का पात हो गया है। इन्साफ-पुन्य और धरम की हवा ऐसी चल रही है, कि थरथर काँपता है, उड़ता है—‘धरती में पड़ूँ या अकाश जाऊँ ?’ हो रही है। ...सच्ची ईश्वरशपथी से बचने का, चोरों की तरह खाली मुँह से आलतू-फालतू चड़चड़ाट करने का साफ यही मतलब है, कि गुनहगार नाथू सिपाही अपनी गुनहगारी को कबूल करता है, पंच सरपंचों के सामने।। ...”

“नही, थोकदार ज्याठजू !” खड़कसींग की माँ रमौती के पास से लौटकर, पंचायत में पहुँचती हुई, दूर से बोलती आई—“मैं खुद रमौती ब्वारी के कसम लेके आ रही हूँ और मेरा यह पूरा-पूरा यकीन है, कि नाथू भतीज

बड़ा पाक-साफ और नेकनियती और भलमनसाहती रखने वाला आदमी है । बेगुना है ।...

“तो फिर हाथ में आरसी लेके मुँह देखने को पानी का हवाला क्यों दिया जा रहा है ?” थोकदार, खड़कसींग की माँ को आग्नेय-आँखों से घूरते हुए, बोले—“तुलसी माई के पात दे रहा हूँ, रामायण दे रहा हूँ, हाथ में लेता क्यों नहीं है ? ले, रे, नाथू—ये ले तुलसी-पात—और कबूल कर, कि...”

“अपनी तुलसी माई के हाथ-पाँव तुम अपनी ही जेबों में भरलो, थोकदार-ज्यू ! सरुली सासू और बेटे नरेण के मामले में काम देंगे ।” नाथू हौलदार कड़क कर बोले ।

इस रहस्य के भंडाफोड़ से थोकदार को भी ‘किधर भागू ?’ हो गई और वो हकबका गए ।

तभी आनसींग आकर, बोले—“नाथू बेटे, साँच को आँच नहीं है । तेरा क्या बिगड़ता है ? मेरे बेटे, ले-ले तुलसी के पात और रामायण हाथ में—और साबित कर दे, कि इस गुमानसींग के नाम का पहला अक्षर इसकी द्रोही-मति में पड़ा हुआ है ?”

“जैसा कि मेरे परमपूज्य पिता जी की आज्ञा है और वो मेरे लिए ईश्वर की जगह पर हैं—मैं उनकी आज्ञा से ये तुलसी के चार पात और रामायण की शपथ लेकर कहता हूँ, कि मेरी रमौती ब्वारी से नादानी जरूर हो गई है, मगर मेरे लिए वह—इन थोकदार ज्यू वाली साबुली डियर से ही जनम लेने वाली—मेरी बेबी जूली के ही समान है ।...”

“झूठी कसमें खाता है । सत्यानाश होगा तेरा । नरक के द्वार पर लेंटेगा ।”—थोकदार दुसह वेदना की कचोट से आहूत् होकर चिल्लाए—“सरपंच सैप बहादुर घुमौली वाले लछमदत्तज्यू, आप अपना फंसला सुनाएँ, जिसको देने का आपको पूरा-पूरा हक है ।...”

दूर से ही जमनसींग की आवाज सुनाई पड़ी—“चल, कठुवा ! नहीं तो, कपकाता हूँ, तेरी जतिए-जैसी गरदन आज इसी बसूले से ! चल...”

लोगों की आँखें उधर को मुड़ीं, तो देखा—जमनसींग पीताम्बर चिट्ठी-रसैन की गरदन पीछे से पकड़े, उसे पंचायत की ओर ला रहा है ।.....

**थो**कदार जो अब तक इतना बवंडर-मा बाँध रहे थे, उसके लिए मुख्य आधार था—नाथू होलदार का बहू के साथ अनैतिक-सम्बन्ध रखना । वस्तुतः थोकदार को रुदरसींग की माँ और गयोतरी के कहने से यह विश्वास हो गया था, कि नाथू होलदार वास्तव में अपराधी और दुश्चरित्र है...मगर, अपने 'चश्मदीद-गवाहों'¹ को एक-एक कर सरकते-सटकते देखकर, उनका उत्साह उतरता चला गया ।...

पीताम्बर चिट्ठीरसैन की गरदन पकड़े हुए, जमनसींग के पंच-चबूतरे तक आने तक—सारे वातावरण में एक सन्नाटे की सुरसुरी-सी दौड़ गई ।

नीचे बैठने की जगह कम ऊँची और मन की चंचलता बाँस-लम्बी होने से, गाँव के चंट छोकरे आँगन के आस-पास के कुसम्यारू, दाड़िम, खुमानी, बितरैण और आलू-पोखरे के पेड़ों पर चढ़ गए थे और 'जै' की पुकार आने पर वहीं से चिल्ला-चिल्लाकर, पूरी शक्ति लगाकर 'जै-जै-जै' चीखते थे । कभी कोई खास मौका आने पर फटाफट तालियाँ बजाते थे । थोकदार के सिखाए हुए छोकरे, बीच-बीच में, 'बोल, रमौती ब्वारीबर नाथू होलदार की ई-ई-ई-ज्जै-ज्जै-ज्जै'² ।'...पुकारते थे ।

लड़कों का मन हो रहा था, कि पंचायत में जल्दी-से-जल्दी खूब लट्ठबाजी शुरू हो जाती । सिर्फ इस दाड़िम के पेड़ में ही कुछ दाड़िम के दाने

१. प्रत्यक्षदर्शी-साक्षी ।

२. बोलो, रमौती बहू का वरण करने वाले नाथू होलदार की जै ।.....

बच गए हैं । काश, सारे पेड़ फलों से लदे रहते...और तब आता आनन्द निशाने-बाजी करने में ।

कुछ लड़के आपस में सलाह कर रहे थे, कि कल जब अपनी ग्वालपाली पूरी करने वन जाएँगे, तो आज की पंचैत-पार्टी का यही खेल करेंगे । गाय बकरियों को चरने छोड़ देगे । पलटाने को खिमुवा डूम के लाटे<sup>१</sup> को रख देंगे ।...चिफलजड़ी की गुफा में पंचैत बिठाएँगे ।

हयातसींग के लड़के मिह्रवा ने 'में-पाप'<sup>२</sup> कहकर, अपने बौज्यू की पुरानी गुटका रामायण चोरकर लाने का वचन दे दिया था ।...

जमनसींग को पीताम्बर की गरदन कसकर पकड़े आते देखा, तो छोकरीं का—बार-बार अवसर आने पर भी ऐसे ही टल जाने वाली लट्टुमारी या पत्थरवाजी के कारण—शिथिल पड़ा उत्साह जाग उठा और मिह्रवा चिल्लाया—“बोल चिट्ठीरसैन पीताम्बर पाने की गरदन पकड़ने वाले लिसू प्रधान जमनी का की ई-ई-ई-<sup>३</sup>...”

सब छोकरे—थोकदार पक्ष के भी—समवेत-स्वर में चिल्लाए—ज्जै-ज्जै-ज्जै-ऐ-ऐ-ऐ ।...

जमनसींग ने, पंच-चबूतरे के पास पहुँचते ही, पीताम्बर पाने की गरदन को तीन-चार बार झटका देकर, उसे जमीन पर गिरा दिया—“कह, कठुवा ! बोल, कठुवा ।”

गुस्से से जमनसींग के होंठ थरथरा रहे थे और बसूले वाले हाथ की बँधी झुट्टी के चारों ओर अँगुलियों की नसें उभर आई थीं ।

पीताम्बर ने एक बार सिर उठाकर, सबको देखा, तो दिगौली वाले लछमदत्तज्यू को देखकर, ग्लानि और आश्चर्य से लटपटा-सा गया । मगर, फिर तेजी से आगे बढ़ कर, उनके पाँव पकड़ लिए—“मुझको बचाओ, रईस

१. खिमुवा डोम का गूँगा बैरा ।

२. मों—शपथ ।

३. बोलो, चिट्ठीरसैन पीताम्बर पाने की गरदन पकड़ने वाले लिसुवा (लीसा निकालने वाले) प्रधान जमनसींग चाचा को जै ।

का । यह डाकू खसिया लिसुवा मुझे कुल्हाड़ी से काटने की तैयारी कर रहा है ।....”

जमनसींग ने आगे बढ़कर, उसे अपनी ओर खींच लिया—“देखो, पीताम्बरज्यू, अभी तक तो मैंने कुछ नहीं किया, मगर आगे का भरोसा नहीं कर सकता । मैंने क्या कहा था, कि चलकर, सच-सच सब लोगों के सामने अपने पाप को कबूल करलो—मैं तुम्हें हाथ भी नहीं लगाऊंगा ? कहा था, या नहीं ? और तुमने, अपनी छैपलिया जन्मो<sup>२</sup> अँगुलियों में लपेटकर कसम खाई थी, कि ईमान-धरम से सच-सच कहूंगा । खाई थी, या नहीं ? यहाँ आके दीवानी-चाल चलते हो ? याद रखो, आज नहीं तो, आगे के लिए भी—मेरी-तुम्हारी ‘मुलाकात’ तो कोई रोक नहीं सकता ।....”

जमनसींग की ‘मुलाकात’ में निर्दिष्ट चेतावनी को पीताम्बर चिट्ठीरसैन समझता था । खिसियाए स्वर में बोला—“इतना तो मैं कबूल करता हूँ, कि रमौती से जान-पहचान मेरी तब से हो गई थी, जब से उसकी चिट्ठियाँ आने लगीं । मगर, बाद में, खुद उसी ने मुझको फँसाया । नहीं तो, मैं कोई राह-चलता तो हूँ नहीं ? दिगौली के प्रसिद्ध दीवान-खानदान का हूँ ।....”

“यह तेरे करमों से ही साफ-साफ हो जाता है, बाँकी के लिए अलमोड़ा-बाड़ेछीना लैन में चलने वाले खच्चर गवाही दे सकते हैं ।” जमनसींग बोला—“सुनो हो, पंच-सरपंच लोगो, यहाँ पर थोकदार गुमानसींग ने हमारे छोटे भाई नाथूसींग से—जो कि हौलदार है और इस समय सरकारी पन्शन पर है—अपनी दुश्मनी का बदला लेने के लिए यह प्रपंच-सभा ‘कुत्ते, तू भूँकने को आना और कौवे तू काँ-काँ-काँ करने को’ करके इकट्ठा यहाँ बैठा रखी है । मगर, जैसा कि मेरी भूपाल की इजा का कहना है—हमारा भाई नाथूसींग शालिगराम के पत्थर की तरह चोखा है । अलबत्ता छोटी ब्वारी से पाँव जरा गलत पड़ गया है और वह इस दीवान-खानदान के दीवाने घोड़िया चिट्ठीरसैन पितुवा के कारण, जो आप लोगों के सामने कबूल कर चुका है, कि....”

---

१. रईस चाचा ।

२. छः पल्लोवाली जनेऊ ।

“कबूल किधर किया है ? हाँ, कबूल किया है—मगर, यही कि रमोती से चिट्ठियों के जरिए-जान-पहचान हुई थी, मगर यह तो कबूल नहीं किया, कि रमोती के होने वाले भुटकेले... अब इस बारे में, मैं यहाँ पर अपने रईस का के सामने क्या कह सकता हूँ ?” पीताम्बर बोला ।

दिगौली वाले लछमदत्तज्यू अपनी जगह से उठे और उन्होंने तड़ातड़ चार-पाँच भापड़ पीताम्बर को मारे और फिर बोले—“थोकदार गुमानसींगज्यू, मैं शुरू से ही सबकी बातें धैर्य से सुनता आ रहा हूँ । आपकी उम्र अब षड्-यन्त्र-प्रपंच रचने-लायक नहीं रही । पेड़ को अपने नीचे छाया रखनी चाहिए, काँटे नहीं, कि जो बैठे वही ‘ओ बबो’<sup>१</sup>।’ कहे ।... आपको जैसे गाँव-भर की इज्जत बनी रहे, वह काम करना चाहिए । बेचारी रमोती छोरी के अपराध का जहाँ तक सवाल है, मैं इसे कोई बहुत बड़ा नहीं समझता । समय और संयोग पर किसी का बश नहीं है । आनसींग और नाथूसींग ने यह बड़ा अच्छा किया है, कि बहू को घर से निकाला नहीं । वह बच्ची है, उसे सहारा मिलना चाहिए । सुना है, वह विधवा है । अरे, पितुवा, तुम्हे रमोती को अपने साथ रखना मंजूर है ?”

“अरे, बाप रे ! रईसका, आप क्या कह रहे हैं ? सारी दिगौली में किसे मुँह दिखाऊँ हो जाएगी मुझे । जात-बाहर हो जाऊँगा ।”

“पाप करते समय नहीं सोचा था ?”

“वह तो जवानी की लहर थी, रईसका ! यह जिन्दगी का सवाल है । मुझे अपने छोटे भाऊ की माँ को सँभालना ही मुश्किल हो रहा है ।... अच्छा, हो जमनसींग, लिसू पधान, मैं चलता हूँ, अब ।” कहता हुआ, पीताम्बर चिट्ठीरसैन उठकर, चला गया ।

दिगौली वाले लछमदत्तज्यू जमनसींग से बोले—“जमनसींग हो, एक दीवान ने पाप किया है, दूसरा प्रायश्चित्त करेगा । अब मैं भी चलूँगा । तुम अपनी रमोती ब्वारी को मेरे साथ लगा दो । एक विधवा बेटी, दुर्भाग्य से, पहले से ही घर में है । समझ लूँगा, दो बेटियाँ विधवा हो गईं । यहाँ उस अभागिनी छोरी को बहुत दुःख पड़ जाएँगे, यकीन करो, मैं उसे अपनी

१. अरे, बाप रे ।

बेटी से ज्यादा प्यार से रखूँगा। उसके नाजायज बच्चे का भी पालन-पोषण करूँगा।”

लछमदत्तज्यू की आँखें गीली हो आई थीं। नाथू हौलदार उठे और उनके पाँव पकड़ लिए—“पैलाग महाराज, रईस बहादुर दीवान जी ! आप सचमुच में एक रईस हैं। ए-वन-गिरेट-परसन।...मगर, दीवान बहादुर जी, चार मुट्ठी अनाज नाथू हौलदार के खेतों में भी होता ही है और—आपकी दया से—नून-तेल-कपड़े के लिए ताबे-जिन्दगी की पिन्शन लेकर आया है, सरकार से।...भाई को मैंने पलटन में लगा दिया, कि मेरी ब्वारी भी हौलदारन-सुबदारन बन जाए, तो जिठानियों के रूतबे के आगे उसे दुःखी नहीं होना पड़े।...मगर, बँडलक, भेरी बँड। खैर, अब रमौती ब्वारी दरअसल मेरे लिए बेटी-जैसी पालनी हो गई है, एकदम बेबी की माफिक, जूली की माफिक ! रईस बहादुर साहब, मैं आपकी गिरेटनस का कायल हूँ और आपकी जै बोलता हूँ, कि बोलो, ‘दिगौली के रईस बहादुर दीवान साहब दिगौलीवाले लछमदत्तज्यू की जै, जै, जै !’ मगर, अपनी ब्वारी को आपके साथ नहीं लगा सकता।...”

थोकदार उठकर चले गए थे। उनके साथ-साथ—तिरंगे बैज को जेब के अंदर डालकर—हरबंशसींग भी चले गए, कि ‘समधी, जरा ठहरिए तो।’

सरपंच लछमदत्तज्यू, किकर्तव्य-विमूढ़ हो कर, औरों का मुँह ताकने लगे थे। दिगौली वाले लछमदत्तज्यू बोले—“सरपंच साहब, पंचायत तो एक नाटक-जैसी शुरू हुई, समाप्त हो गई। मगर, इससे आपका स्थान-मान थोड़े घटता है ? आप अपना आदेश—जिसको देने का, इस पंचायत के सरपंच के नाते, आपको पूरा-पूरा हक है—यह आदेश दीजिए, कि आज की पंचायत की कार्यवाही समाप्त करता हूँ।...”

सरपंच लछमदत्तज्यू, इस विनम्र-व्यंग से आहत-स्वर में, बोले—“मेरे सरपंची हक का कोई सवाल नहीं उठता है। मैं कोई अपने हाथ से तो बना नहीं, यहाँ की जनता ने बनाया था। खैर, पंचायत की कारवाई खतम हो रही है। लोग अपने-अपने घरों को जा सकते हैं।...”

पेड़ों पर बैठे छोकरो को पंचायत की समाप्ति होते देख, बड़ी निराशा

हुई और उन्होंने उठते-मेले का हल्ला शुरू किया—“बोल्ल, साबुलीबर नाथू का हौलदार की-ई-ई-ई... बोल्ल, रमौतीबर घोड़िया चिट्टी रसैन पीताम्बर पाने की-ई-ई-ई—बोल्ल, पंचैतबर सरपंच साहब बहादुर घुमौली वाले—बाढ़ेछीना के ऊपर स्कूल में हमारे दर्जा दो में पड़ने वाले गिरीश के बोज्यू—अपना-सा मुख लेकर, वो देखो, हम लोगों को आँखें तान-तान कर देखने वाले घुमौली वाले लछमदत्तज्यू की-ई-ई-ई · ज्जै-ज्जै-ज्जज्जै । · ज्जै-ज्जै-ज्जज्जै । ··· ज्जै-ज्जै-ज्जज्जै । ···”

लड़कों की ‘जै, को चीरती हुई, एक और भी तेज आवाज आई—“सरपंच महाराज, यह बैठी हुई पंचैत कहाँ को उठाई जा रही है ? ओ, बबो... कमर नहीं लग रही है... हाई... अरे, सबका इन्साफ-पिन्साफ जो होना था, भले ही हो गया होवे, मगर—ओ, बबो !—मेरा इन्साफ तो रह गया है—ओ, बबो !—पहले इसको तो करो, हो ?... ओ, इजा, गरदन जमीन में झड़ने से थोड़ी ही बाँकी रह गई ।... हाई... हाई—ओ, बबो, मेरी... ओ इजो मेरी... अरे रे, मैं तो मरी... अरे रे, कोई तो इन्साफ करो—ओ, बबो, बाकर-कटाई कर दी है मेरी—हाई-हाई... ओ, इजो रे... मैं मर्री-ई-ई-ई.....”

एक लम्बी चीख मारकर, सरुली थोकदारन, पंच-चबूतरे से थोड़ी दूरी पर, जमीन पर गिर गई और हाथ पंर छटपटाने लगी ।...

अदम्य कौतूहल-वश बहुत-से लोग जाते-जाते पलट आए । घर के द्वार तक पहुँच गए, थोकदार बगैरह भी लौट आए । पंच-चबूतरे के आस-पास के लोग सरुली थोकदारन के समीप आ गए ।

सरुली थोकदारन अपने प्राण छोड़ रही थी । जोर-जोर से सक्-सक् करती चलती साँसों के साथ, मुँह में भाग के बुलबुले बन रहे थे । गरदन के पास खून बह रहा था और इधर-उधर जमता जा रहा था । सभी कपड़े खून से तर थे । काला गाढ़ा का घाघरा-आँगड़ा खून के घन्बों से वीभत्स दिखाई दे रहा था ।

लोगों को तो पहले कुछ सूझा ही नहीं, कि यह क्या हुआ है, थोकदारन को ? एक-दो उसे संभालने लगे थे, कि घर ले चलो जल्दी, कुछ दवा-पानी

करो—गले में कहीं चोट आ गई है ।” मगर, सख्ती थोकदारन ऐसे हाथ-पाँव छटपटा रही थी, जैसे सिर कट जाने पर थोड़ी देर तक बकरी छटपटाती रहती है । कभी वह हाथ-पैरों को सिकोड़ती, लोग उसे उठाने की कोशिश करते और वह तभी पैरों को जोर से तानते हुए, बू—बुर्र-बू-बुर्र करती, मुँह से भाग छोड़ने लगती ।

नाथू हीलदार, सिरहाने की तरफ जाकर, बोले—“थोकदारन सासू को, शायद, मिरगी आ गई है ।”—और पाँव का बूट निकालकर, उसे सुँघाने लगे ।

बूट नाक में लगाना था, कि ‘हट्ट, साले, कमीने ।’ कहती, नाथू हीलदार के बूट-थमाए हाथ को जोर से झटका मारकर, सख्ती थोकदारन पाँव पसारे बैठ गई—“इसकी पतरवा राँडी ने मेरा गला दातुली से पस्या<sup>१</sup> दिया और यह रेंडुवा—इसकी उमर को न भुगते यह, अबकी फसल का अन्न नशीब हो इसकी लपलपिया को, इसके घर केशुवा चला जाए<sup>२</sup> । इसके गोठ-पाण को हैजा-माण हो जाए । इसकी जनेऊ पत्यर पर रह जाए ।—अरे, सरपंच सैप, यह डाँकू-लुटेरा आपके सामने मुझे वूटों से मार-मारकर साबर बनाने की कोशिश कर रहा है ? ”ओ, बबो रे ! ”अरे, इसकी पतरवा राँडी का काला चरयो टूट जाए...हाई-ई-ई...में बोलूँ भी कैसे ? ...फरियाद भी कैसे करूँ ? ...ओ, इजो रे, बस, अब मैं दम छोड़ने ही वाली हूँ...सरपंच सैप, जल्दी मेरे नरैण के बोज्यू को बुला दो और मेरा बयान लिख लो...मैं मर ही जाने वाली हूँ, दुश्मनों के लिए भी कुछ बन्दोबस्त करती जाऊँगी...ओ, बबा रे, मेरी ! अरे, नरैण के बोज्यू कहाँ हैं ? ...हाई रे, न-जाने कैसे पैदा की थी यह पातर बेटी इन्होंने भी ... ओ, बबो ... मैं मरी-ई-ई-ई—...”

थोकदार पास आ गए थे, बोले—“अरे-रे-रे, दुश्मनों ने मेरा सिर फोड़ दिया है । मेरी घरवाली को छुरी से सरे-आम कतल कर दिया...”अरे,

१. दराती से रेतना ।

२. केशू एक चोर और बदमाश था । जिसके घर में चला जाता, वहाँ कुछ-न-कुछ हानि पहुँचाता ही ।

मेरी नरैण की इजा को क्या हो गया ?...खड़कुवा जरा इधर से हाथ लगा, घर में ले जाएंगे और तू झट से दौड़। अलमोड़ा के किसी डाक्टर को बुला ला....”

थोकदार ने सरुली का सिर पकड़ रखा था। सरुली ‘ओ, बबो।’ कहती उनके गले से लग गई, पीड़ा से ऐंठकर और कान में मुँह लगाती, तेजी से फुसफुसाई—मैं ठीक हो जाऊँगी। पहले पंचेत में केस लड़ो...ओ, बबो रे मेरी, मैं मरी-ई-ई-ई...।

थोकदार बोले—“सरपंच, सैप, इसके बचने की कोई खास उम्मीद नहीं है। आ, रे खड़कुवा, जा। मेरा सत्यानाश तो हो ही गया है, क्या करूँ। तू जरा बाड़ेछीना से हरकसींग पटवारीज्यू को बुला ला, कि ऊडलगों के थोकदार गुमानसींग की घरवाली का कतल हो गया है।...और, सरपंच सैप आप पहले इसका बयान दर्ज कर लें।...इन्सान की जिन्दगानी का क्या भरोसा है?...अरे, पानसींग, तू जरा घर से मोटा गद्दा लाकर, इसकी पीठ को आघार दे दे।...”

सरपंच लछमदत्तज्यू ने कापी हाथ में ली और दवात-कलम लेकर, सरुली थोकदारन के समीप आकर, घुटनों के बल बैठ गए। पहले लिखा—‘बयान हलफी मुसम्मी’ थोकदार गुमानसींग।’ फिर पूछा—“थोकदारनी का नाम क्या है, थोकदार, और आपके सौरज्यू का नाम क्या है?” थोकदार ने बताया, तो लिखा—‘सरुली देवी, बे० खीमसींग, मौजा ऊडलगों, पट्टी तल्ला लखनपुर, परगना बारामडल, जिला अलमोड़ा, यू० पी०। नोट, कतली बयान, जो मुद्दई ने खुद अपने होश-हवाश और तन्दुरस्ती में दिया—बकलम लछमदत्त जोशी सरपंच घुमौली वाला।.....’

इस बीच थोकदारन, ‘ओ बबो, ओ बबो,’ और ‘हाई रे, मैं मरी-मैं मरी,’ करती रही। फिर, सरपंच लछमदत्तज्यू के पूछने पर, बोलना शुरू किया—“ओ, बबो मेरी !...पानसींगो, जरा गद्दा और ऊँचा करके लगा दो। ओ, बबो, ...सरपंच सैप, अब बयान दर्ज करो। मैं सरुली देवी—जो कि इस

समय मरण-हालत में आप लोगों के सामने पड़ी हैं—सबेरे चौखुटिया गैर के अपने खेतों में मडुवा टीपने गई थी। मैं तो जाते ही अपने काम के सुर में लग गई थी। थोड़ी ही देर में, साबुली रांडी भी—जो अपने धरम के स्वामी हमारे असली जवाईं लाला लछमीनरायण जी को छोड़कर, अपनी अथाम जवानी के फौसाट में इस पलटनिया के साथ भाग गई थी, लाला लछमीनरायण का पेट लेकर—यह साबुली रांडी भी वहीं आई। जान-बूझकर अपनी मडुवा की फसल को आग लगाने। ‘‘‘और, जिस दिन से यह इस पलटनिया के घर-बार चली गई थी, हमने तो समझ लिया था, कि कपूतनी जनमी थी, मर गई और इसका पापी मूख देखना भी हराम समझ रखा था। मगर, यह इस कोशिश में रहती थी, कि इस पापी पलटनिया के यहाँ से पिण्ड छुड़ाकर, दुबारा लाला के घर की मालकिन बने। क्यों कि, सब लोग जानते हैं, वहाँ बैठे-बैठे हलवा-पूरी का भोग लगता था, यहाँ मडुवा टिपते-टिपते हाथों में खड़े पड़ गए, वही डुमिया<sup>१</sup> खाना है। ‘‘‘तो मैं अपने काम के सुर में लगी हुई थी।—ओ, बबो मेरी, सरपंच सैप, ज्यादा बोलने में पराण<sup>२</sup> काँप रहे हैं। तो पहले नीचे से दातुली के घुँघुर छमछमाने लगी। मैंने तो अपने काम से मतलब रखा। फिर इसने ‘सरुली कैजा<sup>३</sup>’ करके अवाज मारना शुरू किया। मूख देखना इस पापणी का तो हराम ही ठहरा, मगर बाल-बच्चों वाली हूँ, ममता हो आई और मरे हुए मन से—‘क्या है, चेली?’ कहकर, पास बुला लिया। ‘‘ ओ बबो, हूँ हो, एक मिसरी और एक गिलास पानी मंगा दो। ‘‘‘तो, सरपंच सैप, पहले तो बोली, कि कैजा, कुछ खाने को दे। मैं परौट-शाग पका के ले गई थी। टीस लग गई, दे दिया। सब गू-जैसा पचका गई रांडी। और बाद में बोली, कि मुझे किसी भी तरह से कोशिश करके पलटनिया के घर से निकालकर, लालाजी के—या किसी दूसरे अच्छे मालदार आदमी के—घरबार लगा दे। ‘‘‘ओ, बबो ! ‘‘‘

---

१. डोम लोगों का।

२. प्राण।

३. सौतेली माँ।

इतना कहकर, सरुली ने, अपने शब्दों की प्रतिक्रिया देखने के लिए, नाथू होलदार की ओर चोर निगाहों से देखा, तो वो हँस रहे थे। बोले—  
 “थोकदारन सासू, तुम अपना बयान पूरा करो, तब तक मैं तुम्हारे लिए घर से टिकचर-प्लास्टर लेके आता हूँ।”

सरुली थोकदारन ने सोचा था, इस आरोप से साबुली के ऊपर नाथू होलदार को क्रोध अवश्य आएगा। मगर, नाथू होलदार पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा, तो और उत्तेजित हो गई। साबुली ने उसे उठाकर जमीन पर पटका था और थोकदारन को अपना बदला लेना था। इसीलिए वह, बहुत देर के प्रतिशोधात्मक-अंतर्द्वन्द्व के बाद, अपनी दराती से अपनी ही गरदन में घाव करके—  
 “खून के दाग सारे कपड़ों में, शरीर में लगाकर—पचायत में दौड़ी आई थी।

सरपंच लछमदत्तज्यू बोले—“बयान जल्दी दर्ज कर लो ...”

“उसके बाद—जब मैंने मना कर दिया, कि चेली, दोधरिया तो तू हो ही गई है, अब तीसरे घरबार जाकर, हम लोगों को नरक में क्यों डालती है, कुल को कलंक-ऊपर-कलंक क्यों लगाती है?—अरे, बबो रे ! यह साबुली राँडी साक्षात् चुड़ैल बन गई। दातुली लेकर चीरने को आई, कि मैं तो जाऊँगी सात घरबार, तू कौन होती है रोकने वाली? ... और सरपंच सैप, इन्साफ...इन्साफ...इन्साफ...इन्साफ करो, रे, सब लोग मुझ दम छोड़ती का... उस याने इस साबुली राँडी ने मुझे पकड़ कर, जमीन पर डाला। छाती पर दोनों घुटने टेक के बैठ गई राँडी... और दातुली से मेरी गरदन काटने लगी... इतना बचना होगा, नरैण के बौज्यू के दरशन पाने होंगे आँखिरी समय... मुझको अकल आ गई और मैंने मरने के नखरे लगा दिए... तब बड़ी मुश्किल से उस राँडी ने मुझे छोड़ा ...”

“सच्ची बात कहती है, कैंजा ? अपनी उमर देखके कहती है, कि मैंने तेरी गरदन अपनी दातुली से काटी ?”—घर मडुवे का डाला पट्टेचाकर, नाथू होलदार से चर्चा सुनकर, साबुली थोकदार के आँगन में पहुँच गई थी।

सरुली थोकदारन ने सरपंच लछमदत्तज्यू का होल्डर वाला हाथ अपने दोनों हाथों से पकड़ लिया—“ओ, बबो ! सरपंच सैप, इस रंडा पराण-घातिनी से मुझे बचाओ।” फिर साबुली का ओर मुड़कर, बोली—“सरपंच

सप, मैं बयान देती जाती हूँ, तुम दर्ज करते जाओ और सीधे अलमोड़े के सिसन-कोर्ट<sup>१</sup> में बड़े जज सैप डिपटी क्लेटर के पास भेज दो।...तो, सरपंच सैप, इस समय रांडी पूछ रही है, कि कैंजा, सच्ची कह रही है?... अरे, तो क्या, दोखसमिया पातर, मैं झूठी बोल रही हूँ?...गले में दातुली फेरते समय तो कैंजा का दर्द नहीं लगा, दया-माया नहीं आई और अब सिसन-कोर्ट में रिपोर्ट जाने लगी है, तो सात जगह चौड़ी हो रही है!... लिखो, तुम, लिखो, सरपंच सैप....”

“मेरा होल्डर वाला हाथ तुमने पकड़ रखा है, थोकदारनी, मैं लिखू कैसे?...”

“तो क्या एक औरत से अपना हाथ भी नहीं छुड़ाया जा सकता तुमसे?” थोकदारन विस्मय जताती बोली—“इस औरत जात की साबुली रंडा ने घुम्के कमर पकड़कर, धरती से चार-पाँच फुट ऊपर उठाकर, नीचे पटक दिया।...और तुम्हारा होल्डर वाला हाथ काँप रहा है? इतनी कमजोरी है शरीर में, तो सरपंची क्या करोगे?” इतना कहकर, सरुली थोकदारन ने सरपंच लछमदत्तज्यू का होल्डर वाला हाथ छोड़ दिया।

साबुली के होंठों में भी एक झलक हँसी आ गई—खित्—खित्—खित्.....

ग्लानि के मारे सरपंच लछमदत्तज्यू ने अपना मुँह-मिर बयानों की कौपी की ओट कर लिया—“ऊँ-ऊँ-ऊँ...उसके बाद मुसम्मी सरुली देवी बे खीमसींग मौजा ऊडलगों वाली को मुद्दाली साबुली देवी—बे-ऊँ-ऊँ यह तो थोकदारज्यू की ही बेटी ठहरी—साबुली देवी बे थोकदार गुमानसींग जी मौजा उडलगों वाली ने कमरपकड़कर, धरती से चार-पाँच हाथ ऊपर उठाया और फिर जोर से जमीन पर पटक दिया।....”

“शाबाश, सरपंच सैप!” थोकदारन, कमर सीधी करते हुए, बोली—“उसके बाद का बयान भी जल्दी-जल्दी दर्ज करो। उसके—याने मुझको जमीन पर पटकने के—बाद, इस रंडा ने अपने दोनों घुटने मेरी कमर में टेक दिए और.....”

“ठहरा, थोकदारनी !” सरपंच लछमदत्तज्यू ने टोका—“पहले दिए हुए बयान में तो तुमने ‘छाती पर दोनों घुटने टेक के बैठ गई’, लिखाया है ? तुमने तो ‘रंडा’ भी बोला था, मगर बयान में ऐसा अगर लिख देता, तो उलठे तुम्हारे ऊपर ही इज्जत-हलकी का दावा दायर हो सकता था। बयान देने के लिए भी कानूनी जानकारीयाँ बहुत जरूरी हैं।...”

“सो तो, सरपंच सैप !”—थोकदारन कुछ नरम पड़ती हुई, बोली—“मैं बयान बोलती जाती हूँ, तुम उसे कानूनी-हॉग से दर्ज करते जाओ। तुम सरपंच हो करके ही तो मैं बिघड़क होके बोल रही हूँ। तो उसके बाद मेरी छाती पर.....”

“यह बयान पहले ही दर्ज हो चुका है। अब जब तुमने मरने के नखरे लगाए, तो अपराधी ने तुमको छोड़ दिया। उसके बाद क्या हुआ ?”

“ओ, बबो मेरी !...मत पूछो मेरी कथा, लोगों, मत पूछो। गिरती हुई गरदन सँभालते-सँभालते यहाँ तक पहुँची हूँ। इस राँडी ने दातुली से जड़ तक ही चोट मारी है.....”

“सच्ची कहती है, कैजा, कि मैंने दातुली से तुम्हें चोट मारी है...”

“और नहीं तो क्या, इतने लोगों के सामने झूठी बोलती हूँ ?”

“कसम खाके बोल, कैजा !”—धरती पर हाथ मारते हुए, साबुली होलदारन बोली।

“गंगाजल लेके आ, उसकी कसम खाती हूँ। कच्चे पान पर पूबिया सुपारी का दाना रखके ला, उसके कसम खाती हूँ, गोठ से गार्ई का गोंत<sup>१</sup> लेके आ, उसके कसम खाती हूँ।...रंडा, मैं जिसकी बोल उसकी कसम खाती हूँ।...”

“गोल्ल-गंगनाथ देवतों की कसम खा।...जानती है, गोल्ल-गंगनाथ देवतों की झूठी कसम खाने से क्या होता है ? सिराड़ के खड़कसींग के कोढ़ी हो जाने का किस्सा तो तुम्हें मालूम ही होगा ?...”

सरुली थोकदारन थोड़ा सकपका गई। वह जानती थी, कि गोल्ल-गंगनाथ की झूठी कसम चल नहीं सकती, परिणाम बुरा ही होगा। बोली—“गोल्ल-गंगनाथ तो हमारे कुल-देवता हैं ? उनकी कसम कैसे खाऊँ ?...”

बोल तो उनसे भी बड़े नामधारी हर-सैम-नारसिंग और भकरवा चाकर की कसम खा देती हूँ ?”

“नहीं, नहीं। सच्ची कसम खानी है, तो गोल्ल-गंगनाथ की ही खा।”

“अच्छा, अच्छा, रंडा !” सरुली थोकदारन बोली और मन-ही-मन हाथ जोड़े कि, हे परमेश्वर, गोल्ल-गंगनाथ देवतो ! कसूर माफ कर देना, थोड़ी देर के लिए—सिर्फ इस साबुली रंडा से बदला लेने के लिए—तुमारे नामों की कसम खाती हूँ। हे परमेश्वर ! ... ..

“क्यों, कैजा, मन काँप रहा है ?

“गोल्ल-गंगनाथ की कसम ! ... रंडा, जिसकी बोल, उसकी कसम, कि तूने—तेरे हाथों को पटवारी हरसीगज्यू थोड़ी ही देर में हथकड़ी लगाएँ—गंगनाथ ज्यू की कसम, तूने मेरा गला काटा ... ओ, बबो मेरी। जरा गद्दा तिरछा कर दो, हो ! गरदन एंठ रही है। ... ओ बबो ! ...”—सरुली थोकदारन एक साँस में कह गई।

साबुली विस्मित खड़ी रह गई। उसे आशा थी, भय के मारे ही सही, सरुली थोकदारन गोल्ल-गंगनाथ की झूठी कसम नहीं खाएगी। ..

सहसा, साबुली दौड़कर, रामायण उठा लाई—“अच्छा, सरुली कैजा, गोल्ल-गंगनाथ के नाम को तो बेच ही खाया तूने—इम रामायण पर हाथ रखके कह !”

सरुली थोकदारन ने बाघ-जैसी आँखों से साबुली को देखा और, गुस्से से होंठों को कपकपाते हुए, रामायण का हाथ से छू दिया—“इसकी भी कसम . . .”

साबुली भौचक्की रह गई। सरुली थोकदारन की झूठी कसमों से वह क्रोधाग्नि में भुनने लगी थी।

थोकदार बोले—“उस पलटनिया का पूरा खानदान खुनी है। अरे, रात-दिन बन्दूक-बसूले चलाने वालों में खूँखारी ही तो होगी ? सरपंच सैप, हरसींग पटवारीज्यू को यह रिपोर्ट देना आपके जुम्मे रहा। इस रिपोर्ट में जमनसींग लिसुवा पधान के जरिए चिट्ठीरसैन संप पीताम्बर पानेज्यू को

पान-माल लेने की धमकी तेज बसूला दिखा कर देने की बात भी दर्ज कर दो ।.....”

इतने में साबुली दौड़ी-दौड़ी गई और—घर के अन्दर मिसरी का कुंजा चबाते-चबाते इधर-उधर दौड़ रहे—थोकदार के बेटे नरैण को उठा लाई ।

नरैण को सरुली थोकदारन के सामने खड़ा करके, साबुली बोली—“अच्छा, कंजा, यह आखिरी कसम खा अब ! मैं भी अपनी बिगैर गुनाह की गुनहगारी कबूल करके, तेरे ही सामने अपना गला भी दातुली से काट दूंगी । खा, अपने बेटे नरैण के सिर पर हाथ रख के कसम खा, कि—साबुली ने दातुली से मेरा गला काटा ..”

तब तक नाथू होलदार भी आ गए थे, टिचर की शीशी, रुई और गीला कपड़ा लेकर ।

सरुली थोकदारन ने एक बार चारों ओर देखा, फिर अपने बेटे नरैण की ओर—वह, पूर्ववत् मिसरी का कुंजा चबाता हुआ, बीतूहल-पूर्वक अपनी माँ को देख रहा था !

सरुली थोकदारन जल्दी से बोली—“ले, ले, अपने बेटे नरैण की ही कसम खाती हूँ, कि तूने...कि तूने...कि तूने...”

“बोल, बोल, खा जा अपने बेटे की भी कसम । कौन-सा मेरे बाँजू का सच्चा बेटा है, हरसींग का ही तो है ?”—साबुली चिल्लाई ।

नाथू होलदार ने साबुली को एक थप्पड़ मार दिया—“सोटप डौन्टोक !! कीपवैट !!! ..तुमको ऐसी ओछी बात नहीं करनी चाहिए, डियर ! .. आखिर थोकदारनी तुम्हारी मदर—सिटैप-मदर ही सही—याने कि कंजा है ।....”

सरुली थोकदारन ने नरैण के सिर पर से अपना हाथ हटा कर, उसे छाती से लगा लिया था—रोती-रोती बोली—“नरैण की कसम नहीं खाऊँगी, रंडा ! नहीं काटा तूने दातुली से, बस ? और, दातुली में तो मैंने ही काटा तेरी शामत निकालने के लिए—मगर, कमर पकड़कर, उठाके, तूने ही पटका था या नहीं ? .. ओ, बबो गरदन में पीड़ हो रही है....”

“ठहरो, सासू अभी ठीक हो जाएगी पीड़ ।” कहते हुए, होलदार ने

थोकदारन की गरदन को गीले कपड़े से साफ करना शुरू कर दिया और फिर रुई से टिचर लगाते हुए, बोले—“खास चोट नहीं बँठी है।...”

“मैंने ही दातुली बड़े जतन से लगाई थी।” थोकदारन, सिसकते हुए, बोली।

कुसम्यारू के पेड़ में बैठा हुआ, मिहखा चिल्लाया—“बोल, सरुली आमाबर थोकदार—बुन् की ई-ई-ई...”<sup>१</sup>

अन्नकी सबसे पहले होलदार चिल्लाए—“ज्जै !”

लड़कों ने और जोर से दुहराया—“ज्जै-ज्जै-ज्जै—ऐ-ऐ-ऐ...” और न-जाने कितने लोग बरबस ही हँस पड़े।

---

१. योचो सरुली दादी का बरण करने वाले थोकदार दादा की—।

सखली थोकदारन को सहारा देकर, नाथू होलदार स्वयं थोकदार के घर तक पहुँचा आए। बड़ी थोकदारन से गद्दा डलवाकर, सखनी थोकदारन को लिटा दिया। थोकदारन ने किंचित् कृतज्ञतापूर्वक होलदार को देखा।

चलते-चलते, नाथू होलदार बोले—“सामू, अब तुम आराम करो। कमर में भी चोट लगी है? अभी भेजता हूँ, तुम्हारी बेटी को। उसी ने पटका है, वही गरम तेल से मालिश करके ठीक कर जाएगी। ...”

बाहर पहुँचकर, आँगन में अपना-सा मुँह लिए खड़े थोकदार गुमानसींग से बोले—“थोकदार सौरज्यू, आप हमारे बुजुर्ग हैं, रिसपिक्टेबुल और होली—यानी कि परम-पूज्य माननीय और पवित्र हैं। मुझको तो इनना ही बुरा लगा, कि आपने घर के मामलें को तमाम बाहर के डूम-ढाड़ियों को बुलाकर, एक तमाशा बना दिया और अपने हाथों से सारे गों की नाक पर चक्कू फिरा दिया। ...खैर, अब रंजोगम करने की बया बात है? मेरी तो यह आदत है, कि शक्कर के हाथ से काम निकालना और दुश्मनों को काँटे वाले सतरस्ते पर छोड़ जाना ...और आप तो—मानें भने ही नहीं—मेरे सौरज्यू लगते हैं। आपने बुडभस में आके जो-कुछ भी किया, उसको भूल जाना मेरा फरज है। हाँ, आगे के लिए इतनी प्रार्थना मैं आपके चरणकमलों में अवश्य कर देना चाहता हूँ, कि गों की बहू-बेटियों के लिए आप बुजुर्गलोग ही तो पालनहार हैं? बच्चों से गलतियाँ हो सकती हैं, मगर बच्चों का गला कौन घोटेंगा? ...उन्हें प्यार-जतनपूर्वक अपने ताबे में रख लेना, उनके दुःख के आँसू पोंछ देना—यह सब आप बुजुर्ग लोगों के ही हाथ में है। हम कलके

छोकरे क्या कर सकते हैं ?...सो, रमौती ब्वारी पर भी आपकी दया-दृष्टि रहनी चाहिए और खासकर मैं सिफारिश रुदरसींग की घरवाली उदुली ब्वारी की करना चाहता हूँ । रुदरिया बहुत नादानी करने लग गया है । मेरे साथ जो नादानी उसने की, कर डाली । मगर, वह बेकसूर बिचारी उदुली ब्वारी को क्यों मारता है ?...हम मरद लोगों की यह बड़ी अत्याचारी है, कि खुद दूसरी जगह की चड़ में थोल<sup>१</sup> फिराएँ और अपनी घरम-पत्नियों को दे लात-पर-लात मारकर, घर से निकालने की बात करें ?...आप उसके कान पकड़कर, उदुली ब्वारी से माँफी माँगने को कहना । इतना आपको हक है, बुजुर्ग होने के नाते, कि आप हमारे कान ऐंठकर गलत कामों को करने से रोक सकते हैं !...अच्छा, मैं चलता हूँ ।...भूल-चूक की माफी दें ।... ”

नाथू होलदार चले गए, तो थोकदार ने सिर थोड़ा ऊँचा किया और आवाज दी—“बड़ी थोकदारन, जरा एक चिलम तमाखू की भरके ला और उदुली ब्वारी अन्दर बैठी है ? उसको बोल देना, कि रुदरिया कुछ भी तेरे साथ गैरइन्साफी करे या बेकसूरी में मारे, तो मीधे मेरे पास आवे । मैं रुदरिया का इलाज अपने-आप करूँगा । उसने थोकदार गुमानसींग को समझ क्या रखा है ?”

○ ○ ○

रमौती ने खाना पकाकर, तैयार कर लिया था, पर यों ही रसोई पड़ी थी । किमी ने नहीं खाया था । रमौती की आँखें रोते-रोते पथरा-सी गई थीं । कोई भी गौर से देखता तो कह देती—“आज पहली बार रस्यारी<sup>२</sup> बनी हूँ, आँखों को धुँवा लग गया है !...”

अन्दर-ही-अन्दर उसका मन थरथरा रहा था, कि कहीं उसको पंचैत में तो नहीं बुलाते ? उसने चन्द्रावती होलदारन से कह भी दिया था, कि ‘अगर पंचैत में बुलाया गया तो मैं जीभ दबाके मर जाऊँगी, दिदी ! मुझसे यह फजौता नही झेला जाएगा !...’

---

१. अपर ।

२. खाना पकाने वाली ।

चन्द्रावती होलदारन ने नाथू होलदार से जिक्र कर दिया, जब वो टिचर-आइडीन लेने घर आए थे। जाते समय, नाथू होलदार बोल गए थे—“अरे, रहने दे। अभी दुनिया के पदों में ऐसी पंचेत कोई बनी नहीं, जिसमें कोई नाथू होलदार की बहू को बुलाने की हिम्मत करे। ब्वारी से बोल दे, बेफिक्र रहे।”

तब से कुछ कलेजा हलका हुआ था, मगर चिन्ता लगी हुई थी, न-जाने क्या होगा अब ?

बाद में चन्द्रावती होलदारन तक खबर पहुँची—कि ‘चिट्टीरसैन पीताम्बर पाने अपनी गुनहगारी कबूल कर गया है, पंचेत में।’...तो, लाज-व्यथा से तो प्राण कँपकँपा गए, मगर एक मुख मिला कि ‘चलो, होलदार ज्यादाज्यू निर्दोष साबित हो गए।’

○

○

○

सरुली थोकदारन के उठ जाने पर, यों पंचायत ही एक प्रकार से उठ चुकी थी। मगर, आए हुए लोग इस तरह आपस में बड़-बड़ाते हुए, पीछे मुड़ते हुए गए, कि पंचायत उठने तक काफी समय हो गया था। बुद्धिबल्लभज्यू ने बाकी बची चाय की पत्तियाँ और चीनी एक पोटली में बाँध ली थी और चुपचाप खिसक गए। सरपंच लछमदत्तज्यू मोटर-मालिक दो भैयाँ के साथ अवश्य रुक गए थे।—उन्हें थोकदार ने यह कह कर, बिदा कर दिया, कि ‘लछमदत्तज्यू हो, जितनी पंचेत होनी थी हो गई। खैर, तुम्हारी मजूरी निकल ही गई है। अब जाओ और रास्ते में हरसींग पटवारी मिले, तो उसे भी लौटा ले जाना, कि मामला रफा-दफा हो चुका है !’...

○

○

○

थोकदार के यहाँ से लौटकर, नाथू होलदार ने ग्रानसींग से भी कपड़े बदलने को कहा—“बौज्यू धोती पहन लो। ब्वारी कवसे चूल्हे में उदास-परेशान बैठी होगी विचारी !”...

रमौती ने नाथू होलदार की आवाज सुनी, तो घूँघट खींचती साबुली होलदारन से बोली—“नानि दिदी, तुम जाओ खाना परोसने को।”...

नाथू होलदार ने सुन लिया । डपटकर, बोले—“खाना पकाने से तेरे हाथ थक गए हैं, ब्वारी ? बड़ी आई नानि दिदी वाली ! जूली-मदर, तू बीज्यू को पाँव धोने को पानी दे ! खाना ब्वारी अपने-आप परोसेगी । ”

सब खाना खाने को बैठे, रमौती और चन्द्रावती होलदारन को छोड़कर । रमौती रस्यारी ठहरी और चन्द्रावती होलदारन बच्चों को खिला रही थी, कि मैं रमौती ब्वारी के साथ खाऊँगी ।

“रसोई कैसी बनी है, बीज्यू ?”—थाली हाथों में उठाकर, दाल की एक लम्बी घूँट भरने के बाद, नाथू होलदार ने पूछा ।

आनसींग कुछ कहने ही जा रहे थे, कि मिह्रवा दौड़ता-दौड़ता आया और बोला—“होलदारका, सरुली आमा की कमर में चसक पड़ रही है और थोकदार बूबू ने बोला है, कि साबुली काकी को गरम तेल से कमर-मालिश करने को भेज दो ।...”

“ओके, दाल वेरी टेस्टफुल ! ब्वारी, जरा दो स्पून दाल और दे ।’ कर, थाली रमौती की ओर बढ़ाने के बाद, नाथू होलदार ने मिह्रवा से पूछा—“क्यों, रे भतीज ! सरुली सासू की गले की चमक कैसी है अब ? और हमारे थोकदार सीरज्यू का हाल-चाल कैसा है ?”

“थोकदार बुबू तो गोली से घायल होकर भागने के बाद, दौड़ते-दौड़ते एकदम परास्त होकर, किसी गुफा में घुसकर सुस्ताने वाले हिरण की तरह अपनी चाख में लमलेट पड़े हुए हैं, होलदारका !” कहते हुए, मिह्रवा अपने घर की ओर चला गया ।

“इट इज भेरी गुड !” कह कर, नाथू होलदार ने फिर दाल की थाली ऊपर उठा ली ।











